TEXT CROSS WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY

OU_182084

UNIVERSAL LIBRARY

दो शब्द

भारत एक है और अखंड है। अखंड भारत की आत्मा समान रूप से हिन्दू और मुसलमान इन दो जातियों में अनुस्यूत है। आत्मा का वाणी के रूप में रुचिर प्रकाशन ही साहित्य है। फलतः भारत के राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य के निर्माण में हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों का समान भाग है। प्रस्तुत संग्रह में हिन्दी के हिन्दू और मुसलमान दोनों ही सपूतों की रुचिर रचनाओं का संकलन है।

कवित्व क्या है, ? और कवित्व की गिनती कौन-सी और कैसी विधाएं हैं इन समस्याओं के मार्मिक विवेचन के बिना गृहीत कवियों की रस चर्वणा असम्भव सी है। हमारी साहित्य मीमांसा' इसी उद्देश्य को पूरा करती है। विदग्ध रसिकता के संपादन के लिये उसका परिशीलन अनिवार्य है।

ऐतिहासिक तथा आलोचनात्मक सामग्री उक्त कवियों में इष्ट मात्रा में मिल जाती है इस लिये उसका प्रस्तुत संग्रह में पिष्टपेषण नहीं किया गया। और जब कि बी० ए० में पढ़ाए जाने वाले शेक्सपीअर के नाटकों पर छात्र अभिलाषित मात्रा में आलोचनात्मक विश्लेषण करना स्वीकार करते हैं तब एफ. ए. और बी. ए. में पढ़ाए जाने वाले हिंदी कवियों की रचनाओं का रसिक विश्लेषण उनके लिये मान्य होना स्वाभाविक सा बन जाता है।

प्रस्तुत संग्रह के संकलन में इन सब बातों को मन में रखा गया है और अध्यापक तथा छात्रवर्ग से आशा की गई है कि वे हिंदी को उसके उचित आसन पर आरूढ़ करने के लिये उसकी समुचित वीराजना करेंगे और उसे समृद्ध, समुल्लसित तथा ममवेत बनाने के लिये भरसक प्रयत्न करेंगे।

अंत में हम उन सब अतीत तथा वर्तमान हिंदी कवियों को हृदय से धन्यवाद देते हैं जिनकी रचनाओं को हमने प्रस्तुत संग्रह में स्थान दिया है।

—सूर्य्यकान्त

विषय-सूची

संख्या	लेखक	पृष्ठ
१	जगनिक—अम्बे की लड़ाई	१
२	चन्दबरदाई—सुलतान की चढ़ाई का वर्णन	७

मध्यम युग—सगुण भक्ति धारा, रामभक्ति शाखा

३	तुलसीदास—परशुराम-लक्ष्मण सम्वाद	११
	मंथरा-कैकेई संवाद १८, दशरथ कैकेई संवाद २३, राम के विनीत वचन २६, राम सीता संवाद ३०, भरतागमन के समय लक्ष्मण का क्रोध और श्री राम का उन्हें समझाना ३३, अंगद रावण संवाद ३५, दोहावली ४४।	

मध्यम युग—सगुण भक्ति धारा, कृष्ण भक्ति शाखा

४	विद्यापति—नीति विषय सूक्तियाँ ५५ राधा का दिव्यक्रन्दन	५७
	राधा की आकुलता ५७, युग अवसान में भी राधा का प्रणय	५७
	राधा का आत्मिक अनुभव	५८
५	सूरदास—बाल लीला ५६, गोवर्धन लीला ६५, मथुरा गमन लीला ६६, भीष्म प्रतिज्ञा ६६ रावण कुल-वध ७१, सीता की अग्नि परीक्षा ७२, विनय पत्रिका	७२
६	नरोत्तमदास—सुदामा चरित्र ७७ द्वारिका वर्णन	७६

मध्यम युग—निर्गुण भक्ति धारा, ज्ञानाश्रयी शाखा

७	गुरु नानक—साधु महिमा	६०
८	दादू—चेतावनी	६३
९	बाबा मलूकदास	६६

संख्या	लेखक	पृष्ठ
१०	सुन्दरदास	१०१
११	धरनी दास	१०७
१२	जगजीवन	१०८
१३	भीखा साहिब	१०९
१४	पलटू साहब	११०
१५	चरनदास	११३
१६	रैदास	११४
१७	नाम देव	११५
१८	दूलन दास	११६
१९	गरीब दास	११७
२०	सहजो बाई	११८
२१	धर्मदास	११९

मध्यम युग—रीतिमार्गी शाखा

२२	केशवदास—रतन बावनी १२३, रामायण-युद्ध	१२७
२३	बिहारी	१३१
२४	मतिराम	१३९
२५	रसनिधि	१४३
२६	भूषण	१४८
२७	पद्माकर	१५२
	सबलसिंह चौहान	१५४

संख्या लेखक पृष्ठ

२६ वृन्द १५८

३० सूदन—सुजान चरित्र १६६

आधुनिक युग–बहुमुखी अनेक शाखाएँ

३१ हरिश्चन्द्र—गंगा वर्णन १७१ कालिंदी सुषमा १७२, देशभक्त के आंसू १७४, कोमल भावना १७५, निराशा १७६, सूक्ति सुमन १७७, लक्ष्मी गुरुवश्यता शारदी सुषमा १७८, सेवा धर्म १७६

३२—बदरी नारायण चौधरी—विजयी भारत १८०

३३ प्रताप नारायण मिश्र—जनम के ठगिया १८१ अपने करम अपने संगी १८१

३४ नाथूराम शंकर—मंगल कामना १८२ शंकर मिलन, रसविहीन के लिए कविता वृथा है, अंध जगत १८३ पितृ देव क्या थे और मैं क्या हूँ १८४, आत्म बोध १८७

३५ श्रीधर पाठक—उजड़ा गांव, जादू भरी थैली १८६ स्वर्गीय वीणा १६०, ओ घनश्याम १६१

३६ अयोध्यासिंह उपाध्याय—युवक १६२ सफलता सूत्र १६४ कुल ललना १६५, भारत के नव युवक १६६ कमनीय कामना १६७ अतीत संगीत १६८

३६ देवी प्रसाद पूर्ण—मृत्युञ्जय २०३ विधि विडम्बना २०३

३८ रामचन्द्र शुक्ल—उपदेश २०४

३६ मैथिली शरण गुप्त—भारतवर्ष की श्रेष्ठता २०६ बार बार तू आया २०८, इन्द्रजाल २०६

संख्या	लेखक	पृष्ठ
४०	जयशंकर प्रसाद—किरण	२११
४१	वियोगीहरि—उत्साह तरंग	२१३
४२	रामनरेश त्रिपाठी—तेरी छवि २२४ अन्वेषण	२२५
४३	सूर्यकान्त त्रिपाठी—नयन, यमुना के प्रति २२६ स्मृति	२२८,
	तुम और मैं	२२९
४४	सुमित्रा नन्दन पन्त—छाया, मुसकान २३१ मधुकरी	२३२,
	चाह, बरसो	२३३
४५	श्री गुलाबरत्न—कवि की पूजा, आंधी २३४ अन्धकार	२३७
४६	सुभद्रा कुमारी चौहान—समर्पण, बालिका का परिचय	२३९
	झासी की रानी	२४०

उत्तरार्ध—मुसलमान कवि-आदि युग—वीरगाथा

अमीर खुसरो—मध्य युग-ज्ञानाश्रयी शाखा

४७	कबीर—गुरुदेव २५१ गुरु पारखी, यति २५२ उपदेश, सुमिरन	२५३
	भक्ति, प्रेम २५४ विरह २५५, रस, कुसंगति २५६, सुसंगति, साधु	२५७

मध्यम युग—प्रेम मार्गी सूफी भक्ति शाखा

४८	मलिक मोहम्मद जायसी पद्मावति—अथ अस्तुती खंड	२६५
	अथ सिंघल दीप बरनन खण्ड २७४, अथ जनम खंड	२८३
	अथ मान सरोदक खण्ड २८६, अथ सुआ खण्ड	२८९
	अथ राजा रतन सेन जनम खण्ड	२९२

संख्या	लेखक	पृष्ठ
	मध्यम युग—सगुन भक्ति धारा—कृष्ण भक्ति शाखा	
४९	**रसखान**—प्रेम २९५ बाल्य वर्णन २९६, उद्भट	२९७
५०	**अकबर के युग की स्फुट रचनाएँ**—रहीम—रहीम के दोहे	३०१
	मध्यमयुग—रीति मार्गी शाखा	
५१	**आलम**—बाललीला ३०९ यमुना निकुञ्ज वर्णन	३१०
५२	**शेख़**—ईश स्तुति ३१२ गंगा वर्णन	३१३
५३	**ताज**—कृष्ण प्रेम	३१४
५४	**यारी साहिब**—निर्गुण स्तुति, झूलना ३१६ उपदेश, कवित्त	३१७
५५	**नज़ीर**—कृष्ण की बाललीला	३१९
५६	**अली मोहम्मद खाँ 'प्रीतम'**—खटमल बाईसी	३२२
५७	**दीन दरवेश**	३२४
	आधुनिक काल—बहुमुख अनेक शाखाएँ	
५८	**सैयद अमीर अली मीर**—उलाहना पंचक ३२९ दशहरा	३३०
५९	**अमीर अली**—अन्योक्ति-सुमन	३३२
६०	**मौलवी लतीफ़ हुसेन नटवर**—स्मृति या विस्मृति	३३४
६१	**दाराबखाँ अभिलाषी**—फूलों का हार ३३५ संध्या का आगमन	३३६
६२	**सैयद कासिम अली**—पथिक से	३३६
	टिप्पणी	

जगनिक

जम्बै की लड़ाई

सुमिरन करिकै श्री गणपति को, औ गिरिजा के चरण मनाय।
लिखौं लड़ाई अब जम्बै की, यारो सुनियो कान लगाय।।
एक हरकारा दाखिल ह्वै गयो, जहँ दरबार बनाफर क्यार।
कागज लैकै कलमी वालो, अपनो कलमदान लै हाथ।।
लिखी हकीकति तब आल्हा ने, पढ़ियौ याहि बघेले राय।
होवै इच्छा जो लड़ने की, तो तुम लड़ो हमारे साथ।।
रारि मिटावनि की इच्छा हो, तो सुन करौ हमारी बात।
हार नौ लखा लाखापातुर, डोला साजि बिजैसिन क्यार।।
बावन बचुका पशमीना के, हमरी नजरि गुजारौ आय।
खुपरी लावो हमरे बाप की, औ आधीनी करो बनाय।।
दूजी करिहौ जो हमरे संग, पगिया बंद बचैयो नाहिं।
चिट्ठी लिखिकै यह आल्हा ने, सो धावन को गई गहाय।।
धावन चलि गयो तव लश्कर से, औ माड़ौं में पहुंचो जाय।
जहां कचहरी नृप जम्बै की, धावन उतरि परो अरगाय।।
बड़ बड़ क्षत्री बंगाला बैठे, अजगर लागि रह्यौ दरबार।
बात बनाफर की होती रहि, सब पर रही उदासी छाय।।
धावन पहुंचि गयो समुहे पर, लचि जम्बै को कियो सलाम।
सात पैग से कुन्नज करिकै, पाती गद्दी दई चलाय।।
नजरि बदल गई तब जम्बै की, पाती तुरतै लई उठाय।
खोलि कै पाती जम्बै बांची, मन में बहुत खफा होइ जाय।।
तुरत बुलायो तब पंडित को, साइति हमें देउ बतलाय।

तोप लगैहों लोहा गढ़ में, महुबेबारन दऊँ उड़ाय ॥
साढ़े साती पड़ो सनीचर, अठयें पड़ी बृहस्पति आय।
अब ना बचि हौ रणखेतन में, समुहे काल बिराजो आय ॥
करौ मित्रता तुम आल्हा से, जो मांगे सो देउ पठाय।
भलो तुम्हारो है याही में, इतनी मानो कही हमारि ॥
इतनी सुनिकै राजा बोले, पंडित सुनो हमारी बात।
एक दिन मरना है सब ही को, खटिया परिकै मरै बलाय ॥
सनमुख रण में हम मरि जैहैं, होइहै जुगन जुगन लौ नाम।
डोला मांगत है बेटी को, ओछी जाति बनाफरि केरि ॥
टुकड़खोर हैं चदेले के, परिमाल के अहैं गुलाम।
दाग लागि हैं रजपूती में, हमरो जियत मरन होइ जाय ॥
जीवत डोला हम ना दइ हैं, चाहै प्राण रहैं या जांय।
इतनी कहि कै राजा जम्बै, फिर पाती को लिखो जवाब ॥
लिखी हकीकत यह जम्बै ने, पढ़ियो याहि बनाफर राय।
जीवत डोला हम ना दैहैं, नाहक रारि बढ़ाई आय।
चुप्पै लौटि जाउ महुबे को, नाहीं मूड लऊं कटवाय ॥
जो गति कीन्ही जस्सराज की, सो गति करौ तुम्हारी आय ॥
पाती लिख दई यह जम्बै ने, औ धावन को दई गहाय।
पाती बांची जब आल्हा ने, गुस्सा गई देह में छाय ॥
तुरत नगड़ची को बुलवायो, सोने कड़ा दिए डरवाय।
बजै नगारा हमरे दल में, सिगरी फौज होय तैयार ॥
तोपदरोगा को बुलवायो, सिगरी तोपैं करौ तयार।
हाथिनवाले को बुलवायो, हाथी सिगरे होयँ तयार ॥
घोड़नवाले को बुलवायो, घोड़ा सबै लेउ सजवाय।

हुक्म मानि कै चलौ दरोगा, लश्कर सबै सजावन लाग ॥
जितनी तोपें थी महुबे की, सो चरखिन पर दई चढ़ाय।
जितने हाथी थे महुबे के, हौदा एक साथ धरि जाय ॥
जितने घोड़ा थे लश्कर में, काठी एक साथ खिंच जाय।
बजो नगाड़ा जब लश्कर मे, क्षत्री सबै भये हुशियार ॥

... ...

दगी सलामी आल्हा दल में, तोपन बत्ती दई लगाय।
धुआं उड़ानो आसमान लों, चहुँ दिशि रही अंधरिया छाय ॥
गोला चलन लगे दोऊ दल, अंधाधुध कहो ना जाय।
ओला के सम गोला बरसै, मानो मघा बूंद झरलाय ॥
खलभल परिगौ दोनों दल में, क्षत्री गिरें भूमि भहराय।
तकि तकि गोला मलिखे मारैं, लोहागढ़ में ना अनियाय ॥
गोला छूटें लोहागढ़ से, कोऊ कुँवर न आड़े पाँव।
गोला लागै लोहागढ़ में, तुरतै टूकटूक होइ जाय ॥
तोपें धैंधै लाली होइ गई, औ लोहागढ़ टूटा नाहि।
कन्ने झरि गए सब तोपन के, तोप दरोगा दियो जवाब ॥

... ...

दोनों सेना एक मिल होइ गई, खटखट चलन लगी तलवार।
चलै दुधारा दक्खिन वाला, कोता खानी चलै कटार ॥
खांड़ा बाजै रण के भीतर, गोली चलै दनाक दनाक।
कहँ लग बरनौ मैं त्यहि औसर, रण में चलें सबै हथियार ॥
झुके सिपाही दोनों दल के, सबके मारु मारु रट लागि।
मुर्चन मुर्चन नचे बेदुला, ऊदनि कहें पुकारि-पुकारि ॥
नौकर चाकर तुम नाही हो, तुम सब भैया लगो हमार।

जीति कै चलिहौ जो महुबे को, सोने कड़ा दऊँ डरवाय ।।
दियो बढावा नर ऊदनि ने, क्षत्री वीर रूप होइ जांय ।
जैसे लड़िका गबड़ी खेलै, गिनिगिनि धरैं अगारू पांय ।
झुके सिपाही महुबे वाले, दोनों हाथ करें तलवार ।
जम्बै बढिगै तब आगे को, औ ऊदनि को दी ललकार ।
कौन सूरमा है महुबे को, सो आगे बढ़ि देइ जवाब ।
घोड़ा बढायो तब ऊदनि ने, दुइ मस्तकि अड़ाए पांव ।
देही पजर गई जम्बै की, लिया हाथ मे गुर्ज उठाय ।
चोट चलाई नर ऊदनि पर, घोड़ा पाच कदम हटि जाय ।
लगो चपेटा इक घोड़ा के, घोड़ा खड़ो-खड़ो थर्राय ।
खैंचि सिरोही लइ ढेवा ने, सो जम्बै पर दई चलाय ।
चोट बचाई तब जम्बै ने, अपनो दीन्हों गुर्ज चलाय ।
लगो चपेटा तब घोड़ा के, सो समुहे ते गयो बराय ।
राजा जम्बै की डपटिन में, लश्कर तिड़ी-विड़ी ह्वै जाय ।
क्षत्री हटिगै सब समुहे ते, कोई वीर न आड़े पाव ।
अकिले जम्बै की मारन से, भागन लगे महोबिया ज्वान ।
ऊँचे खाले भागन लागे, औ नारेन की पकरी राह ।
बांधि लंगोटा कोउ कोऊ क्षत्री, देही अंग विभूति रमाय ।
हमैं न मारियो हमैं न मारियो, हम भिक्षा के मांगनहार ।
भिक्षा मांगन हम आए थे, तौ लों चलन लगी तलवारि ।
कोऊ लरिकन को रोवत है, कोऊ पुरिखन को चिल्लाय ।
कठिन लड़ाई भइ जम्बै संग, औ बहि चली रक्त की धार ।

... ...

भगे सिपाही माड़ौ वाले, अपने डारि-डारि हथियार ।

भगत सिपाही जम्बै देखे, अपनो हाथी दियो बढ़ाय।
जम्बै बोले तब आल्हा ते, सुन लेउ दस्सराज के लाल।
हमरी तुम्हारी अब बरनी है, देखें कापर राम रिसांय।
चोट अपनी आल्हा कर लेउ, नाहीं सरग बैठ पछताउ।
बोले आल्हा तब जम्बै ते, तुम सुन लेउ बघेलेराय।
चोट अगाऊ हम ना करते, ना भागे के परें पिछार।
हा-हा खाते को ना मारें, ऐसी आन चदेंल क्यार।
इतनी सुनि कै तब जम्बै ने, कर में लीनी लाल कमान।
तीर निकामो एक तरकस ते, सो हौदा पर दियौ जमाय।
बाण चलाय दियो समुहे पर, आल्हा लीनो वार बचाय।
सांगि चलाई तब जम्बै ने, आल्हा हाथी दियौ हटाय।
बचिगै आल्हा तब हौदा में, नीचे गिरी साग अरराय।
पांच कदम जब आल्हा रहिगे, तब जम्बै ने कह्यो सुनाय।
रक्षा कर लइ परमेश्वर ने, अबहूं लौट महौबे जाउ।
आल्हा ज्वाब दियो जम्बै को, तुम सुन लेउ बघेलेराय।
पांव पिछारू हम ना धरिहैं, चाहे प्राण रहैं की जाउ।
इतनी सुनि कै तब जम्बै ने, अपनी खेंच लई तलवारि।
मिलकर चोट करी आल्हा पर, आल्हा दीनी ढाल अड़ाय।
तानि सिरोही जम्बै मारी, तुरते टूट गई तलवारि।
देखि हक़ीकत राजा जम्बै, मन में गए सनाका खाय।
आज सिरोही धोका दे गई, हमरो काल पहूंचो आय।
तब ललकार दई आल्हा ने, जम्बै सावधान ह्वइ जाव।
इतनी कहिकै नर आल्हा ने, अपनी लीन्ही ढाल उठाय।
औझड़ मारी तब जल्दी से, तुरत महावत दियो गिराय।

गिरत महावत परलै ह्वइ गई, जम्वैं लई कटारी काढ़ि ।
हौदा मिलि गयो है हौदा संग, हांथिन अड़ो दांत से दांत ।
चारि पहर तक चली कटारी, मन में कोउ न माने हारि ।
हाथी पचशावद से बोले, आल्हा मंडलीक अवतार ।
बैरी समुहे यह ठाढ़ो है, ताको लेउ जंजीरन बाधि ।
आल्हा वांधि लियो जम्वै को, लश्कर भगो वघेले क्यार ॥

चंदबरदाई

चंद का पृथ्वीराज की प्रशंसा करना कि जैसे मोरध्वज के यहा अर्जुन ब्राह्मण बनकर शरण गया, भगवान् ने सिंह बनकर मांस मागा, शरणागत द्रौपदी का चीर बढ़ाया, वैसे ही तुमने शरणागत को रखकर क्षत्रिय धर्म की रक्षा की; तुम्हारे माता-पिता धन्य है ।

मोरध्वज कै सरन गयौ, दुज होइ सु अर्जुन ।
सिंह रूप धरि कन्ह, मंस मंग्यौ करि गर्जन ॥
दैन चीर अरधंग, नृपति सिर करवत धार्‌यौ ।
देखि महा सतवंत, प्रगट गोविंद उचार्‌यौ ॥
धनि-धनि मात-पित धनि तुम, सरनागत ध्रंम तैं रष्खिय ।
क्षत्री कहते कविचंद सौ, संभरि वै तिहि सम लषिय ॥

... ...

मुलतान का कहना कि काफिर चौहान को जीतना कौन बड़ी बात है :—

कहै सुरतान अहो तुम क्रूर, भये भय मृत्यु सु झंपहु नूर ।
कहा वल युद्ध कहौ पृथिराज, कितौ बल सामत युद्धिह साज ।

हनौ रन सूर जिके चहुंआन, गहौ युद्धराज सुषंडिय प्रान ।
कहा डर काफर दासहु मुज्झ, कहा मर आवध आगरि जुज्झ ।
नमनि चंमकि चढ्यौ सुरतान, टमंकिय गज्जिय नद्द निसान ।
जल थ्थल होय थल जल मार, अमग्गह मग्ग चलै गहि लार ।
मिल्यौ इक साहन लष्प समुद, समुझ्झिन कंन भयो सुर मुद ।
चल्यौ सुरतान मिलान-मिलान, वढ़ी अति चित दुनी चहुंआन ।

सुलतान की चढ़ाई का वर्णन

चढ्यौ सुरतान सुसज्जिय फौज, वजे बर बज्जन बीर असोज ।
भयौ गज घुमर घंट निघोर, मनौं झुकि क्रन्न भयौ सुह रोर ।
गजैं गज मद्द मनौ घन भद्द, चिकार फिकार भये सुर रुद्द ।
तुरंग महीस कडक्क लगाम, खरक्किय पष्षर तोन सुतान ।
चमंकत तेज सनाह सनाह, धरैं धर पद्धर राह बिराह ।
भलक्कत टोप सुटोप उतंग, मनौ रज जोति उद्योत विहंग ।
दमंकत तेज कमान कमान, चितं चिन मीर रही मइमान ।
भले भर सांइय भ्रम सगत्ति, लपै धर जीयन जात्तिन गत्ति ।
नमैं निज सांइय पंच बषत्त, सिगारह तीस पढै दिन रत्त ।
नमैं निज सेष धरंम धरंम, क्रमैं रह रीति कुरान करंम ।
दिढंबर वाचरु काछह मीर, तरुनिय एक रतै बरबीर ।
सबद्दय वेध्र करैं तम तांह, ममंतिय पंषि हनै छित छांह ।
धरैं इक एक सुवान सुवान, झलक्कत मुंड तबल्लह मान ।
धरैं धर नाहिय स्याहिय सीस, सिरक्कहि बंबर घुंमर दीस ।
अनेक सुवान अनेकय रंग, चढ़े सब मीरह सेन अभंग ।
अनेक सुवान अनेकय ब्रंन, समुझ्झि न हीय सुमुझ्झिन क्रंन ।

करंतित झंडिय रंग अनेक, फुरक्कहि झंषहि झंषह तेग।
चले धर बान सुसद्धिय दिट्ठ, अगें हथ नारि अमूल गरिट्ठ।
ढलैं सिर ढाल अनेक सुरंग, फरैं फर हारि उभारिय अंग।
... ...

पृथ्वीराज का शहाबुद्दीन को पांच दिन आदर के साथ रखकर तीन बार सलाम कराके मीर हुसैन के पुत्र को उसको सौंपकर यह प्रण करा कर कि अब हिंदुओं पर न चढ़ूंगा, छोड़ना, शाहका गाजी को लेकर कुशल से गजनी पहुंचनाः—

रष्षि पंच दिन साहि, अदब आदर बहु किन्नौ।
सुअ हुसैन गाजी सुपुत्त, हत्थैं ग्रहि दिन्नौ॥
किय सलाम तिय बार, जाहु अप्पने सुथानह।
मति हिंदू पर साहि, सज्जि आओ स्वथानह॥
बैठाइ साह सुष्पासनह, लाय अप्प गाजी सुसथ।
संपत्त जाइ गज्जन पुरह, करो षैर उद्धार अथ॥

मध्यमयुग - सगुणभक्तिधारा

राम-भक्ति-शाखा

तुलसीदास

परशुराम-लक्ष्मण-संवाद

तेहि अवसर सुनि शिवधनुभंगा । आए भृगुकुलकमलपतंगा ॥
देखि महीप सकल सकुचाने । बाज झपट जनु लवा लुकाने ॥
गौर सरीर भूति भलि भ्राजा । भाल विशाल त्रिपुंड विराजा ॥
सीस जटा ससि बदन सुहावा । रिसि बस कछुक अरुन होइ आवा ॥
भृकुटी कुटिल नयन रिसराते । सहजहुं चितवत मनहुं रिसाते ॥
वृषभ कंध उर बाहु बिशाला । चारु जनेउ माल मृगछाला ॥
कटि मुनिबसन तून दुइ बांधे । धनु सर कर कुठार कल कांधे ॥

संतवेष करनी कठिन, बरनि न जाइ सरूप ।
धरि मुनितनु जनु वीररसु, आयउ जहं सब भूप ॥

देखत भृगुपति वेषु कराला । उठे सकल भय विकल भुआला ॥
पितु समेत कहि निज निज नामा। लगे करन सब दंड प्रणामा ॥
जेहि सुभाय चितवहिं हित जानी। सो जानइ जनु आइ खुटानी ॥
जनक बहोरि आइ सिरु नावा । सीय बोलाइ प्रणाम करावा ॥
आसिष दीन्हि सखी हरिषानी । निज समाज लेइ गईं सयानी ॥
बिस्वामित्र मिले पुनि आई । पदसरोज मेले दोउ भाई ॥
राम लषन दशरथ के ढोटा । देखि असीस दीन्ह भल जोटा ॥

बहुरि बिलोकि विदेह सन, कहहु काह अति भीर ।
पूछत जानि अजान जिमि, व्यापे कोप सरीर ॥

समाचार कहि जनक सुनाए । जेहि कारण महीप सब आए ॥
सुनत बचन तब अनत निहारे । देखे चापखंड महि डारे ॥

अति रिस बोले बचन कठोरा । कहु जड जनक धनुष केइ तोरा ॥
बेगि देखाउ मूढ न त आजू । उलटउं महि जहं लगि तव राजू ॥
अति डर उतर देत नृप नाहीं । कुटिल भूप हरषे मन माहीं ॥
सुर मुनि नाग नगर नर नारी । सोचहिं सकल त्रास उर भारी ॥
मन पछताति सीय महतारी । बिधि अब सवरी बात बिगारी ॥
भृगुपति कर प्रभाव सुनि सीता । अरध निमेष कलप सम बीता ॥

सभय बिलोके लोग सब, जानि जानकी भीरु ।
हृदय न हरषु विषादु कछु, बोले श्री रघुबीरु ॥

नाथ संभु धनु भंजनिहारा । होइहि कोउ एक दास तुम्हारा ॥
आयसु काह कहिय किन मोही । सुनि रिसाय बोले मुनि कोही ॥
सेवक सो जो करइ सेवकाई । अरि करनी करि करिय लराई ॥
सुनहु राम जेइ सिवधनु तोरा । सहसबाहुसम सो रिपु मोरा ॥
सो बिलगाउ बिहाइ समाजा । नत मारे जइहैं सब राजा ॥
सुनि मुनि बचन लषन मुसुकाने । बोले परसुधरहिं अपमाने ॥
बहु धनुहीं तोरी लरिकाई । कबहुं न असि रिस कीन्हि गोसाईं ॥
एहि धनु पर ममता केहि हेतू । सुनि रिसाइ कह भृगुकुलकेतू ॥

रे नृपबालक ! कालबस, बोलत तोहि न संभार ।
धनुहीं सम त्रिपुरारिधनु, बिदित सकल संसार ॥

लषन कहा हंसि हमरे जाना । सुनहु देव सब धनुष समाना ॥
का छति लाभु जून धनु तोरे । देखा राम नए के भोरे ॥
छुवत टूट रघुपतिहु न दोषू । मुनि बिनु काज करिय कत रोषू ॥
बोले चितइ परसु की ओरा । रे सठ ! सुनेहि सुभाउ न मोरा ॥
बालक बोलि बधउं नहिं तोही । केवल मुनि जड जानहि मोही ॥
बाल ब्रह्मचारी अति कोही । बिस्वबिदित छत्रियकुलद्रोही ॥

भुजबल भूमि भूप बिन कीन्ही। बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही ।।
सहसबाहु भुज छेदनिहारा । परसु बिलोकु महीपकुमारा ।।
मातु पितहि जनि सोच बस, करसि महीपकिसोर ।
गरभन के अरभकदलन परसु मोर अति घोर ।।
बिहँसि लषन बोले मृदु बानी । अहो मुनीस महा भटमानी ।।
पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूंकि पहारू ।।
इहा कुम्हड़बतिया कोउ नाहीं। जे तरजनी देखि मरि जाहीं ।।
देखि कुठार सरासन बाना । मै कुछ कहेउँ सहित अभिमाना ।।
भृगुकुल समुझि जनेउ बिलोकी । जो कछु कहेहु सहउ रिस रोकी ।।
सुर महिसुर हरिजन अरु गाई । हमरे कुल इन्ह पर न सुराई ।।
बधे पाप अपकीरति हारे । मारतहू पा परिय तुम्हारे ।।
कोटि कुलिससम बचन तुम्हारा। व्यर्थ धरहु धनु बान कुठारा ।।
जो बिलोकि अनुचित कहेउ, छमहु महामुनि धीर ।
सुनि सरोष भृगुबंसमनि, बोले गिरा गंभीर ।।
कौसिक सुनहु मंद यह बालक । कुटिल काल बस निजकुलघालक ।।
भानु - बंस - राकेसकलंकू । निपट निरंकुस अबुध असंकू ।।
कालकवलु होइहि छन माही । कहउं पुकारि खोरि मोरि नाही ।।
तुम्ह हट कहु जौ चहहु उबारा। कहि प्रताप बल रोष हमारा ।।
लषन कहेउ मुनि सुजस तुम्हारा। तुम्हहि अछत को बरनइ पारा ।।
अपने मुह तुम्ह आपनि करनी। बार अनेक भाति बहु बरनी ।।
नहि संतोष तौ पुनि कछु कहहू । जनि रिसि रोकि दुसह दुख सहहू ।।
बीरबृत्ति तुम धीर अछोभा । गारी देत न पावहु सोभा ।।
सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहि आपु ।
बिद्यमान रिपु पाइ रन, कायर करहि प्रलापु ।।

तुम्ह तौ काल हांक जनु लावा। वार वार मोहि लागि बोलावा॥
सुनत लषन के वचन कठोरा। परसु सुधारि धरेउ कर घोरा॥
अब जनि देइ दोष मोहि लोगू। कटुबादी बालक बधजोगू॥
बाल विलोकि बहुत मैं बाचा। अब यह मरनहार भा सांचा॥
कौसिक कहा छमिय अपराधू। बालदोष गुन गनहि न साधू॥
कर कुठार मैं अकरनकोही। आगे अपराधी गुरुद्रोही॥
उतर देत छाडउं बिनु मारे। केवल कौसिक सील तुम्हारे॥
नतु एहि काटि कुठार कठोरे। गुरुहि उरिन होतेउं स्रम थोरे॥
गाधिसूनु कह हृदय हंसि, मुनिहि हरि अरइ सूझ।
अजगव खंडेउ ऊख जिमि, अजहुं न बूझ अबूझ॥
कहेउ लषन मुनि सील तुम्हारा। को नहिं जान विदित संसारा॥
मातपितहि उरिन भये नीके। गुरुरिन रहा सोच बड़ जी के॥
सो जनु हमरेहि माथे काढ़ा। दिन चलि गयउ व्याज बहु बाढ़ा॥
अब आनिय व्यवहरिया बोली। तुरत देउं मैं थैली खोली॥
सुनि कटुवचन कुठार सुधारा। हाय हाय सब सभा पुकारा॥
भृगुवर परसु देखावहु मोही। विप्र विचारि बचउं नृपद्रोही॥
मिले न कबहुं सुभट रन गाढ़े। द्विज देवता घरहि के बाढ़े॥
अनुचित कहि सब लोग पुकारे। रघुपति सैनहि लषन निवारे॥
लषन उतर आहुतिसरिस, भृगुवर कोपकृसानु।
बढ़त देखि जलसम वचन, बोले रघुकुलभानु॥
नाथ करहु बालक पर छोहू। सूध दूधमुख करिय न कोहू॥
जौ पै प्रभुप्रभाव कछु जाना। तौकि बराबरि करइ अयाना॥
जौ लरिका कछु अचगरि करहीं। गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं॥
करिय कृपा सिसु सेवक जानी। तुम्ह सम सील धीर मुनि ज्ञानी॥

रामवचन सुनि कछुक जुड़ाने। कहि कछु लषन बहुरि मुसुकाने॥
हसत देखि नखसिख रिस व्यापी। राम तोर भ्राता बड़ पापी॥
गौर सरीर स्याम मन माही। कालकूट मुख पयमुख नाहीं॥
सहज टेढ अनुहरइ न तोही। नीच मीचसम देख न मोही॥
लषन कहेउ हसि सुनहु मुनि, क्रोध पाप कर मूल।
जेहि बस जन अनुचित करहि, करहि बिस्व प्रतिकूल॥
मै तुम्हार अनुचर मुनिराया। परिहरि कोप करिय अब दाया॥
टूट चाप नहि जुरहि रिसाने। बैठिय होइहहि पाय पिराने॥
जौं अति प्रिय तौ करिय उपाई। जोरिय कोउ बड़ गुनी बुलाई॥
बोलत लषनहि जनक डराही। मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं॥
थरथर कापहि पुरनरनारी। छोट कुमार खोट बड़ भारी॥
भृगुपति सुनि सुनि निर्भय बानी। रिस तन जरइ होइ बल हानी॥
बोले रामहि देइ निहोरा। बचउं बिचारि बंधु लघु तोरा॥
मन मलीन तनु सुंदर कैसे। बिषरस भरा कनकघट जैसे॥
मुनि लछमन बिहंसे बहुरि, नयन तरेरे राम।
गुरु समीप गवने सकुचि, परिहरि बानी बाम॥
अति बिनीत मृदु सीतल बानी। बोले राम जोरि जुग पानी॥
सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना। बालक बचन करिय नहिं काना॥
बररै बालक एक सुभाऊ। इन्हहि न संत बिदूषहि काऊ॥
तेहि नाही कछु काज बिगारा। अपराधी मैं नाथ तुम्हारा॥
कृपा कोप बध बंध गोसाई। मो पर करिय दास की नाई॥
कहिय बेगि जेहि बिधि रिस जाई। मुनिनायक सोइ करउँ उपाई॥
कह मुनि राम जाय रिस कैसे। अजहुं अनुज तव चितव अनैसे॥
एहिके कंठ कुठार न दीन्हा। तौ मैं काह कोप करि कीन्हा॥

गर्भ स्रवहिं अवनिपरवनि, सुनि कुठारगति घोर।
परसु अछत देखेउं जियत, बैरी भूपकिसोर ॥
बहइ न हाथ दहइ रिस छाती। भा कुठार कुंठित नृपघाती ॥
भयेउ बाम बिधि फिरेउ सुभाउ। मोरे हृदय कृपा कसि काऊ ॥
आजु दैव दुख दुसह सहावा। सुनि सौमित्र बहुरि सिरु नावा ॥
बाउ कृपा मूरति अनुकूला। बोलत बचन झरत जनु फूला ॥
जौ पै कृपा जरहिं मुनि गाता। क्रोध भये तन राखु बिधाता ॥
देखु जनक हठि बालक एहू। कीन्ह चहत जड़ जमपुर गेहू ॥
बेगि करहु किन आंखिन ओटा। देखत छोट खोट नृपढोटा ॥
बिहंसे लषन कहा मुनि पाहीं। मूंदे आंखि कतहुं कोउ नाहीं ॥
परशुराम तब राम प्रति, बोले उर अति क्रोध।
संभु सरासन तोरि सठ, करसि हमार प्रबोध।
बंधु कहइ कटु संमत तोरे। तू छल बिनय करसि कर जोरे ॥
करु परितोष मोर संग्रामा। नाहिं तो छाडु कहाउब रामा ॥
छल तजि करहि समर सिवद्रोही। बंधुसहित नत मारउं तोही ॥
भृगुपति बकहिं कुठार उठाए। मन मुसुकाहिं राम सिर नाए ॥
गुनहु लषन कर हम पर रोषू। कतहु सुधाइहु ते बड़ दोषू ॥
टेढ जानि बंदइ सब काहू। बक्र चंद्रमहि ग्रसइ न राहू ॥
राम कहेउ रिस तजहु मुनीसा। कर कुठार आगे यह सीसा ॥
जेहि रिस जाइ करिय सोइ स्वामी। मोहि जानिए आपन अनुगामी ॥
प्रभु सेवकहि समर कस, तजहु बिप्रबर रोसु।
बेष बिलोकि कहेसि कछु, बालकहू नहिं दोसु ॥
देखि कुठार बान धनुधारी। भइ लरिकहि रिस बीरु बिचारी ॥
नाम जान पै तुम्हहिं न चीन्हा। बंस सुभाव उतरु तेइ दीन्हा ॥

जौ तुम्ह अवतेहु मुनि की नाईं । पदरज सिर सिसु धरत गोसाईं ।।
छमहु चूक अनजानत केरी । चाहिए विप्रउर कृपा घनेरी ।।
हमहि तुम्हहि सरवर कस नाथा । कहहु न कहा चरण कहं माथा ।।
राममात्र लघु नाम हमारा । परसुसहित बड़ नाम तुम्हारा ।।
देव एक गुन धनुप हमारे । नव गुन परम पुनीत तुम्हारे ।।
सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे । छमहु बिप्र अपराध हमारे ।।

बार बार मुनि बिप्रवर, कहा राम सन राम ।
बोले भृगुपति सरुष होइ, तुहूँ बंधुमम बाम ।।

निपटहि द्विज करि जानहि मोही । मैं जस बिप्र सुनावहुं तोही ।।
चाप स्रुवा सर आहुति जानू । कोप मोर अति घोर कृसानू ।।
समिध सेन चतुरंग सुहाई । महामहीप भए पसु आई ।।
मैं यह परसु काटि बलि दीन्हे । समरयज्ञ जग कोटिक कीन्हे ।।
मोर प्रभाव विदित नहिं तोरे । बोलसि निदरि बिप्र के भोरे ।।
भजेउ चाप दाप बड़ बाढ़ा । अहमिति मनहु जीति जग ठाढा ।।
राम कहा मुनि कहहु बिचारी । रिस अति बडि लघु चूक हमारी ।।
छुवतहि टूट पिनाक पुराना । मैं केहि हेतु करउ अभिमाना ।।

जौ हम निदरहि बिप्र बदि, सत्य सुनहु भृगुनाथ ।
तौ अस को जग सुभट जेहि, भयबस नावहि माथ ।।

देव दनुज भूपति भट नाना । समबल अधिक होउ बलवाना ।।
जौ रन हमहि प्रचारइ कोऊ । लरहि सुखेन काल किन होऊ ।।
छत्रिय तनु धनि समर सकाना । कुलकलक तेहि पामर जाना ।।
कहउ सुभाव न कुलहि प्रससी । कालहु डरहि न रन रघुवंसी ।।
विप्रबंस कै असि प्रभुताई । अभय होइ जो तुम्हहि डेराई ।।
सुनि मृदु बचन गूढ़ रघुपति के । उघरे पटल परसुधरमति के ।।

राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटइ मोर संदेहू ॥
देत चाप आपहि चलि गयेऊ। परसुराममन बिसमय भयेऊ ॥
जाना रामप्रभाव तब, पुलक प्रफुल्लित गात।
जोरि पानि बोले बचन, हृदय न प्रेम समात ॥
जय रघुबंशबनजबनभानू। गहन दनुजकुलदहनकृसानू ॥
जय सुरविप्रधेनुहितकारी। जय मदमोहकोह भ्रमहारी ॥
बिनय सील करुना गुन सागर। जयति बचनरचना अति नागर ॥
सेवक सुखद सुभग सब अंगा। जय सरीर छबि कोटि अनंगा ॥
करउं काह मुख एक प्रसंसा। जय महेसमनमानसहंसा ॥
अनुचित बचन कहेउ अजाता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता ॥
कहि जय जय जय रघुकुलकेतू। भृगुपति गए बनहि तपहेतू ॥
अपभय सकल महीप डेराने। जहं तहं कायर गवहि पराने ॥
देवन दीन्ही दुंदुभी, प्रभु पर बरषहि फूल।
हरषे पुर नर नारि सब, मिटा मोह भय सूल ॥

मंथरा-कैकेयी-संवाद

बाजहि बाजन बिबिध बिधाना। पुर प्रमोद नहि जाइ बखाना ॥
भरत आगमनु सकल मनावहि। आवहिं बेगि नयन फल पावहि ॥
हाट बाट घर गली अथाई। कहहि परसपर लोग लुगाई ॥
कालि लगन भलि केतिक बारा। पूजिहि बिधि अभिलाषु हमारा ॥
कनकसिंहासन सीय समेता। बैठहिं राम होइ चित चेता ॥
सकल कहहिं कब होइहि काली। बिघन मनावहि देव कुचाली ॥
तिन्हहि सुहाइ न अवधबधावा। चोरहि चांदनि राति न भावा ॥

सादर बोलि विनय सुर करहीं । वारहिं बार पाय लै परहीं ।।

विपति हमारि विलोकि वडि, मातु करिय सोइ आजु ।

राम जाहि बन राजु तजि, होइ सकल सुरकाजु ।।

सुनि सुरविनय ठाढि पछिताती । भयउ सरोजबिपिन हिमराती ।।
देखि देव पुनि कहहि निहोरी । मातु तोहि नहि थोरिउ खोरी ।।
विसमय हरषरहित रघुराऊ । तुम्ह जानहु सब रामप्रभाऊ ।।
जीव करमवस सुखदुखभागी । जाइय अवध देवहित लागी ।।
बार बार गहि चरण संकोची । चली विचार विबुधमति पोची ।।
ऊंच निवास नीच करतूती । देखि न सकहि पराइ विभूती ।।
आगिल काजु विचारि बहोरी । करहहि चाह कुसल कवि मोरी ।।
हरषि हृदय दसरथपुर आई । जनु ग्रहदसा दुसह दुखदाई ।।

नामु मथरा मद मति, चेरी कैकइ केरि ।

अजस पेटारी ताहि करि, गई गिरा मति फेरि ।।

दीख मथरा नगरबनावा । मजुल मगल बाज बधावा ।।
पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू । रामतिलक सुनि भा उर दाहू ।।
करइ विचारु कुबुद्धि कुजाती । होइ अकाज कवनि विधि राती ।।
देखि लागि मधु कुटिल किराती । जिमि गव तकहि लेउं केहि भांती ।।
भरतमातु पहि गइ विलखानी । का अनमनि हसि कह हसि रानी ।।
ऊतरु देइ नहि लेइ उसासू । नारिचरित करि ढारइ आसू ।।
हसि कह रानि गाल बड तोरे । दीन्ह लखन सिख अस मन मोरे ।।
तबहु न बोल चेरि बडि पापिनि । छाडइ स्वास कारि जनु सांपिनि ।।

सभय रानि कह कहसि किन, कुसल रामु महिपालु ।

लखनु भरतु रिपुदमनु सुनि, भा कुबरीउर सालु ।।

कत सिख देइ हमहि कोउ माई । गालु करब केहि कर बलु पाई ।।

रामहि छाड़ि कुशल केहि आजू। जिनहि जनेसु देइ जुवराजू ॥
भयउ कौसिलहि बिधि अति दाहिन। देखत गरब रहत उर नाहिन ॥
देखहु कस न जाइ सब सोभा। जो अवलोकि मोर मनु छोभा ॥
पूतु बिदेस न सोचु तुम्हारे। जानतिहहु बस नाहु हमारे ॥
नीद बहुत प्रिय सेज तुराई। लखहु न भूप कपट चतुराई ॥
सुनि प्रिय बचन मलिन मनु जानी। झुकी रानि अब रहु अरगानी ॥
पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी। तब धर जीभ कढ़ावउँ तोरी ॥

काने खोरे कूबरे, कुटिल कुचाली जानि।
तिय बिसेषि पुनि चेरि कहि, भरतमातु मुसुकानि ॥

प्रियबादिनि सिख दीन्हिउँ तोही। सपनेहु तो पर कोपु न मोही ॥
सुदिनु सुमंगलदायकु सोई। तोर कहा फुर जेहि दिन होई ॥
जेठ स्वामि सेवक लघु भाई। यह दिनकर कुलरीति सुहाई ॥
रामतिलकु जौं साचेउ काली। देउँ मागु मन भावत आली ॥
कौसल्यासम सब महतारी। रामहि सहज सुभाय पियारी ॥
मो पर करहिं सनेहु बिसेखी। मैं करि प्रीति परीछा देखी ॥
जौं बिधि जनमु देइ करि छोहू। होहिं राम सिय पूत पतोहू ॥
प्रान ते अधिक रामु प्रिय मोरे। तिन्ह के तिलक छोभु कस तोरे ॥

भरत सपथ तोहि सत्य कहु, परिहरि कपट दुराउ।
हरष समय बिसमय करसि, कारन मोहि सुनाउ ॥

एकहि बार आस सब पूजी। अब कछु कहब जीभ करि दूजी ॥
फोरइ जोग कपारु अभागा। भलेउ कहत दुख रउरेहि लागा।
कहहि झूठि फुरि बात बनाई। ते प्रिय तुमहि करुइ मैं माई ॥
हमहु कहब अब ठकुरसुहाती। नाहि त मौन रहब दिनराती ॥
करि कुरूप बिधि परबस कीन्हा। बवा सो लुनिय लहिय जो दीन्हा ॥

कोउ नृप होय हमहि का हानी। चेरि छाँड़ि अब होब कि रानी॥
जारइजोगु सुभाउ हमारा। अनभल देखि न जाय तुम्हारा॥
तो तें कछुक बात अनुसारी। छमिय देखि बड़ि चूक हमारी॥
गूढ़ कपट प्रिय बचन सुनि, तीय अधरबुधि रानि।
सुरमायाबस बैरिनिहि, सुहृद जानि पतियानि॥
सादर पुनि पुनि पूछति ओही। सबरीगान मृगी जनु मोही॥
तसि मति फिरी अहइ जसि भावी। रहसी चेरि घात जनु फावी॥
तुम्ह पूछहु मैं कहत डेराऊं। धरेउ मोर घरफोरी नाऊं॥
सजि प्रतीति बहु बिधि गढ़ि छोली। अवध साढ़साती तब बोली॥
प्रिय सिय रामु कहा तुम्ह रानी। रामहि तुम्ह प्रिय सो फुरि बानी॥
रहा प्रथम अब ते दिन बीते। समउ फिरे रिपु होहि पिरीते॥
भानु कमल कुल पोषनिहारा। बिनु जर जारि करइ सोइ छारा॥
जर तुम्हारि चह सवति उखारी। रूंधहु करि उपाय बरबारी॥
तुमहि न सोचु सोहाग बल, निजबस जानहु राउ।
मनमलीन मुहमीठ नृप, राउर सरल सुभाउ॥
चतुर गंभीर राममहतारी। बीचु पाई निज बात संभारी॥
पठये भरतु भूप ननिअउरे। राम मातु मत जानब रउरे॥
सेवहि सकल सवति मोहि नीके। गरबित भरत मातु बल पीके॥
सालु तुम्हार कौसलहि माई। कपट चतुर नहि होइ जनाई॥
राजहि तुम्ह पर प्रेमु बिसेखी। सवति सुभाव सकइ नहीं देखी॥
रचि प्रपंचु भूपहि अपनाई। रामतिलकहित लगन धराई॥
यह कुल उचित राम कहुं टीका। सबहि सुहाइ मोहि सुठ नीका॥
आगिल बात समुझि डर मोही। देउ दैव फिरि सो फलु ओही॥
रचि पचि कोटिक कुटिलपन, कीन्हेसि कपट प्रबोध।

कहेसि कथा सत सवति कै, जेहि विधि बाढ़ विरोध ॥
भावीबस प्रतीति उर आई। पूछ रानि पुनि सपथ देवाई ॥
का पूछहु तुम्ह अबहु न जाना। निज हित अनहित पसु पहिचाना ॥
भयउ पाखु दिन सजत समाजू। तुम्ह पाई सुधि मोहि मन आजू ॥
खाइय पहिरिय राज तुम्हारे। सत्य कहे नहि दोषु हमारे ॥
जौ असत्य कछु कहब बनाई। तौ बिधि देइहि हमहि सजाई ॥
रामहि तिलक कालि जौ भयऊ। तुम्ह कहुं बिपतिबीजु बिधि बयऊ ॥
रेख खंचाइ कहउं बल भाखी। भामिनि भइहु दूध कइ माखी ॥
जो सुतसहित करहु सेवकाई। तौ घर रहहु न आन उपाई ॥
कद्रू बिनतहि दीन्ह दुख, तुम्हहि कौसिल्या देब।
भरतु बंदिगृह सेइहहि, लखनु राम के नेब ॥
कैकयसुता सुनत कटु बानी। कहि न सकइ कछु सहमि सुखानी ॥
तन पसेउ कदली जिमि कांपी। कुबरीं दसन जीभ तब चांपी ॥
कहि कहि कोटिक कपट कहानी। धीरज धरहु प्रबोधेसि रानी ॥
कीन्हेसि कठिन पढ़ाइ कुपाठू। जिमि न नवइ फिरि उकठ कुकाठू ॥
फिरा करमु प्रिय लागि कुचाली। बकिहि सराहइ मानि मराली ॥
सुनु मंथरा बात फुरि तोरी। दहिन आंखि नित फरकइ मोरी ॥
दिन प्रति देखहु राति कुसपने। कहहु न तोहि मोहबस अपने ॥
काह करउ सखि सूध सुभाऊ। दाहिन बाम न जानउ काऊ ॥
अपने चलत न आजु लगि, अनभल काहुक कीन्ह।
केहि अघ एकहि बार मोहि, दैव दुसह दुख दीन्ह ॥
नैहर जनमु भरब बरु जाई। जियत न करब सवति सेवकाई ॥
अरि बस दैव जियावत जाही। मरनु नीक तेहि जीव न चाही ॥
दीन बचन कह बहुबिधि रानी। सुनि कुबरी तियमाया ठानी ॥

अस कस कहहु मानि मन ऊना । सुख सोहागु तुम कहँ दिन दूना ॥
जेइ राउर अति अनभल ताका । सोइ पाइहि यह फलु परिपाका ॥
जब तें कुमत सुना मैं स्वामिनि । भूख न बासर नींद न जामिनि ॥
पूछेउ गुनिन्ह रेख तिन्ह खाँची । भरत भुआल होंहि यह साँची ॥
भामिनि करहु त कहउ उपाऊ । है तुम्हरीं सेवा बस राऊ ॥

परउँ कूप तव बचन पर, सकउँ पूत पति त्यागि ॥
कहसि मोर दुख देखि बड़, कस न करब हित लागि ॥

कुबरी करि कबूलि कैकेई । कपटछुरी उरपाहन टेई ॥
लखइ न रानि निकट दुख कैसे । चरइ हरिततृन बलिपसु जैसे ॥
सुनत बात मृदु अंत कठोरी । देति मनहु मधु माहुर घोरी ॥
कहइ चेरि सुधि अहइ कि नाही । स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पाही ॥
दुइ बरदान भूप सन थाती । मागहु आज जुड़ावहु छाती ॥
सुतहि राजु रामहि बनबासू । देहु लेहु सब सवति हुलासू ॥
भूपति रामसपथ जब करई । तब मागहु जेहिं बचन न टरई ॥
होइ अकाजु आजु निसि बीतें । बचनु मोर प्रिय मानेहु जी तें ॥

बड़ कुघातु करि पातकिनि, कहेसि कोपगृह जाहु ।
काज सवाँरेहु सजग सब, सहसा जनि पतिआहु ॥

कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी । बार बार बड़ि बुद्धि बखानी ॥
तोहि सम हित न मोर संसारा । बहे जात कइ भइसि अधारा ॥
जौं बिधि पुरब मनोरथु काली । करौं तोहि चखपूतरि आली ॥
बहु बिधि चेरिहि आदरु देई । कोपभवन गवनी कैकेई ॥

दशरथ-कैकेयी-संवाद

बार बार कह राउ, सुमुखि सुलोचनि पिकबचनि ।
कारन मोहि सुनाउ, गजगामिनि निजकोप कर ॥

अनहित तोर प्रिये केहि कीन्हा। केहि दुइ सिर केहि जम चह लीन्हा।।
कहु केहि रंकहि करउं नरेसू। कहु केहि नृपहि निकासउं देसू।।
सकउं तोर अरि अमरउ मारी। काह कीट बपुरे नर नारी।।
जानसि मोर सुभाउ बरोरू। मन तव आननचंदचकोरू।।
प्रिया प्रान सुत सरबसु मोरे। परिजन प्रजा सकल बस तोरे।।
जौं कछु कहउं कपट करि तोही। भामिनि राम सपथ सत मोही।
बिहंसि मांगु मन भावति बाता। भूषन सजहि मनोहर गाता।।
घरी कुघरी समुझि जिय देखू। बेगि प्रिया परिहरहि कुबेखू।।

यह सुनि मनु गुनि सपथ बडि, बिहंसि उठी मतिमंद।
भूषन सजित बिलोकि मृग, मनहुं किरातिनि फंद।।

पुनि कह राउ सुहृद जिय जानी। प्रेम पुलकि मृदु मंजुल बानी।।
भामिनि भयउ तोर मनभावा। घर घर नगर अनंदवधावा।।
रामहिं देउं कालि जुवराजू। सजहि सुलोचनि मंगल साजू।।
दलकि उठेउ सुनि हृदय कठोरू। जनु छुइ गयउ पाक बरतोरू।।
ऐसिउ पीर बिहंसि तेइ गोई। चोरनारि जिमि प्रगटि न रोई।।
लखी न भूप कपट चतुराई। कोटि कुटिल मनि गुरू पढाई।।
जद्यपि नीतिनिपुन नरनाहू। नारिचरितजलनिधि अवगाहू।।
कपट सनेह बढ़ाइ बहोरी। बोली बिहंसि नयन सुह मोरी।।

मांगु मांगु पै कहहु पिय, कबहुं न देहु न लेहु।
देन कहेहु बरदान दुइ, तेउ पावत संदेहु।।

जानेउं मरम राउ हंसि कहई। तुम्हहि कोहाब परम प्रिय अहई।।
थाती राखि न मांगेहु काऊ। बिसरि गएउ मोहि भोर सुभाऊ।।
झूठेहु हमहि दोष जनि देहू। दुइ कै चारि मागि किन लेहू।।
रघुकुलरीति सदा चलि आई। प्राण जाहु बरु बचन न जाई।।

नहि असत्य मम पातकपुंजा। गिरिसम होहि कि कोटिक गुंजा॥
सत्य मूल सब सुकृत सुहाए। बेद पुरान बिदित मुनि गाए॥
तेहि पर राम सपथ करि आई। सुकृत सनेह अवधि रघुराई॥
बात दृढ़ाइ कुमति हँसि बोली। कुमत बिहग कुलह जनु खोली॥

भूप मनोरथ सुभग बन, सुख सुबिहग समाजु।
भिल्लिनि जिमि छाड़न चहति, बचन भयंकर बाजु॥

सुनहु प्रान प्रिय भावत जीका। देहु एक बर भरतहि टीका॥
मागउं दूसर बर कर जोरी। पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी॥
तापसवेष बिसेषि उदासी। चौदह बरसि राम बनवासी॥
सुनि मृदु बचन भूप हिय सोकू। ससिकर छुअत बिकल जिमि कोकू॥
गयउ सहमि नहि कछु कहि आवा। जनु सचान बन झपटेउ लावा॥
बिबरन भयउ निपट नरपालू। दामिनि हनेउ मनहुं तरु तालू॥
माथे हाथ मूदि दोउ लोचन। तनु धरि सोचु लाग जनु सोचन॥
मोर मनोरथसुरतरु फूला। फरत करिनि जिमि हतेउ समूला॥
अवध उजारि कीन्हि कैकेयी। दीन्हेसि अचल बिपति कै नेई॥

कवने अवसर का भयउ, गयउं नारिबिस्वास।
जोगसिद्धि फल समय जिमि, जतिहि अविद्यानास॥

एहि विधि राउ मनहि मन झाखा। देखि कुभांति कुमति मनु मांखा॥
भरत कि राउर पूत न होही। आनेहुं मोल बेसाहि कि मोही॥
जो सुनि सर सम लागु तुम्हारे। काहे न बोलहु बचनु संभारे॥
देहु उतर अरु कहहु कि नाही। सत्यसंध तुम रघुकुल माहीं॥
देन कहेहु अब जनि बरु देहू। तजहु सत्य जग अपजस लेहू॥
सत्य सराहि कहेहु बरु देना। जानेहु लेइहि मांगि चबेना॥
सिवि दधीचि बलि जो कछु भाखा। तुम धनु तजेउ बचनपन राखा॥

अति कटु वचन कहति कैकेई । मानहुं लोन जरे पर देई ॥
धरम धुरंधर धीर धरि, नयन उघारे राय ।
सिर धुनि लीन्हि उसास असि, मारेसि मोहि कुठाय ॥
आगे दीखि जरति रिसि भारी । मनहु रोष तरवारि उघारी ॥
मूठ कुबुद्धि धार निठुराई । धरी कूबरी सान बनाई ॥
लखी महीप कराल कठोरा । सत्य कि जीवन लेइहि मोरा ॥
बोलेउ राउ कठिन कर छाती । बानी सविनय तासु सोहाती ॥
प्रिया वचन कस कहसि कुभाती । भीरु प्रतीत प्रीति करि हानी ॥
मोरे भरत राम दुइ आखी । सत्य कहउ करि संकर साखी ॥
अवसि दूत मे पठउब प्राता । अइहहि वेगि सुनत दोउ भ्राता ॥
सुदिन सोधि सब साजु सजाई । देउ भरत कहु राजु बजाई ॥
लोभु न रामहि राजु कर, बहुत भरत पर प्रीति ।
मै बड छोट विचारि जिय, करत रहेउ नृपनीति ॥
राम सपथ सत कहउ सुभाऊ । राममातु कछु कहेउ न काऊ ॥
मै सब कीन्ह तोहि बिनु पूछे । तेहि ते परेउ मनोरथ छूछे ॥
रिस परिहरु अब मंगलसाजू । कछु दिन गए भरत जुबराजू ॥
एकहि बात मोहि दुख लागा । बर दूसर असमजस मागा ॥
अजहु हृदय जरत तेहि आचा । रिस परिहास कि साचेहु साचा ॥
कहु तजि रोषु रामअपराधू । सब कोउ कहइ राम सुठि साधू ॥
तुहू सराहसि करसि सनेहू । अब सुनि मोहि भयउ संदेहू ॥
जासु सुभाउ अरिहि अनुकूला । सो किमि करिहि मातुप्रतिकूला ॥
प्रिया हास रिस परिहरहि, मागु विचारि विवेकु ।
जेहि देखउ अब नयन भरि, भरत राज अभिषेकु ॥
जिअइ मीन बरु बारि बिहीना । मनि बिनु फनिक जिअइ दुख दीना ॥

कहउं सुभाउ न छल मन माही । जीवन मोर राम बिन नाही ॥
समुझि देखु जिय प्रिया प्रवीना । जीवन राम दरस आधीना ॥
सुनि मृदु बचन कुमति अति जरई । मनहु अनल आहुति घृत परई ॥
कहइ करहु किन कोटि उपाया । इहां न लागिहि राउरि माया ॥
देहु कि लेहु अजस करि नाही । मोहि न बहुत प्रपंच सोहाही ॥
राम साधु तुम्ह साधु सयाने । राम मातु भलि सब पहिचाने ॥
जस कौसिला मोर भल ताका । तस फल उन्हहि देउ करि साका ॥

होत प्रात मुनि बेष धरि, जौ न राम बन जाहिं ।
मोर मरन राउर अजस, नृप समुझिय मन माहि ॥

अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी । मानहु रोषतरंगिनि बाढ़ी ॥
पाप पहार प्रगट भइ सोई । भरी क्रोध जल जाइ न जोई ॥
दोउ बर कूल कठिन हठधारा । भवर कूबरी बचन प्रचारा ॥
ढाहत भूपरूप तरुमूला । चली बिपतिबारिधि अनुकूला ॥
लखी नरेस बात सब साची । तियमिस मीच सीस पर नाची ॥
गहि पद बिनय कीन्ह बैठारी । जनि दिनकरकुल होसि कुठारी ॥
मागु माथ अबहीं देउं तोही । राम बिरह जनि मारसि मोही ॥
राखु राम कह जेहि-तेहि भांती । नाहि त जरिहि जनम-भर छाती ॥

देखी ब्याधि असाधि नृप, परेउ धरनि धुनि माथ ।
कहत परम आरत बचन, राम राम रघुनाथ ॥

ब्याकुल राउ सिथिल सब गाता । करिनि कलपतरु मनहु निपाता ॥
कंठ सूख मुख आव न बानी । जनु पाठीन दीन बिनु पानी ॥
पुनि कह कटु कठोर कैकेई । मनहुं घाय महु माहुर देई ॥
जौ अंतहु अस करतब रहेऊ । मांगु-मांगु तुम्ह केहि बल कहेऊ ॥
दुइ कि होइ इक समय भुआला । हंसब ठठाइ फुलाउब गाला ॥

दानि कहाउब अरु कृपनाई। होइ कि खेम कुसल रौताई॥
छाड़हु बचन कि धीरज धरहू। जनि अबला जिमि करुना करहू॥
तनु तिय तनय धाम धनु धरनी। सत्यसंध कहँ तृन सम बरनी॥

मरम बचन सुनि राउ कह, कहु कछु दोष न तोर।
लागेउ तोहि पिसाच जिमि, काल कहावत मोर॥

चहत न भरत भूप तिहि भोरे। बिधिबस कुमति बसी जिय तोरे॥
सो सब मोर पापपरिनामू। भयउ कुठाहर जेहि बिधि बामू॥
सुबस बसहि फिरि अवध सुहाई। सब गुन धाम राम प्रभुताई॥
करिहहि भाइ सकल सेवकाई। होइहि तिहुं पुर राम बड़ाई॥
तोर कलंक मोर पछिताऊ। मुयहु न मिटिहि न जाइहि काऊ॥
अब तोहि नीक लाग करु सोई। लोचन ओट बैठु मुह गोई॥
जब लगि जियउं कहउं कर जोरी। तब लगि जनि कछु कहसि बहोरी॥
फिरि पछतैहसि अंत अभागी। मारसि गाइ नहारुहि लागी॥

परेउ राउ कहि कोटि बिधि, काहे करसि निदानु।
कपट सयानि न कहति कछु, जागति मनहुं मसानु॥

राम राम रट बिकल भुआलू। जनु बिनु पंख बिहंग बेहालू॥
हृदय मनाव भोरु जनि होई। रामहि जाइ कहइ जनि कोई॥
उदय करहु जनि रबि रघुकुलगुर। अवध बिलोकि सूल होइहि उर॥
भूप प्रीति कैकइ कठिनाई। उभय अवधि बिधि रची बनाई॥
बिलपत नृपहि भयउ भिनुसारा। बीना बेनु संख धुनि द्वारा॥
पढ़हि भाट गुन गावहि गायक। सुनत नृपहि जनु लागहि सायक॥
मंगल सकल सुहाहि न कैसे। सहगामिनिहि बिभूषन जैसे॥
तेहि निसि नीद परी नहि काहू। रामदरसलालसा उछाहू॥

राम के विनीत वचन

मन मुसकाइ भानुकुलभानू । राम सहज आनंदनिधानू ॥
बोले बचन बिगत सब दूषन । मृदुमंजुल जनु बागबिभूषन ॥
सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी । जो पितु मातु बचन अनुरागी ॥
तनय मातु पितु तोषनिहारा । दुर्लभ जननि सकल संसारा ॥

मुनिगन मिलनु बिसेषि बन, सबहि भाँति हित मोर ।
तेहि महँ पितु आयसु बहुरि, संमत जननी तोर ॥

भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू । बिधि सब बिधि मोहि सनमुख आजू ॥
जौ न जाउँ बन ऐसेहु काजा । प्रथम गनिय मोहि मूढ़ समाजा ॥
सेवहि अरँडु कलपतरु त्यागी । परिहरि अमृत लेहि बिषु मांगी ॥
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं । देखि बिचारि मातु मन माहीं ॥
अंब एक दुख मोहि बिसेखी । निपट बिकल नरनायक देखी ॥
थोरिहि बात पितहि दुख भारी । होति प्रतीति न मोहि महतारी ॥
राउ धीरु गुनउदधि अगाधू । भा मोहि ते कछु बड़ अपराधू ॥
तात मोहि न कहत कछु राऊ । मोरि सपथ तोहि कहु सतिभाऊ ॥
देस काल अवसर अनुसारी । बोले बचन बिनीत बिचारी ॥
तात कहउँ कछु करउँ ढिठाई । अनुचित छमब जानि लरिकाई ॥
अति लघु बात लागि दुख पावा । काहु न मोहि कहि प्रथम जनावा ॥
देखि गोसाइँहिं पूँछिउँ माता । सुनि प्रसंगु भए सीतल गाता ॥

मंगल समय सनेहबस, सोच परिहरिय तात ।
आयसु देइय हरषि हिय, कहि पुलके प्रभुगात ॥

धन्य जनम जगतीतल तासू । पितहि प्रमोद चरित सुनि जासू ।
चारि पदारथ करतल ताके । प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके ॥

आयसु पालि जनम फल पाई । ऐहउँ बेगिहि होउ रजाई ॥
बिदा मातु सन आवउ माँगी । चलिहउ बनहि बहुरि पग लागी ॥
अस कहि राम गवन तब कीन्हा । भूप सोकबस उतरु न दीन्हा ॥

* * *

राम-सीता-संवाद

कहि प्रिय बचन बिबेकमय, कीन्ह मातुपरितोष ।
लगे प्रबोधन जानकिहि, प्रगटि बिपिनगुनदोष ॥

मातु समीप कहत सकुचाहीं । बोले समउ समुझि मन माहीं ॥
राजकुमारि सिखावन सुनहू । आनि भाँति जिय जनि कछु गुनहू ॥
आपन मोर नीक जौं चहहू । बचन हमार मानि गृह रहहू ॥
आयसु मोरि सासु सेवकाई । सब बिधि भामिनि भवन भलाई ॥
एहि ते अधिक धरमु नहि दूजा । सादर सासु ससुर पद पूजा ॥
जब जब मातु करिहि सुधि मोरी । होइहि प्रेम बिकल मति भोरी ॥
तब तब तुम्ह कहि कथा पुरानी । सुंदरि समुझाएहु मृदु बानी ॥
कहउ सुभाय सपथ सत मोही । सुमुखि मातु हित राखउँ तोही ॥

गुरु स्रुति संमत धरम फल, पाइअ बिनहि कलेस ।
हठबस सब संकट सहे, गालव नहुष नरेस ॥

मैं पुनि करि प्रमान पितुबानी । बेगि फिरब सुनु सुमुखि सयानी ॥
दिवस जात नहि लागहि बारा । सुंदरि सिखवन सुनहु हमारा ॥
जौं हठ करहु प्रेमबस बामा । तौ तुम्ह दुख पाउब परिनामा ॥
कानन कठिन भयंकर भारी । घोर घाम हिम बारि बयारी ॥
कुस कंटक मग काँकर नाना । चलब पयादेहि बिनु पदत्राना ॥
चरनकमल मृदु मंजु तुम्हारे । मारग अगम भूमिधर भारे ॥
कंदर खोह नदी नद नारे । अगम अगाध न जाहि निहारे ॥

भालु बाघ बृक केहरि नागा । करहिं नाद सुनि धीरज भागा ॥
भूमि सयन वल्कल बसन, असन कंद फल मूल ।
ते कि सदा सब दिन मिलहिं, समय समय अनुकूल ॥
नर अहार रजनीचर करहीं । कपट बेष बिधि कोटिक करहीं ॥
लागइ अति पहार कर पानी । बिपिन बिपति नहि जाइ बखानी ॥
ब्याल कराल बिहग बन घोरा । निसिचर निकर नारि नर चोरा ॥
डरपहिं धीर गहन सुधि आए । मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुभाए ॥
हंसगवनि तुम्ह नहिं बनजोगू । सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू ॥
मानससलिलसुधाप्रतिपाली । जियइ कि लवनपयोधि मराली ॥
नव रसालवनविहरनसीला । सोह कि कोकिल बिपिन करीला ॥
रहहु भवन अस हृदय बिचारी । चंदवदनि दुख कानन भारी ॥
सहज सुहृद गुरुस्वामिसिख, जो न करइ सिर मानि ।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हितहानि ॥
सुनि मृदु बचन मनोहर पिय के । लोचन ललित भरे जल सिय के ॥
सीतल सिख दाहक भइ कैसे । चकइहि सरदचंद निसि जैसे ॥
उतरु न आव बिकल बैदेही । तजन चहत सुचि स्वामि सनेही ॥
बरबस रोकि बिलोचन बारी । धरि धीरज उर अवनिकुमारी ॥
लागि सासु पग कह कर जोरी । छमबि देबि बड़ि अविनय मोरी ॥
दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई । जेहि बिधि मोर परम हित होई ॥
मैं पुनि समुझि दीख मन माहीं । पिय बियोगसम दुख जग नाहीं ॥
प्राननाथ करुनायतन, सुंदर सुखद सुजान ।
तुम्ह बिनु रघुकुलकुमुदबिधु, सुरपुर नरकसमान ॥
मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥
सासु ससुर गुरु सजन सुहाई । सुत सुंदर सुसील सुखदाई ॥

जह लगि नाथ नेह अरु नाते । पिय बिनु तियहि तरनि ते ताते ॥
तन धन धाम धरनि पुरराजू । पतिविहीन सब सोकसमाजू ॥
भोग रोग सम भूषन भारू । जमजातना सरिस संसारू ॥
प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं । मो कहं सुखद कतहुं कछु नाहीं ॥
जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी । तैसिय नाथ पुरुष बिनु नारी ॥
नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे । सरदबिमल बिधुबदन निहारे ॥

खग मृग परिजन नगर बन, बलकल बिमल दुकूल ।
नाथ साथ सुरसदनसम, परनसाल सुखमूल ॥

बनदेवी बनदेव उदारा । करिहहिं सासु ससुर सम सारा ॥
कुस किसलय साथरी सुहाई । प्रभु संग मंजु मनोज तुराई ॥
कंद मूल फल अमिय अहारू । अवध सौध सतसरिस पहारू ॥
छिनुछिनु प्रभुपदकमल बिलोकी । रहिहउं मुदित दिवस जिमि कोकी ॥
बनदुख नाथ कहे बहुतेरे । भय बिषाद परिताप घनेरे ॥
प्रभुबियोग लवलेससमाना । सब मिलि होहिं न कृपानिधाना ॥
अस जिय जानि सुजानसिरोमनि । लेइअ संग मोहि छाडिअ जनि ॥
बिनती बहुत करउं का स्वामी । करुनामय उर अंतरजामी ॥

राखिअ अवध जो अवधि लगि, रहत जानि अहि प्रान ।
दीनबंधु सुंदर सुखद, सीलसनेहनिधान ॥

मोहि मग चलत न होइहि हारी । छिनुछिनु चरनसरोज निहारी ॥
सबहि भांति पियसेवा करिहउं । मारग जनित सकल स्रम हरिहउं ॥
पाय पखारि बैठि तरु छाहीं । करिहउं बाउ मुदित मन माहीं ॥
स्रमकन सहित स्याम तनु देखे । कहं दुख समउ प्रानपति पेखे ॥
सम महि तृन तरु पल्लव डासी । पाय पलोटिहि सब निसि दासी ॥
बार बार मृदु मूरति जोही । लागहि तात बयारि न मोही ॥

को प्रभुसंग मोहि चितवनिहारा। सिघबधुहि जिमि ससक सियारा॥
मै सुकुमारि नाथ बनजोगू। तुम्हहि उचित तपु मो कहं भोगू॥
ऐसेउ बचन कठोर सुनि, जौं न हृदय बिलगान।
तौ प्रभु बिषम बियोगदुख, सहिहहि पांवर प्रान॥

ॐ ॐ ॐ

भरतागमन के समय लक्ष्मण का क्रोध और श्रीराम का उन्हें समझाना

लषन लखेउ प्रभु हृदय खँभारू। कहत समय सम नीति बिचारू॥
बिनु पूछे कछु कहउं गोसाई। सेवक समय न ढीठ ढिठाई॥
तुम्ह सर्वज्ञ सिरोमनि स्वामी। आपनि समुझि कहउं अनुगामी॥
नाथ सुहृद सुठि सरल चित, सील सनेह निधान।
सब पर प्रीति प्रतीति जिय, जानिय आपु समान॥
बिषयी जीव पाइ प्रभुताई। मूढ मोहबस होहिं जनाई॥
भरत नीतिरत साधु सजाना। प्रभुपदप्रेम सकल जग जाना॥
तेऊ आजु राजपदु पाई। चले धरम मरयाद मेटाई॥
कुटिल कुबंधु कुअवसर ताकी। जानि राम बनबास एकाकी॥
करि कुमंत्र मन साजि समाजू। आए करइ अकंटक राजू॥
कोटि प्रकार कलपि कुटिलाई। आए दल बटोरि दोउ भाई॥
जौ जिय होति न कपट कुचाली। केहि सुहाति रथ बाजि गजाली॥
भरतहि दोष देइ को जाए। जग बौराइ राजपद पाए॥
ससि गुरुतियगामी नहुष, चढ़ेउ भूमिसुर जान।
लोक बेद तें बिमुख भा, अधम न बेन समान॥
सहसबाहु सुरनाथ त्रिसंकू। केहि न राजमद दीन्ह कलंकू॥

भरत कीन्ह यह उचित उपाऊ। रिपु रिन रंच न राखब काऊ ॥
एक कीन्ह नहिं भरत भलाई। निदरे राम जानि असहाई ॥
समुझि परिहि सोउ आजु बिसेखी। समर सरोष राममुख पेखी ॥
इतना कहत नीतिरस भूला। रनरसबिटप पुलक मिस फूला ॥
प्रभुपद बंदि सीस रज राखी। बोले सत्य सहज बल भाखी ॥
अनुचित नाथ न मानब मोरा। भरत हमहि उपचार न थोरा ॥
कहं लगि सहिय रहिअ मन मारे। नाथ साथ धनु हाथ हमारे ॥
छत्रि जाति रघुकुल जनम, राम अनुज जग जान ॥
लातहुं मारे चढ़िय सिर, नीच को धूरि समान ॥
उठि कर जोरि रजायसु मांगा। मनहुं बीररस सोवत जागा ॥
बांधि जटा सिर कसि करि माथा। साजि सरासन सायक हाथा ॥
आजु रामसेवक जसु लेऊं। भरतहिं समर सिखावन देऊं ॥
राम निरादर कर फल पाई। सोवहु समरसेज दोउ भाई ॥
आइ बना भल सकल समाजू। प्रगट करउं रिस पाछिल आजू ॥
जिमि करिनिकर दलइ मृगराजू। लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू ॥
तैसेहि भरतहि सेनसमेता। सानुज निदरि निपातउं खेता ॥
जौं सहाय कर संकर आई। तौ मारउं रन राम दोहाई ॥
अति सरोष भाषे लषन, लखि सुनि सपथ प्रमान।
सभय लोक सब लोकपति, चाहत भभरि भगान ॥
जग भयमगन गगन भइ बानी। लषन बाहुबल बिपुल बखानी ॥
तात प्रताप प्रभाउ तुम्हारा। को कहि सकइ को जाननिहारा ॥
अनुचित उचित काज कछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सब कोऊ ॥
सहसा करि पाछे पछिताहीं। कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं ॥
सुनि सुरबचन लषन सकुचाने। राम सीय सादर सनमाने ॥

कही तात तुम्ह नीति मुहाई। सब तें कठिन राजपद भाई॥
जों अंचवत मातहिं नृप तेई। नाहि न साधु सभा जेहि सेई॥
सुनहु लषन भल भरत सरीसा। बिधि प्रपंच मह सुना न दीसा॥

भरतहि होइ न राजमद, बिधि हरि हर पद पाइ।
कबहुं कि कांजी सीकरनि, छीरसिंधु बिनसाइ॥

तिमिर तरुन तरनिहि मकु गिलई। गगन मगन मकु मेघहि मिलई॥
गोपद जल बूडहिं घटजोनी। सहज छमा बरु छांडइ छोनी॥
मसकफूक मकु मेरु उड़ाई। होइ न नृपमद भरतहिं भाई॥
लषन तुम्हार सपथ पितु आना। सुचि सुबंधु नहि भरतसमाना॥
सगुन पीर अवगुन जल ताता। मिलइ रचइ परपंच विधाता॥
भरत हंस रबिबंसतडागा। जनमि कीन्ह गुनदोषबिभागा॥
गहि गुन पय तजि अवगुनबारी। निज जस जगत कीन्ह उजियारी॥
कहत भरतगुनसीलसुभाऊ। प्रेमपयोधिमगन रघुराऊ॥

मुनि रघुबर बानी बिबुध, देखि भरत पर हेतु।
सकल सराहत राम सों, प्रभु को कृपानिकेतु॥

जौं न होत जग जनम भरत को। सकल धरमधुरधरनिधरत को॥
कविकुलअगम भरतगुनगाथा। को जानइ तुम्ह बिनु रघुनाथा॥
लषन राम सिय सुनि सुरबानी। अति सुख लहेउ न जाइ बखानी॥

❋ ❋ ❋

अंगद-रावण-संवाद

कह दसकंठ कवन तैं वंदर। मैं रघुवीर दूत दसकंधर॥
मम जनकहि तोहि रही मिताई। तव हित कारन आयउं भाई॥
उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती। सिव बिरंचि पूजेहु बहु भांती॥

बर पायहु कीन्हेउ सब काजा। जीतेहु लोकपाल सब राजा॥
नृप अभिमान मोह बस किंबा। हरि आनिहु सीता जगदम्बा॥
अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा। सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा॥
दसन गहहु तृन कंठ कुठारी। परिजन सहित संग निज नारी॥
सादर जनकसुता करि आगे। एहि विधि चलहु सकल भय त्यागे॥

प्रनतपाल रघुबंसमनि, त्राहि त्राहि अब मोहि।
आरत गिरा सुनत प्रभु, अभय करहिगे तोहि॥

रे कपिपोत न बोलु सँभारी। मूढ़ न जानेहि मोहि सुरारी॥
कहु निज नाम जनक कर भाई। केहि नाते मानिए मिताई॥
अंगद नाम बालि कर बेटा। तासों कबहुं भई ही भेंटा॥
अंगद बचन सुनत सकुचाना। रहा बालि बानर मैं जाना॥
अंगद तहीं बालि कर बालक। उपजेहु बंस-अनल कुलघालक॥
गर्भ न गयउ ब्यर्थ तुम्ह जायहु। निज मुख तापस दूत कहायहु॥
अब कहु कुसल बालि कहं अहई। बिहसि बचन तब अंगद कहई॥
दिन दस गए बालि पहिं जाई। बूझेहु कुसल सखा उर लाई॥
राम विरोध कुसल जसि होई। सो सब तोहि सुनाइहि सोई॥
सुनु सठ भेद होइ मन ताके। श्रीरघुबीर हृदय नहिं जाके॥

हम कुल-घालक सत्य तुम्ह, कुल-पालक दससीस।
अंधउ बधिर न अस कहहिं, नयन कान तव बीस॥

सिव बिरंचि सुर मुनि समुदाई। चाहत जासु चरन सेवकाई॥
तासु दूत होइ हम कुल बोरा। अइसिहुं मति उर बिहरु न तोरा॥
सुनि कठोर बानी कपि केरी। कहत दसानन नयन तरेरी॥
खल तव कठिन बचन सब सहऊं। नीति धर्म मैं जानत अहऊं॥
कह कपि धर्मसीलता तोरी। हमहुं सुनी कृत पर त्रिय चोरी॥

देखी नयन दूत रखवारी। बूड़ि न मरहु धर्मव्रतधारी॥
कान नाक बिनु भगिनि निहारी। छमा कीन्ह तुम धर्म बिचारी॥
धर्मसीलता तव जग जागी। पावा दरसु हमहुँ बड़भागी॥

जनि जल्पसि जड़ जंतु कपि, सठ बिलोकु मम बाहु।
लोकपाल बल बिपुल ससि, ग्रसन हेतु जिमि राहु॥
पुनि नभ सर मम कर निकर, कमलन्हि पर करि बास।
सोभत भयउ मराल इव, संभुसहित कैलास॥

तुम्हरे कटक मांझ सुनु अंगद। मो सन भिरिहि कवन जोधा बद॥
तव प्रभु नारि बिरहँ बलहीना। अनुज तासु दुखदुखी मलीना॥
तुम सुग्रीव कूलद्रुम दोऊ। अनुज हमार भीरु अति सोऊ॥
जामवंत मंत्री अति बूढ़ा। सो कि होइ अब समरारूढ़ा॥
सिल्पिकर्म जानहिं नल नीला। है कपि एक महाबलसीला॥
आवा प्रथम नगरु जेहिं जारा। सुनत बचन कहि बालिकुमारा॥
सत्य बचन कहु निसिचरनाहा। सांचेहुं कीस कीन्ह पुरदाहा॥
रावननगर अल्प कपि दहई। सुनि अस बचन सत्य को कहई॥
जो अति सुभट सराहेहु रावन। सो सुग्रीव केर लघु धावन॥
चलइ बहुत सो बीर न होई। पठवा खबरि लेन हम सोई॥

सत्य नगरु कपि जारेउ, बिनु प्रभुआयसु पाइ।
फिरि न गयउ सुग्रीव पहिं, तेहिं भय रहा लुकाइ॥
सत्य कहेउ दसकंठ सब, मोहि न सुनि कछु कोह।
कोउ न हमरे कटक अस, तो सन लरत जो सोह॥
प्रीति बिरोध समान सन, करिअ नीति असि आहि।
जौं मृगपति बध मेडुकन्हि, भल कि कहइ कोउ ताहि॥

जद्यपि लघुता राम कहं, तोहि बधे बड़ दोष।
तदपि कठिन दसकंठ सुनु, छत्रि जाति कर रोष॥
बक्र उक्ति धनु बचन सर, हृदय दहेउ रिपु कीस।
प्रतिउत्तर संड़सिन्ह मनहुं, काढ़त भट दससीस॥
हंसि बोलेउ दसमौलि तब, कपि कर बड़ गुण एक।
जो प्रतिपालइ तासु हित, करइ उपाय अनेक॥

धन्य कीस जो निज प्रभु–काजा। जहं तहं नाचइ परिहरि लाजा॥
नाचि कूदि करि लोग रिझाई। पति हित करइ धर्म निपुनाई॥
अंगद स्वामिभक्त तव जाती। प्रभुगुन कस न कहसि एहि भांती॥
मैं गुनगाहक परम सुजाना। तव कटु रटनि करउं नहि काना॥
कह कपि तव गुनगाहकताई। सत्य पवनसुत मोहि सुनाई॥
बन बिधंसि सुत बधि पुर राजा। तदपि न तेहि कछु कृत अपकारा॥
सोइ बिचारि तव प्रकृति सुहाई। दसकंधर मैं कीन्ह ढिठाई॥
देखेउं आइ जो कछु कपि भाषा। तुम्हरे लाज न रोष न माषा॥
जौ असि मति पितु खायहु कीसा। कहि अस बचन हंसा दससीसा॥
पितहि खाइ खातेउं पुनि तोही। अबही समुझि परा कछु मोही॥
बालि बिमल जस भाजन जानी। हतउं न तोहि अधम अभिमानी॥
कहु रावन रावन जग केते। मैं निज स्रवन सुने सुनु जेते॥
बलिहि जितन एकु गयउ पताला। राखा बांधि सिसुन्ह हयसाला॥
खेलहिं बालक मारहि जाई। दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई॥
एक बहोरि सहसभुज देखा। धाइ धरा जिमि जंतु बिसेखा॥
कौतुक लागि भवन लइ आवा। सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा॥

एक कहत मोहि सकुच अति, रहा बालि की कांख।
इन्ह महुं रावन तै कवन, सत्य बदहि तजि माख॥

सुनु सठ सोइ रावन बलसीला। हरगिरि जान जासु भुजलीला ॥
जान उमापति जासु सुराई। पूजेउं जेहि सिरसुमन चढ़ाई ॥
सिर सरोज निज करन्हि उतारी। पूजेउं अमित बार त्रिपुरारी ॥
भुजबिक्रम जानहिं दिगपाला। सठ अजहूं जिन्हके उर साला ॥
जानहिं दिग्गज उर कठिनाई। जब जब भिरेउं जाइ बरिआई ॥
जिन्ह के दसन कराल न फूटे। उर लागत मूलक इव टूटे ॥
जासु चलत डोलति इमि धरनी। चढ़त मत्तगज जिमि लघु तरनी।
सोइ रावन जगबिदित प्रतापी। सुनेहि न स्रवन अलीकप्रलापी ॥

तेहि रावन कहं लघु कहसि, नर कर करसि बखान।
रे कपि बर्बर खर्ब खल, अब जाना तव ग्यान ॥

सुनि अंगद सकोप कह बानी। बोलु संभारि अधम अभिमानी ॥
सहस्रबाहुभुजगहन अपारा। दहन अनलसम जासु कुठारा ॥
जासु परसु सागर खरधारा। बूड़े नृप अगनित बहु बारा ॥
तासु गर्ब जेहि देखत भागा। सो नर क्यों दससीस अभागा ॥
राम मनुज कस रे सठ बंगा। धन्वी कामु नदी पुनि गंगा ॥
पसु सुरधेनु कल्पतरु रूखा। अन्न दान अरु रस पीयूखा ॥
बैनतेय खग अहि सहसानन। चिंतामनि पुनि उपल दसानन ॥
सुनु मतिमंद लोक बैकुंठा। लाभ कि रघुपति भगति अकुंठा ॥

सेन सहित तव मान मथि, बन उजारि पुर जारि।
कस रे सठ हनुमान कपि, गयउ जो तव सुत मारि ॥

सुनु रावन परिहरि चतुराई। भजसि न कृपासिंधु रघुराई ॥
जौं खल भएसि राम कर द्रोही। ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही ॥
मूढ़ बृथा जनि मारसि गाला। राम बइर अस होइहि हाला ॥
तव सिरनिकर कपिन्ह के आगे। परिहहिं धरनि रामसर लागे ॥

ते तव सिर कंदुक सम नाना । खेलिहहि भालु कीस चौगाना ॥
जबहिं समर कोपिहिं रघुनायक । छुटिहहिं अतिकराल बहु सायक ॥
तब कि चलिहि अस गाल तुम्हारा । अस बिचारि भजु राम उदारा ॥
सुनत बचन रावन परजरा । जरत महानल जनु घृत परा ॥

कुंभकरन अस बंधु मम, सुत प्रसिद्ध सक्रारि ।
मोर पराक्रम नहिं सुनेहि, जितेउं चराचर झारि ॥

सठ साखामृग जोरि सहाई । बांधा सिंधु इहइ प्रभुताई ॥
नाघहिं खग अनेक बारीसा । सूर न होहिं ते सुनु सब कीसा ॥
मम भुजसागरबलजलपूरा । जहं बूड़े बहु सुर नर सूरा ॥
बीस पयोधि अगाध अपारा । को अस बीर जो पाइहि पारा ॥
दिगपालन्ह मैं नीर भरावा । भूप सुजस खल मोहि सुनावा ॥
जौं पै समर सुभट तव नाथा । पुनि पुनि कहसि जासु गुनगाथा ॥
तौ बसीठ पठवत केहि काजा । रिपु सन प्रीति करत नहि लाजा ॥
हरगिरिमथन निरखु मम बाहू । पुनि सठ कपि निज प्रभुहि सराहू ॥

सूर कवन रावन सरिस, स्वकर काटि जेहि सीस ।
हुने अनल अति हरष बहु, बार साखि गौरीस ॥

जरत बिलोकेउं जबहिं कपाला । बिधि के लिखे अंक निज भाला ॥
नर के कर आपन बध बाची । हसेउं जानि बिधिगिरा असांची ॥
सोउ मन समुझि त्रास नहिं मोरे । लिखा बिरंचि जरठ मति भोरे ॥
आन बीर बल सठ मम आगे । पुनि पुनि कहसि लाज पति त्यागे ॥
कह अंगद सलज्ज जग माहीं । रावन तोहि समान कोउ नाहीं ॥
लाजवंत तव सहज सुभाऊ । निज मुख निज गुन कहसि न काऊ ॥
सिर अरु सैल कथा चित रही । ताते बार बीस तैं कही ॥
सो भुजबल राखेहु उर घाली । जीतेहु सहसबाहु बलि बाली ॥

सुनु मतिमंद देहि अब पूरा। काटे सीस कि होइअ सूरा॥
इंद्रजालि कहुं कहिअ न बीरा। काटइ निज कर सकल सरीरा॥
जरहिं पतंग मोह बस, भार बहहिं खरबृंद।
ते नहिं सूर कहावहिं, समुझि देखु मतिमंद॥
अब जनि बतबढ़ाव खल करही। सुनु मम बचन मान परिहरही॥
दससुख मैं न बसीठी आयउं। अस बिचारि रघुबीर पठायउं॥
बार बार असि कहेउ कृपाला। नहिं गजारि जसु बधे सृगाला॥
मन महुं समुझि बचन प्रभु केरे। सहेउं कठोर बचन खल तेरे॥
नाहि त करि मुखभंजन तोरा। लइ जातेउं सीतहि बरजोरा॥
जानेउं तव बल अधम सुरारी। सूनें हरि आनिहि परनारी॥
तैं निसिचरपति गर्ब बहूता। मैं रघुपतिसेवक कर दूता॥
जौं न रामअपमानहिं डरऊं। तोहि देखत अस कौतुक करऊं॥
तोहि पटकि महि सेन हति, चौपट करि तव गाउं।
तव जुबतिन्ह समेत सठ, जनकसुतहि लै जाऊं॥
जौं अस करउं तदपि न बड़ाई। मुएहि बधे नहिं कछु मनुसाई॥
कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा। अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा॥
सदा रोगबस संतत क्रोधी। बिष्णुबिमुख स्रुतिसंतबिरोधी॥
तनुपोषक निंदक अघखानी। जीवत सव सम चौदह प्रानी॥
अस बिचारि खल बधउं न तोही। अब जनि रिस उपजावसि मोही॥
सुनि सकोप कह निसिचरनाथा। अधर दसन दसि मीजत हाथा॥
रे कपि अधम मरन अब चहसी। छोटे बदन बात बड़ि कहसी॥
कटु जल्पसि जड़ कपि बल जाके। बल प्रताप बुधि तेज न ताके॥
अगुन अमान बिचारि तेहि, दीन्ह पिता बनवास।
सो दुख अरु जुबती बिरह, पुनि निसदिन मम त्रास॥

जिन्ह के बल कर गर्ब तोहि, अइसे मनुज अनेक।
खाहि निसाचर दिवस निसि, मूढ़ समुझु तजि टेक ।।
जब तेहि कीन्ह राम कै निंदा। क्रोधवंत तब भयउ कपिंदा ।।
हरिहरनिंदा सुनइ जो काना। होइ पाप गोघातसमाना ।।
कटकटान कपिकुंजर भारी। दुहु भुजदंड तमकि महि मारी ।।
डोलत धरनि सभासद खसे। चले भाजि भयमारुतग्रसे ।।
गिरत संभारि उठा दसकंधर। भूतल परे मुकुट अति सुंदर ।।
कछु तेहि लेइ निज सिरन्हि संवारे। कछु अंगद प्रभु पास पबारे ।।
आवत मुकुट देखि कपि भागे। दिनही लूक परन बिधि लागे ।।
की रावन करि कोप चलाए। कुलिस चारि आवत अति धाए ।।
कह प्रभु हंसि जनि हृदय डेराहू। लूक न असनि केतु नहि राहू ।।
ए किरीट दसकंधर केरे। आवत बालितनय के प्रेरे ।।
तरकि पवनसुत कर गहे, आनि धरे प्रभु पास।
कौतुक देखहि भालु कपि, दिनकरसरिस प्रकास ।।
उहा सकोप दसानन, सब सन कहत रिसाइ।
धरहु कपिहि धरि मारहु, सुनि अंगद मुसुकाइ ।।
एहि बिधि बेगि सुभट सब धावहु। खाहु भालु कपि जह जहं पावहु ।।
मरकटहीन करहु महि जाई। जिअत धरहु तापस दोउ भाई ।।
पुनि सकोप बोलेउ जुबराजा। गाल बजावत तोहि न लाजा ।।
मरु गर काटि निलज कुलघाती। बल बिलोकि बिहरति नहि छाती ।।
रे त्रियचोर कुमारगगामी। खल मलरासि मंदमति कामी ।।
संनिपात जल्पसि दुर्बादा। भएसि कालबस खल मनुजादा ।।
याकर फलु पावहुगे आगे। बानरभालु चपेटन्हि लागे ।।
राम मनुज बोलत असि बानी। गिरहि न तव रसना अभिमानी ।।

गिरिर्हाहि रसना संसय नाहीं । सिरन्हि समेत समर महिं माही ।।
सो०—सो नर क्यों दसकंध, बालि बध्यो जेहिं एक सर ।
बीसहुँ लोचन अंध, धिग तव जन्म कुजाति जड़ ।।
तव सोनित की प्यास, तृषित रामसायकनिकर ।
तजउँ तोहि तेहि त्रास, कटुजल्पक निसिचर अधम ।।
मै तव दसन तोरिबे लायक । आयसु मोहि न दीन्ह रघुनायक ।।
असि रिसि होति दसउ मुख तोरउ । लंका गहि समुद्र महं बोरउं ।।
गूलरिफलसमान तव लंका । बसहु मध्य तुम्ह जंतु असका ।।
मै बानर फल खात न बारा । आयसु दीन्ह न राम उदारा ।।
जुगुति सुनत रावन मुसुकाई । मूढ़ सिखिहि कहं बहुत झुठाई ।।
बालि न कबहु गाल अस मारा । मिलि तपसिन्ह तें भएसि लबारा ।।
साचेहुं मै लबार भुजबीहा । जौ न उपारिउं तव दस जीहा ।।
रामप्रताप सुमिरि कपि कोपा । सभा मांझ पन करि पद रोपा ।।
जौ मम चरन सकसि सठ टारी । फिरहिं रामु सीता मैं हारी ।।
सुनहु सुभट सब कह दससीसा । पद गहि धरनि पछारहु कीसा ।।
इंद्रजीत आदिक बलवाना । हरपि उठे जहं तहं भट नाना ।।
झपटहि करि बल विपुल उपाई । पद न टरइ बैठहि सिरु नाई ।।
पुनि उठि झपटहि सुरआराती । टरइ न कीसचरन उहि भाती ।।
पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी । मोहबिटप नहि सकहिं उपारी ।।
कोटिन्ह मेघनादसम, सुभट उठे हरषाइ ।
झपटहि टरइ न कपिचरन, पुनि बैठहि सिर नाइ ।।
भूमि न छाँडत कपिचरन, देखत रिपुमद भाग ।
कोटि विघ्न ते संत कर, मन जिमि नीति न त्याग ।।
कपिबल देखि सकल हिय हारे । उठा आपु कपि के परचारे ।।

गहत चरन कह बालिकुमारा। मम पद गहे न तोर उबारा॥
गहसि न रामचरन सठ जाई। सुनत फिरा मन अति सकुचाई॥
भयउ तेजहत श्री सब गई। मध्यदिवस जिमि ससि सोहई॥
सिहासन बैठेउ सिर नाई। मानहुं संपति सकल गंवाई॥
जगदातमा प्रानपति रामा। तासु विमुख किमि लह बिस्रामा॥
उमा राम कर भृकुटि बिलासा। होइ बिस्व पुनि पावइ नासा॥
तृन ते कुलिस कुलिस तृन करई। तासु दूतपन कहु किमि टरई॥
पुनि कपि कही नीति विधि नाना। मान न ताहि कालु निअराना॥
रिपुमद मथि प्रभु सुजसु सुनायउ। यह कहि चलेउ बालिनृपजायउ॥
हतउं न खेत खेलाइ खेलाई। तोहि अबहि का करउं बड़ाई॥
प्रथमहि तासु तनय कपि मारा। सो सुनि रावन भयउ दुखारा॥
जातुधान अंगदपन देखी। भयब्याकुल सब भए बिसेखी॥
रिपुबल धरषि हरषि कपि, बालितनय बलपुंज।
पुलक सरीर नयन जल, गहे राम पद कंज॥

दोहावली

राम बाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानमय, तुलसी सुर तरु तोर॥
परम पुरुख पर--धाम बर, जापर अपर न आन।
तुलसी सो समुझत सुनत, राम सोइ निरबान॥
सकल सुखद गुन जासु सो, राम कामना-हीन।
सकल–काम–प्रद सरब–हित, तुलसी कहहि प्रवीन॥
बुद्धि–विनय–गति–हीन सिसु, सुपथ कुपथ गत–ज्ञान।

जननि जनक तेहि किमि तजहि, तुलसी सरिस अजान ॥
अहि–रसना थन–धेनु रस, गनपति–द्विज गुरुवार ।
माधव सित सिय–जनम–तिथि, सतसैया अवतार ॥
बर मराल मानस तजै, चंद सीत रवि–घाम ।
मोह मदादिक कै तजै, तुलसी तजै न राम ॥
आसन दृढ़ आहार दृढ़, सुमति ज्ञान दृढ़ होय ।
तुलसी बिना उपासना, बिन दुलहे की जोय ॥
राम–नाम–तरु–मूल रस, आठ पात फल एक ।
जग लसत सुभ चारि जग, बरनत निगम अनेक ॥
राम–काम–तरु परिहरत, सेवत कलि–तरु ठूठ ।
स्वारथ परमारथ चहत, सकल मनोरथ झूठ ॥
तुलसी केवल काम–तरु, राम-चरित आराम ।
निसिचर कलि-कर निहत तरु, मोहि कहत बिधि बाम ॥
जहा राम तहं काम नहि, जहा काम नहि राम ।
तुलसी कबहूं होत नहि, रवि रजनी इक ठाम ॥
राम बिटप तरु बिपद बर, महिमा अगम अपार ।
जा कहं जहं लगि पहुंच है, ता कह तहं लगि डार ॥
स्वामी होनो सहज है, दुरलभ होनो दास ।
गाडर लाए ऊन कों, लाग्यो चरन कपास ॥
सब सगी बाधक भए, साधक भए न कोय ।
तुलसी राम कृपालु ते, भली होय सो होय ॥
स्वामी सीतानाथ जी, तुम लगि मेरी दौर ।
तुलसी काग जहाज कहं, सूझत और न ठौर ॥
लगन मुहूरत जोग बल, तुलसी गनत न काहि ।

राम भए जेहि दाहिने, सबै दाहिने ताहि ॥
साधन सांसति सब सहत, सुमन सुखद फल लाहु ।
तुलसी चातक जलद की, रीझ बूझ बुध काहु ॥
डोलत बिपुल बिहंग वन, पियत पोखरिन बारि ।
सुजस धवल चातक नवल, तोर भुवन दस--चारि ॥
ऊची जाति पपीहरा, पियत न नीचो नीर ।
कै जांचै घनश्याम सों, कै दुख सहै शरीर ॥
ह्वै अधीन जांचै नहीं, सीस नाइ नहि लेइ ।
ऐसे मानी मागनिहिं, को बारिद बिनु देइ ॥
तुलसी चातक देत सिख, सुतहि बार ही बार ।
तात न तरपन कीजियो, बिना वारिधर-धार ॥
खेलत बालक ब्याल संग, मेलत पावक हाथ ।
तुलसी सिसु पितु मातु इव, राखत सिय-रघुनाथ ॥
घर कीन्हे घर होत है, घर छोड़े घर जाय ।
तुलसी घर वन बीच ही, रहहु प्रेम-पुर छाय ॥
पग अतर मग अगम जल, जल--निधि जल संचार ।
तुलसी करिया करम बस, बूड़त तरत न बार ॥
तुलसी हरि--अपमान तें, होत अकाज समाज ।
राज करत रज मिल गए, सदल सकल कुरु-राज ॥
तुलसी अपने राम कहं, भजन करहु निहसंक ।
आदि अंत निरवाहिबो, जैसे नव को अंक ॥
राम कामना--हीन पुनि, सकल--काम दातार ।
याही तें परमातमा, अव्यय अमल उदार ॥
एक सृष्टि यों जाहि विधि, प्रगट तीन कर भेद ।

सात्विक राजसि तामसहिं, जानत है बुध बेद ॥
होनहार सब आप तें, बृथा सोच करि जौन ।
कंज भृंग तुलसी मृगन, कहो उमेठत कौन ॥
सुख चाहत सुत्र में बसत, है सुख-रूप बिसाल ।
सतत जा बिधि मान-सर, कबहुं न तजत मराल ॥
सूर जथा रन जीति कै, पलटि आव चलि गेह ।
तिमि गति जानहु राम की, तुलसी संत सनेह ॥
नाना बिधि की कलपना, नाना बिधि को सोग ।
सूछम अउ असथूल तन, कबहुं तजत नहिं रोग ॥
तुलसी संत सुअम्ब-तरु, फूलि फरहिं पर-हेतु ।
ये इत ते पाहन हनैं, वे उत ते फल देतु ॥
सुख दुख दोनों एक सम, संतन के मन माहिं ।
मेरु उदधि गत मुकुर जिमि, भार भीजबो नाहिं ॥
जो करता है करम को, सो भोगत नहि आन ।
बोअनहार लुनिहै सोई, देनी लहइ निदान ॥
रज अप अनल अनिल नभ, जड़ जानत सब कोइ ।
यह चैतन्य सदा समुझु, कारजरत दुख होइ ॥
होत हरख का पाय धन, बिपति तजे का धाम ।
दुखदा कुमति कुनारितर, अति सुखदायक राम ॥
तन सुखाइ पंजर करै, धरै रैन दिन ध्यान ।
तुलसी मिटै न बासना, बिना बिचारे ज्ञान ॥
यह तन अनुपम अयन बर, उपमारहित सुचैन ।
समुझरहित रटि पचि मरै, करत सकल अध्यैन ॥
कारन चार बिचार बर, बरन न अपर न आन ।

निमि तुलसी करता-रहित, करम करै कहु कोइ ॥
मृद कारन करता-सहित, कारज किए अनेक ।
जौ करता जानै नहीं, तौ कहु कवन विवेक ॥
स्वरनकार करता कनक, कारन प्रगट लखाय ।
अलंकार कारज सुखद, गुन सोभा सरसाय ॥
सब देखत मृद्र भाजनहि, कोउ कोउ लखत कुलाल ।
जाके मन के रूप बहु, भाजन बिलघु बिसाल ॥
एकै रूप कुलाल को, माटी एक अनूप ।
भाजन अमित बिसाल लघु, तो करता मन रूप ॥
कारज-रत करता समुझि, सुख दुख भोगत सोइ ।
तुलसी स्री गुरुदेव बिन, दुखप्रद दूरि न होइ ॥
कारन सबद सरूप है, सय्या गतभव जान ।
करता सुरगुरु ते सुखद, तुलसी अपर न आन ॥
बिनु काटे तरु-बर जथा, मिटै कौन बिधि छाहिं ।
त्यो तुलसी उपदेस बिनु, निहसंसय कोउ नाहिं ॥
ब्राह्मन बर बिद्या बिनय, सुरुति बिबेक निधान ।
पथ-रति अनय-अतीत मति, सहित दया स्रुति मान ॥
बिनय छत्र सिर जासु के, प्रतिपद पर-उपकार ।
तुलसी सो छत्री सही, रहित सकल ब्यभिचार ॥
कोटिन साधन के किए, अंतर मल नहिं जाइ ।
तुलसी जौ लग सकल गुन, सहित न करम नसाइ ॥
जोइ प्रान सो देह है, प्रान देह नहिं दोय ।
तुलसी जो लखि पाइ है, सो निरदय नहिं होय ॥
तुलसी तैं झूठो भयो, करि झूठे संग प्रीति ।

है सांचो है सांच जब, गहै राम की रीति ॥
कहत काल किल सकल बध, ताकर यह व्यवहार ।
उतपति थिति लय होत है, सकल नाम अनुहार ॥
सालक पालक सम बिसम, भरम मगन गति ज्ञान ।
अट घट लट नट नादि जहं, तुलसी रहित न जान ॥
करत चातुरी मोह-बस, लखत न निज हित-हान ।
सुक मरकट इव गहत हठ, तुलसी परम सुजान ॥
प्रेम बैर अरु पुण्य अघ, जस अपजस जय हान ।
बात बीज इन सबन को, तुलसी कहहिं सुजान ॥
बचन-बिचार-रत नय-रहित, बिधि हिंसा अति लीन ।
तुलसी जग मे बिदित बर, नरक निसेनी तीन ॥
तिनहि पढ़े तिनहीं सुने, तिनहिं सुमति परगास ।
जिन आसा पीछे करी, गहि अवलंब निरास ॥
तब लगि जोगी जगत-गुरु, जब लगि रहै निरास ।
जब आसा मन में जगी, जग-गुरु जोगी दास ॥
अंमुअन पथिक निरास तें, तट भुइ सजल सरूप ।
तुलसी किन वंचे नही, इन मरुथल के कूप ॥
माली-भानु-कृसानु-सम, नीति-निपुन महिपाल ।
प्रजा भाग बस होंहिगे, कबहिं कबहिं कलि-काल ॥
होहिं बड़े लघु समय सह, तौ लघु सकहिं न काढ़ि ।
चंद दूबरो कूबरो, तऊ नखत तें बाढ़ि ॥
कूप खनहि मंदिर जरत, लावहिं धारि बबूर ।
बोए लव चह समय बिनु, कुमति-सिरोमनि कूर ॥
अपजस जोग कि जानकी, मनि चोरी की कान्ह ।

तुलसी लोग रिझाइबो, करसि कातिबो नान्ह ॥
मांगि मधुकरी खात जे, सोवत पांय पसारि ।
पाप प्रतिष्ठा वढ़ि परी, ताते बाढ़ी रारि ॥
कै जुझिबो कै बूझिबो, दान कि काय कलेस ।
चारि चारु परलोक पथ, जथा जोग उपदेस ॥
बिनु प्रपच बरु भीख भलि, नहिं फल किए कलेस ।
बावन बलि सो लीन्ह छलि, दीन्ह सबहि उपदेस ॥
खल उपकार बिकार फल, तुलसी जान जहान ।
मेढ़क मर्कट बनिक बक, कथा सत्य उपखान ॥
जो मूरख उपदेस के, होते जोग जहान ।
दुरजोधन कह बोधि किन, आए स्याम सुजान ॥
हित पर बढत बिरोध जब, अनहित पर अनुराग ।
राम-बिमुख बिधि बाम गति, सगुन अघाय अभाग ॥
रीझ आपनी बूझ पर, खीझ बिचार-बिहीन ।
ते उपदेस न मानही, मोह-महोदधि-मीन ॥
समुझि सुनीति कुनीति-रत, जागत ही रह सोइ ।
उपदेसिबो जगाइबो, तुलसी उचित न होइ ॥
गोंड गवार नृपाल कलि, जनम महा-महिपाल ।
साम न दान न भेद कलि, केवल दड कराल ॥
काल तोपची तुपक महि, दारू अनय कराल ।
पाप पलीता कठिन गुरु, गोला पुहुमी-पाल ॥
सत्रु सयाने सलिल इव, राख सीस रिपु नाव ।
बूड़त लखि डगमगत अति, चपरि चहूं दिसि धाव ॥

—:०:—

मध्यम युग
सगुणभक्ति धारा
कृष्णभक्ति शाखा

विद्यापति

नीतिविषयक सूक्तियाँ

अपना काज कओन नहिं बंध, केन करए नित पति अनुबंध ।
अपन अपन हित सब केओ चाह, से सुपुरुष जे पर निरबाह ।।
साजनि ताक जिवन थिक सार, जे मन दए कर पर उपकार ।
आरति अरतल आबए पास, अछइते बथु नहिं करिअ उदास ।।
से पुनु अनतहुं गेले पाब, अपना मन पए रह पछताब ।
भनहि विद्यापति दैन न भाख, बड़ अनुरोध बड़े पए राख ।।
थिर नहिं जउवन थिर नहिं देह, थिर नहिं रहए बालमु नेह ।
थिर जनु जानह ई संसार, एक पए थिर रह पर उपकार ।।
एहन अवस्था ई व्यवहार, पर पीड़ाए जिवन थिक भार ।
भनहि विद्यापति सखि कह सार, से जीवन जे पर उपकार ।।
हठ न करिअ कान्ह कर मोहि पार, सब तहं बड़ थिक पर उपकार ।
अधिपक अनुचित किछुनि गोहारि, बड़ाक कहिनी बड़ दुर जाय ।।
साहसे साहिए असाधे, तिल एक कठिन पहिल अपराधे ।
एते मने गुनि नाहिं तरास, मधु ने आवे मधुकर पास ।।
पाइअ ठाम वइसले नहिं नीधि, जे कर साहस ता हो सीधि ।
प्रथम वयस लेस न पुरब आस, न पुरे अलप धने दरिद पियास ।
माधव मुकुलित मालति फूल, ताहे नहिं भुखल भमर अनुकूल ।
अनुचित काज भल नहिं परिणाम, साहस न करिय संशय ठाम ।।
भनइ विद्यापति नागर कान, मातल करि नहिं अंकुश मान ।
गेल दीन पुनि पलटि न आव, अवसर बहला रह पछताव ।।

कएल उचित भेल अनुचित, मने मने पछतावे ।
आबे कि करब सिर पए धूनब, गेला दिन नहिं आबे ॥
चलचल सुदरि सुभ कर काज, ततमत करइत नहि हो काज ।
गुरुजन परिजन डर कर दूर, बिनु साहस सिधि आस न पूर ॥
विनु जपले सिधि केओ नहिं पाव,विनु गेले घर निधि नहिं आव ।
दुती दंपती दुअओ अबोध, काज आलस दुहु परम विरोध ॥
तोहे जलधर सहजहिं जलराज, हमे चातकि जल बिंदुक काज ।
जल दए जलद जीव मोर राख, अवसर देले साहस हो लाख ॥
तनु देअ चांद राहुकर पान, कबहुं कला नहिं होअ मलान ।
वैभव गेले रहए विवेक, तइसन पुरुष लाख थिक एक ॥
जदि तोहें बरिषब समय उपेखि, की फल पाओव दिवसदिप लेखि।
भनहि विद्यापति असमय बानी, मुरुछल जीवए चुरुएक पानी ॥
मधुर वचन हे सब तहं सार, विद्यापति भन कवि कंठहार ।
तेखन सिनेह जे थिर उत्पात, के नहिं बस हो मधुर अलाप ॥
जे छल से नहिं रहले भाव, बोलिल बोल पलटि नहिं आव ।
वचनक दोषे प्रेम टुटि गेल, वचनक कौसअले की नहि होए ॥
भन विद्यापति निअ अबसाद, वचनक कौसलए जितिअ वाद ।
पुछिअोन पुछलककेओ बैसलाह जहां, निरधन आदर के कर कहां॥
धनिकक आदर सब तहं होए, निरधन बापुरे पुछइ न कोए ।
वैभव गेले भलाहु मंद भास, अपन पराभव पर उपहास ॥
केओ सुखे सुतये केओ दुखे जाग, अपनअपन थिक भिनभिन भाग।
भनइ विद्यापति चाहथिजे विधि करथि से से लीला ॥
अपन करम अपने पए भुजिए जओ जन्मांतर होई ।
काहुक विपद काहुक संपद नाना गति संसार लो ॥

राधा का दिव्य क्रंदन

ए सखि हमर दुखक नहि ओर !
ई भर बादर माह भादर शून्य मंदिर मोर ॥
झपि घन गरजनि सततनि भुवन भरि बरिखंतिया ।
कंत पाहुन काम दारुण सघने खरशर हंतिया ॥
कुलिश कत शत पात मोदित मयुर नाचत मातिया ।
मत्त दादुरि डाके डाहुकि फाटि जातय छातिया ॥
तिमिर दिग भरि घोर यामिनि अथिर बिजुरिक पांतिया ।
विद्यापति कह कैसे गमाओब हरि बिना दिन रातिया ॥

राधा की आकुलता

सजनी के कह आओब मधाई ।
बिरह पयोधि पार पुन पायोब, सञु मन नहि पतियाई ॥
एखन-तखन करि दिवस गमाओल, दिवस दिवस करि मासा ।
मास मास करि बरस गमाओल, छोड़ लूं जीवनक आशा ॥
बरस बरस कए समय गमाओल, खोय लूं ए तनु आसे ।

युग अवसान में भी राधा का प्रणय

सखि हे कि कहब किछु नहिं फूरे ।
सपन कि परतेक कहय न पारिय किय नियर किय दूरे ॥
तडित लता तले जलद समारल आतरे सुरसरिधारा ।
तरल तिमिर शशि सूर गरासल चौदिश खसि पड़ु तारा ॥
अम्बर खसल धराधर उलटल धरणी डगमग डोले ।
खरतर बेग समीरण संचरू चंचरि-गण करु रोले ॥
प्रणय पयोधि जले तन झांपल ई नहि युग अवसाने ।

के विपरीत कथा पतियाएत कवि विद्यापति भाने ॥

राधा का आत्मिक अनुभव

सखि कि पुछसि अनुभव मोय ?
से हो पिरित अनुराग बखान इत तिल तिल नूतन होइ ॥
जनम अवधि हम रूप निहारब नयन न तिरपित भेल ।
से हो मधुर बोल स्रवनहिं सूनल स्रुति-पथ परस न भेल ॥
कत मधु जामिनि रभस से गयाओल न बुझल कइ सन केल ।
लाख लाख जुग हिअ हिअ राखल तइओ हिय जुड़न न गेल ॥
कत विदगध जन रस अनुमोदई अनुभव काहु न पेख ।
विद्यापति कह प्राण जुड़ाइत लाख वे न मिलल एक ॥

सूरदास

बाल-लीला

घुटुरुन चलत स्याम मनिआंगन, मात पिता दोऊ देखत री।
कबहुंक किलकिलात मुख हेरत, कबहुं जननी मुख पेखत री॥
लटकन लटकत ललित भाल पर, काजर बिंदु भ्रुव ऊपर री।
यह शोभा नयननि देखे जो, नहिं उपमा तिहुं भू पर री॥
कबहुंक दौरि घुटरुवनि लटकत, गिरत उठत फिरि धावत री।
इत ते नंद बुलाय लेत हैं, उत ते जननि बुलावति री॥
दंपति होड करत आपस में, स्याम खिलौना कीन्हों री।
सूरदास प्रभु ब्रह्म सनातन, सुतहित करि दोउ लीन्हों री॥

गहे अंगुरिया तात की नंद चलन सिखावत।
अरबराइ गिरि परत हैं कर टेकि उठावत॥
बार बार बकि स्याम सों कछु बोल बकावत।
दुहुंधा द्वै दंतुली भईं अति मुख छवि पावत॥
कबहुं कान्ह कर छांड़ि नंद पग द्वैक रिंगावत।
कबहुं धरणि पर बैठिकै मन में कछु गावत॥
कबहुं उलटि चलें धाम को घुटुरन करि धावत।
'सूर' स्याम मुख देखि महार मन हर्ष बढ़ावत॥

कहाँ लगि बरनों सुंदरताइ ?

खेवत कुंवर कनक आंगन में, नैन निरखि छवि छाइ।
कुलहि लसत सिर स्याम सुभग अति, बहु बिधि रंग बनाइ॥
मानहु नव घन ऊपर राजत, मघवा धनुष चढ़ाइ।
अति सुदेश मृदु हरत चिकुर, मनमोहन मुख बगराइ॥

मानहु मंजुल प्रगट कंज पर, अलि अवली फिरि आइ ।
नील श्वेत पर पीत लाल मणि, लटकत भाल हराइ ॥
शनि गुरु असुर देवगुरु मिलि, मानौं भौम सहित समुदाइ ।
दूधदंत द्युति कहि न जाय अति, अद्भुत एक उपमाइ ॥
किलकत हंसत दुरत प्रगटत, मानों घन मे विज्जु छटाइ ।
खंडित वचन देत पूरन सुख, अलप अलप जलपाइ ॥
घुटुरुन चलत रेणु तन मंडित, सूरदास बलि जाइ ॥

गहे अंगुरिया सुतन की, नंद चलन सिखावत ॥
अरबराय गिरि परत हैं, कर टेकि उठावत ।
बार बार बकि स्याम सौं, कछु बोल बुलावत ॥
दुहुं थां द्वै दंतुली भई, अति मुख छवि पावत ।
कबहुं कान्ह कर छांड़ि नंद, पग द्वैक रिंगावत ॥
कबहुंक उलटि चले धाम को, घुटुरुन करि धावत ।
सूर स्याम मुखदेखि महरि मन हरष बढ़ावत ॥

मैया कब बढ़िहै मेरि चोटी ।
किती बेर मोहि दूध पिवत भई, यह अजहूं है छोटी ।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों, ह्वैहै लांबी मोटी ॥
काढ़त गुहत न्हवावत जै हैं, नागिनि सी भुइं लोटी ।
काचो दूध पिवावत मोहन, देती माखन रोटी ॥
सूर मैया भाहि रिस रिझ्यो, हरि हलधर की जोटी ॥

कजरी को पय पियहु लाल तेरी चोटी बढ़ै ।
सब लरिकन में सुन सुंदर सुत तो श्री अधिक चढ़ै ॥

जेंमे देखि और ब्रज बालक त्यौं बल वैस बढै।
कंस केशि बक वैरिन के उर अनुदिन अनल उठै॥
यह सुनिकै हरि पीवन लागे त्यों त्यों लियो लटै।
अचवन पै तातो जब लाग्यो रोवत जीभ उठै॥
पुनि पीवत ही कच टकटोवे झूठे जननि रटै।
सूर निरखि मुख हंसत यशोदा सो सुख उर न कढै॥

कहन लगे मोहन मैया मैया।
पिता नंद सो बाबा बाबा अरु हलधर सों भैया॥
ऊंचे चढ़ि चढ़ि कहत यशोदा लै लै नाम कन्हैया।
दूरि कहूं जिन जाहु लला रे! मारेगी काहु की गैया॥
गोपी ग्वाल करत कौतूहल घर घर लेत बधैया।
मनिखंभन प्रतिबिम्ब बिलोकत पुनि नवनीत कुंवर हरि पइया॥
नंद यशोदा जी के उर ते इह छबि अनत न जइया।
सूरदास प्रभु तुमरे दरस को चरणन की बलि गइया॥

बार बार यशुमति सुत बोधति, आउ चंद! तोहि लाल बुलावै।
मधु मेवा पकवान मिठाई आपु न खैहै तोहि खवावै॥
हाथहि पर तोहि लीने खेलै नहि धरणी बैठावै।
जल-भाजन कर लै जु उठावति याही मे तू तनु धरि आवै॥
जलपुट आनि धरणि पर राख्यो गहि आन्यो वह चंद दिखावै।
सूरदास प्रभु हंसि मुसकाने बार बार दोऊ कर नावै॥

प्रात समय उठि, सोवत हरि को वदन उघार्‌यो नंद।
हरि न सकत देखन को आतुर नैन निशा के द्वंद॥

स्वच्छ सेज में ते मुख निकसत गयो तिमिर मिटि मंद ।
मानौं मथि सुर सिंधु फेन फटि दरस दिखाई चंद ॥
धायो चतुर चकोर 'सूर' मुनि सब सखि सखा सुछंद ।
रहि न सुध शरीर धीरमति पिवत किरन मकरंद ॥

सखा कहत हैं स्याम खिसाने ॥
आपुहि आप ललकि भये ठाढ़े अब तुम कहा रिसाने ॥
बीचहि बोल उठे हलधर तब इनके माय न बाप ।
हार जीत कछु नेक न जानत लरिकन लावत पाप ॥
आपुन हारि सखा सौं झगरत यह कहि दिये पठाइ ।
सूर स्याम उठि चले रोइकै जननी पूंछन धाइ ॥

खेलन अब मेरी जात बलैया ।
जबहि मोहिं देखत लरिकन संग तबहि खिझत बल भैया ॥
मोसों कहत तात वसुदेव को देवकि तेरी मैया ।
ऐसे हि कहि स बमोहिं खिझावत तब उठि चलौ खिसैया ॥
पाछे नंद सुनत हैं ठाढ़े हंसत हंसत उर लैया ।
सूर नद बलरामहि झिरक्यो सुनि मन हरस कन्हैया ॥

जेवत कान्ह नंद इक ठौरे ।
कछुक खात लपटात दुहूं कर बालक है अति भोरे ॥
बड़ो कौर मेलत मुख भीतर मिरच दसन टकटोरे ।
तीक्षण लगी नयन भरि आये रोवत बाहर दौरे ॥
फूंकत वदन रोहिणी ठाढ़ी लिये लगाइ अंकोरे ।
सूर स्याम को मधुर कौर दै कीन्हे तात निहोरे ॥

तेरो लाल मेरो माखन खायो।
दुपहर दिवस जनि घर सूनी, ढूढि ढंढोरि आप ही आयो ॥
खोल किवार सून मंदिर में दूध दही सब सखन खवायो।
सीके काढि खाट चढि मोहन कछु खायो कछु लै ढरकायो ॥
दिन प्रति हानि होत गोरस की यह ढोटा कौने रंग लायो।
सूरदास कहती ब्रजनारी पूत अनोखो जायो ॥

कन्हैया ! तू नहिं मोहि डरात।
षटरस धरे छाडि कत पर-घर चोरी करि करि खात ॥
बकति बकति तोसों पचि हारी नेकहु लाज न आई।
ब्रज-परगन-सरदार महर तू ताकी करत नन्हाई ॥
पूत सपूत भयौ कुल मेरो अब मैं जानी बात।
सूर स्याम अब लौ तोति बगस्यो तेरी जानी घात ॥

मैया ! मैं नाही दधि खायो।
ख्याल परे यह सखा सबै मिलि मेरे मुख लपटायो ॥
देखि तुही सीके पर भाजन ऊंचे करि लटकायो।
तुही निरख नान्हे कर अपने मैं कैसे करि पायो ॥
मुख दधि पोंछि कहत नँदनंदन दोना पीठि दुरायो।
डारि सांठि मुसकाइ यशोदा सुतहीं कंठ लगायो ॥
बाल विनोद मोह मन मोह्यो भक्ति प्रताप दिखायो।
सूरदास प्रभु यशुमति के सुख शिव विरंचि बौरायो ॥

खेलनि दूरि जात कत कान्हा।
आज सुन्यों मैं हाऊ आओ, तुम नहिं जानत नान्हा ॥

यक लरिका अबही भजि आयो, रोवत देख्यो नाहिं ।
कान तोरि वह लेत सबनि को, लरिका जानत नाहिं ॥
चलौ न बेगि सबेरे जैए, भाजि आपने धाम ।
सूर श्याम यह बात सुनत ही, बोलि लिए बलराम ॥

दूरि खेलन जनि जाउ लल्लन, मेरे हाऊ आए हे ।
तब हँसि बोलि कान्ह रि मैया, इनको किन्हे पठाए हे ॥
यमुना के तट धेनु चरावत, जहा सघन बन झाऊ ।
पैठि पताल व्याल गहि नाथ्यो, तहां न देखे हाऊ ॥
अब डरपत सुनि सुनि ये बातें, कहत हंसत बलदाऊ ।
सप्त रसातल शेषासन रहि, तब की सुरत भुलाऊ ॥
चार बेद ले गयो शंखासुर, जल मे रहेउ लुकाऊ ।
मीन रूप धरिके जब मारेउ, तबहि रहे कहे हाऊ ॥
मथि समुद्र सुर असुरन के हित, मदर जलहि खसाऊ ।
कमठरूप धरि धरनि पीठ पर, सुख पायो सुरराऊ ॥
जब हरणाक्ष युद्ध अभिलाषे, मन मे अति गरबाऊ ।
धरि वाराह रूप रिपु मारेउ, ले क्षिति दंत अगाऊ ॥
प्रकटरूप अवतार धरेउ जब, सो प्रहलाद बचाउ ।
धरि नृसिंह जब असुर बिदारेउ, तहां न देख्यो हाऊ ॥
वामन रूप धरेउ बलि छलि कर, तीन पग्ग बसुधाऊ ।
श्रम जल ब्रह्म कमंडल राख्यो, दरशि चरण परसाऊ ॥
मारेउ मुनि बिनही अपराधहि, कामधेनु लै आऊ ।
इकइस बार करि निक्षत्रि छिति, तहां न देख्यो हाऊ ॥
रामरूप रावण जब मारेउ, दश सिर बीस भुजाऊ ।

लंक जराय क्षार जब कीनों, तहां रहे कहं हाऊ ॥
माटी के मिस बदन बिकास्यो, जब जननी डरपाऊ ।
मुख भीतर भय लोक देखाए, तबहुं प्रतीत न आऊ ॥
नृपति भीम सों युद्ध परस्पर, तहं बस भाव बताऊ ।
तुरत चीर दुइ टूक कियो धरि, ऐसे त्रिभुवनराऊ ॥
भक्त हेत अवतार धरेउ सब, असुरनि मारि बहाऊ ।
सूरदास प्रभु की यह लीला, निगम नेति कहि गाऊ ॥

गोवर्धन-लीला

प्रथमहिं देउं गिरिहि बहाय ।
वज्रघातनि करउं चूरन, देउं धरनि बिलाय ।
मेरी इन महिमा नहि जानी, प्रगट देउं दिखाय ॥
जल बरषि ब्रज धोइ डारौ, लोग देउं बहाय ।
खात खेलत रहे नीके, करी उपाधि बनाय ॥
बरष दिन मोहि देत पूजा, दई सोउ मिटाय ।
कोप करि सुरराज लीन्हे, प्रबल मेघ बुलाय ।
रिस सहित सुरपति कहत पुनि, हरौ ब्रज पर धाय ॥
सुनहु सूर कहत है मघवा, बेगि परौ भहराय ॥

बरषि बरषि सब हारे बादर ।
ब्रज के लोगनि धोय बहावहु, इंद्र हमहिं करि आदर ॥
कहा जाय केहैं प्रभु आगे, करिहैं बहुत निरादर ।
हम बर्षत बर्षत जल सोखत, ब्रजवासी सब सादर ॥
पुनि रिसि करत प्रलय जल बर्षत, कहत भए सब कादर ।
सूर गाय गोसुत सब राख्यो, गिरिवर धर ब्रजनागर ॥

मथुरा-गमन-लीला

यशुदा बार बार यह भाखै ।
है कोउ ब्रज में हितू हमारो, चलत गोपालै राखै ॥
कहा काज मेरे छगन मगन को, नृप मधुपुरी बुलायौ ।
सुफलकसुत मेरे प्राणहरण कों, कालरूप ह्वै आयौ ॥
वरु यह गोधन कंस लेह सव, मोंहि बंदी ले मेलै ।
इतनो मांगति कमलनयन मेरो, अंखियन आगे खेलै ॥
को कर कमल मथानी गहिहै, को दधि माखन खैहै ।
वहुरेउ इंद्र बर्षि है ब्रज पर, कौन मेरु कर लैहै ॥
बासर रैन विलोके जीऊं, संग लागि हिलराऊं ।
हरि विछुरत अमु रहै कर्मबश, तौ केहि कंठ लगाऊं ॥
टेरि टेरि धर परति यशोदा, अधर वदन बिलखानी ।
सूर सु दशा कहां लगि बरनों, दुखित नंद की रानी ॥

तव न विचारी री यह वात ।
चलत न फेंट गह्यो मोहन की, अब कह री पछितात ॥
निरखि निरखि मुख रही मौन ह्वै, चकित भई विलखात ।
जवै रथ भयो दृष्टि अगोचर, लोचन अनि अकुलात ॥
सवै अजान भई वहि औसर, अति ढिग गहि सुत मात ।
सूरदास स्वामी के बिछुरे, कौड़ी भर न विकात ॥

मोहन इतनो मोहिं चित धरिये ।
जननी दुखित जानिकै कःवहूं मथुरा–गमन न करिये ॥
यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै तुमहिं लेन है आयो ।
तिरछे भये करम कृत पहले, विधि यह ठाट बनायो ॥

बार बार जननी कहि मोसों माखन मांगत जौन ।
सूर तिनहिं लेवैको आये करिहौ सूनो भौन ॥

कन्हैया मेरी छोह बिसारी ।
क्यों बलराम कहत तू नाही मैं तेरी महतारी ॥
तब हलधर जननी परबोधत मिथ्या यह संसारी ।
ज्यों सावन की बेल प्रफुल्लि फूलनि है दिन चारी ॥
हम बालक तुम को कहा सिखवैं कहूं तुमहि ते जात ।
सूर हृदय धीरज अब धारौ काहे को बिलखात ॥

नीके रहिए यशोदा मैया ।
आवेंगे दिन चार पांच मे, हम हलधर दोउ भैया ॥
बंशी बेनु विषान देखियो, और अबेर सबेरो ।
लै जिनि जाय चोराय राधिका, कछू खिलौना मेरो ॥
जा दिन ते हम तुम ते बिछुरे, कोउ न कहै कन्हैया ।
प्रात समय उठि कियो न कलेऊ, सांझि पियो नहिं घैया ॥
कहा कहौं कछु कहत न आवे, यशुमति जेतो दुख पायो ।
अब सुनियन वसुदेव देवकी, कहत हमारो जायो ॥
कहियो जाय नंद बाबा सों, मंद निठुर मन कीन्हो ।
सूर श्याम पहुंचाय मधुपुरी, बहुरि संदेश न लीन्हो ॥

मेरे कान्ह कमलदललोचन ।
अब की बेर बहुरि ब्रज आवहु, कहा लगे जिय सोचन ॥
यही लालसा बहुत मेरे जिय, बैठे देखत रहिहौं ।
गाय चरावन जान कुंवर को, कबहूं भूलि न कहिहौं ॥

करत अठान न बरज्यों कबहूं, अरु माखन की चोरी ।
अपने जियत नयन भर देखौ, हीरा की सी जोरी ॥
एक बेर मिलि जाउ इहां लौ, अनत कहां के ऊतर ।
चारिहु दिवस आइ सुख दीजै, सूर पहुनई सूतर ॥

अब नंद गइया लेहु सम्हार ।
हम तो तुम्हारे आन परगट, गौ चराइ दिन चार ॥
दूध दधि सब चोर खायो, तुम जो कियो प्रतिपार ।
सूर के प्रभु चले ब्रज तजि, कपट कागज फार ॥

पाछेहि चितवन मेरे लोचन, आगे परत न पाइ ।
मन हरि लियो माधुरी मूरति, कहा करों ब्रज जाइ ॥
पवन न भई पताका अंबर, भई न रथ को अंग ।
रेणु न भई चरण लपटाती, जाति वहां लौ संग ॥
केहि विधि कैसे सजनि करि, कब जु मिलै गोपाल ।
सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी, मुरछि परीं ब्रजबाल ॥

ऊधो हुतो जननि सों मिलियो, अरु कुशलात कहोगे ।
बाबा नंदहि पालागन कहि, पुनि चरण गहोगे ॥
जा दिन ते मधुबन हम आए, सुधि नाही तुम लीन्ही ।
दै दै सौह करोगे हित करि, कहा निठुरई कीन्ही ॥
यह कहियो बलराम श्याम अब, आवेगे दोउ भाई ।
सूर कर्म की रेख मिटे नहि, यहै कह्यो यदुराई ॥

गोपालहि बारे ही की टेव ।
जानति नही कहां ते सीखे, चोरी की छल छेव ॥

नब कछु दूध दह्यो लै खाते, करि रहनी हौं कानि ।
कैसे सही परत है मो पै, मनमानिक की हानि ॥

ऊधौ नंदनंदन सों कहियो, राजनीति समुझाइ ।
राजहु भए तजन नहिं लोभहिं, गुप्त नहीं यदुराइ ॥
बुद्धि बिबेक अरु वचनचातुरी, पहिले लई चुराई ।
सूरदास प्रभु के गुण ऐसे, का सों कहिये जाई ॥

फिरि फिरि कहा सिखावत मौन ।
वचन दुसह लागत अलि तेरे, ज्यौं पजरे पर लौन ॥
सींगी मुद्रा भस्म अधारी, अरु आराधन मौन ।
हम अबला अहीर शठ मधुकर, धरि जानहि कहि कौन ॥
यह मत जाइ तिनहि तुम सिखवहु, जिनहीं यह मत सोहत ।
सूर आज लों सुनी न देखी, पोत पूतरी पोहत ॥

ऊधौ हमहि न योग सिखैये ।
जेहि उपदेस मिलें हरि हम को, सो ब्रत नेम बतैये ॥
मुक्ति रहो घर बैठि आपने, निर्गुन सुन दुख पैये ।
जिहि सिर केश कुसुम भरि गूंदे, तेहि कैसे भसम चढ़ैये ।
जानि जानि सब मगन भए हैं, आपुन आपु लखैये ।
सूरदास प्रभु सुनहु न वा विधि, बहुरि कि या ब्रज ऐये ॥

भीष्म-प्रतिज्ञा ।

आज जो हरिहिं न शस्त्र गहाऊं ।
लाजौं हौं गंगा जननी को शांतनु-सुत न कहाऊं ॥

स्यंदन खंडि महारथ खंडौ कपिध्वज सहित डुलाऊं ।
इती न करौ सपथ मोहि हरि की क्षत्रियगतिहि न पाऊं ।।
पांडवदल सन्मुख ह्वै धावौ सरिता रुधिर बहाऊं ।
सूरदास रणभूमि विजय बिन, जियत न पीठि दिखाऊं ।।

सुरसरि-सुवन रण-भूमि आये ।
बाण-वर्षा लगे करन अति क्रोध ह्वै, पार्थ औसान तब सब भुलाये ।।
कह्यो करि कोप प्रभु अब प्रतिज्ञा तजो, नहीं तो मरत हम रण हराये ।
सूर प्रभु भक्तवत्सल विरद आनि उर, ताहि या विधि वचन कह सुनाये।।

हम भक्तन के भक्त हमारे ।
सुन अर्जुन ! परतिज्ञा मेरी यह व्रत टरत न टारे ।।
भक्तै काज लाज जिय धरिकै पाइं पयादै धाऊं ।
जहं जहं भीर परै भक्तन को, तहं तहं जाइ छुड़ाऊं ।।
जो मम भक्त सो बैर करत है, सो निज बैरी मेरो ।
देखु विचारि भक्त हित कारण हांकत हौ रथ तेरो ।।
जीते जीत भक्त अपने की हारे हारि विचारौ ।
सूरदास सुनि भक्तविरोधी, चक्र सुदर्शन जारौ ।।

गोविंद कोपि चक्र कर लीनो ।
छांड़ि आपनो प्रण यादवपति जन को भायो कीनो ।।
रथ ते उतरि अवनि आतुर ह्वै चले चरण अति धाये।
मनु शंकित भूभार उतारन चलत भये अकुलाये ।।
कछुक अंग ते उड़त पीतपट उन्नत बाहु विशाल ।
स्वेद स्रोत तनु शोभा कन छवि घन वर्षत जनु लाल ।।

सूर सु भुजा समेत सुदर्शन देखि बिरंचि भ्रम्यो ।
मानो आनि सृष्टि करिबे को अंबुज नाभ जम्यो ॥

मेरी प्रतिज्ञा रहे कि जाऊ ।
इत पारथ कोप्यो है हम पै उत भीषम भटराऊ ॥
रथ ते उतरि चक्र धरि कर प्रभु सुभटहि संमुख आये ।
ज्यों कंदर ते निकसि सिंह झुकि गजयूथनि पै धाये ॥
आय निकट श्रीनाथ विचारी, परी तिलक पर दीठि ।
शीतल भई चक्र की ज्वाला, हरि हंस दीनी पीठि ॥
जय जय जन चिंतामणि स्वामी, शांतनुसुत यों भाखै ।
तुम बिन ऐसो कौन दूसरो जो मेरो प्रण राखै ॥
साधु साधु सुरसरीसुवन तुम, मैं प्रण लागि डराऊं ।
'सूरदास' भक्त दोनों दिशि, का पर चक्र चलाऊं ॥

रावण-कुल-वध

आजु अति कोपे है रन राम ।
ब्रह्मादिक आरूढ़ विमानन देखै सुर संग्राम ।
धर तन दिव्य कवच सजि करि अरु कर धारयो शारंग ।
शुचि करि सकल बान सूधे करि, कटि तट कस्यो निषंग ॥
सुरपुर ते आयो रथ सजिकै, रघुपति भयो सवार ।
पापी भूमि कहा अब ह्वैहै सुमिरत नाम मुरार ॥
छोभित सिंधु शेष शिर कंपत पवन गती भइ पंग ।
इंद्र हंस्यो, हर हंसि बिलखान्यो जानि वचन भयो भंग ॥
धर अंबर दिशि विदिशि बढ़ै अति, सायक किरन समान ।
मानो महा प्रलय के कारन उदित उभयषट भान ॥

टूटत ध्वजा पताक छत्र रथ, चाप चक्र शिरत्रान।
जूझत सुभट जरत ज्यों दो द्रुम, विनु शाखा बिनु पान॥
रघुपति रिस पावक प्रचंड अति, सीता-श्वास समीर।
रावणकुल अरु कुंभकर्ण बन, सकल सुभट रणधीर॥
भये भस्म कछु वार न लागी, ज्यों ज्वाला पट चीर।
सूरदास प्रभु अपने बाहुबल कियो निमिष में कीर॥

सीता की अग्निपरीक्षा

लक्ष्मण रचो हुताशन भाई!
यह सुनि हनूमान दुख पाये मो प लख्यो न जाई॥
आसन एक हुताशन बैठी, मानो कुंदन की अरुणाई।
जैसे रवि इक पल, घन भीतर बिनु मारुत दुरि जाई॥
लै उछंग उत्संग हुताशन, निष्कलंक रघुराई।
लै बिमान बैठारि जानकी, कोटि वदन छबि छाई॥
दशरथ कही देवहू भाखी, ब्योमबिमान निकाई।
सिया राम लै चले अवध को, सूरदास बलि जाई॥

विनय-पत्रिका

काहू के कुल नाहिं विचारत।
अविगत की गति कहौं कौन सो पतित सबन को तारत॥
कौन जाति को पांति बिदुर की जिनकों प्रभु ब्यौहारत।
भोजन करत तुष्टि पर उनके राजमान पद टारत॥
ओछे जन्म कर्म के ओछे ओछे ही बोलावत।
अनत सहाय सूर के प्रभु की भक्त हेतु पुनि आवत॥

गोविद प्रीति सबन की मानत ।
जो जेहि भाय करै जन सेवा अन्तर की गति जानत ॥
बेर चाखि कटु तजि लै मीठे भिल्लडी दीने जाय ।
जूठन की कछु शंक न कीन्ही भक्ष किये सदभाय ॥
सन्त भक्त मीत हितकारी श्याम विदुर के आए ।
प्रेमहि बिकल बिदुर अर्पित प्रभु कदली छिलगा खाए ॥
कौरवकाज चले ऋषि आपुन शाक के पत्र अघाए ।
सूरदास करुणानिधान प्रभु युग युग भक्त बढ़ाए ॥

अब हौ नाच्यौ बहुत गोपाल ।
काम क्रोध को पहिनि चोलना कंठ विषय की माल ॥
महामोह के नूपुर बाजत निंदा शब्द रसाल ।
भरम भरचौ मन भयो पखावज डरप असंगत चाल ॥
तृष्णा नाद करति घट भीतर नाना विधि दै ताल ।
माया कौ कटि फेंटा बांध्यो लोभ तिलक दियो भाल ॥
कोटिक कला काछि दिखराई जल थल सुधि नहिं काल ।
'सूरदास' की सबै अविद्या दूरि करहु नंदलाल ॥

कृपा अब कीजिए बलि जाऊं ।
नाहिंन मेरे अनत कहूं अब पद अंबुज बिन ठाउं ॥
हौ अशुचि अकृती अपराधी सन्मुख होत लजाउं ।
तुम कृपालु करुणानिधि केशव अधम उधारन नाउं ॥
काके द्वार जाय हौं ठाढ़ो देखत काहि सुहाउं ।
अशरणशरण बिरद व्यापक तुव हौं कुटिल काम सुभाउं ॥

कलुषी परम मलीन दुष्ट हौ मेत्थों तौ न बिकाउं।
सूर पतितपावन पदअंबुज पारग्म क्यों परसाऊं॥

नाथ जू अब के मोहि उबारो।
पतितन मे बिख्यात पतित हौ पावन नाम तुम्हारो॥
बड़े पतित नाहिंन पासग हूं अजामील को हो जु बिचारो।
भाजै नरक नाउ मेरो सुनि भमन दियो हठि तारो॥
छुद्र पतित तुम तारे रमापति अब न करो जिय गारो।
सूरदास सांचो तुव माने जो होय मम निस्तारो॥

छांड़ि मन हरिबिमुखन को संग।
कहा भयो पय पान कराये विप नहिं तजत भुवंग॥
जाके संग कुबुधि उपजत है परत भजन मे भंग।
काम क्रोध मद लोभ मोह मे निश दिन रहत उमंग॥
कागहि कहा कपूर खवाये स्वान न्हवाए गंग।
खर को कहा अरगजालेपन मरकट भूपण अग॥
पाहनपतित बाण नहिं भेदत रीतो करत निपंग।
सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग॥

सबै दिन एकै से नहि जात।
सुमिरन भगति लेहु करि हरि की जौ लगि तनु कुसलात।
कबहुंक कमला चपल पाय कै टेढ़ेइ टेढे जात।
कबहुंक मग मग धूरि टटोरत भोजन को बिलखात॥
बालापन खेलत ही खोयो भक्ति करत अरसात।
सूरदास स्वामी के सेवत पैहो परम पद तात॥

भजहु न मेरो श्याम मुरारी।
सब संतन के जीवन है हरि नयनकमल प्यारो हितकारी।
या संसारसमुद्र मोहजल तृष्णातरंग उठति है भारी।
नाव न पाई सुमिरन हरि को भजन रहित बूडत संसारी॥
दीनदयाल अधार सबन को परम सुजान अखिल अधिकारी।
'सूरदास' कह तुम पांचे जन भो को होत भिखारी॥

मो सो पतित न और गुसाई।
अवगुण मो पै कबहुं न छूटे बहुत पचेउ अब नाई॥
जन्म जन्म हो रहेउ भ्रमित ह्वै कपि गुजा की नांई।
ता परसत गयो शीत न कबहूं लै लै निकट तपाई॥
लुब्ध्यो जाय कनक कामिनि ज्यो शिशु देखत उलझाई।
जिह्वा स्वाद मीन लों डारेउ सुझियो नहीं फंदाई॥
सुदिन भयो सपने में जैसे पाए निधिहि पराई।
जागि परे कछु हाथ न लाग्यो ऐसे सर प्रभुताई॥

प्रीतम जानि लेहु मन माहीं।
अपने सुख को सब जग बाध्यो कोउ काहू को नाहीं॥
सुख मे आय सबै मिलि बैठत रहत चहूं दिशि घेरे।
विपति परी तब सब संग छांड़ै कोउ न आवै नेरे॥
हर की नारि बहुत हित जासौ रहत सदा सग लागी।
जब इन हस तजी यह काया प्रेत प्रेत कहि भागी॥
या विधि को व्योपार बन्यो जग ता सों नेह लगायो।
सूरदास भगवंतभजन विन नाहक जन्म गंवायो॥

अब मैं जानी देह बुढ़ानी।
शीश पांव धरि कह्यौ न मानै तन की दशा सिरानी॥
आन कहत आनै कहि आवत नयन नाक बहै पानी।
मिटि गई चमक दमक अंग अंग की गई जु मति हिरानी॥
नाहिं रही कछु सुधि तन मन की ह्वैहै बात बिरानी।
सूरदास प्रभु अबहिं चेत ले भज ले शारंगपानी॥

नरोत्तमदास

सुदामा-चरित्र

लोचन कमल, दुखमोचन, तिलक भाल,
श्रवणन कुंडल, मुकुट धरे माथ हैं।
ओढ़े पीत वसन, गले में वैजयंती माला,
शंख चक्र गदा और पद्म लिये हाथ हैं॥
कहत नरोत्तम संदीपन गुरु के पास,
तुम ही कहत हम पढ़े एक साथ हैं।
द्वारिका गये ते हरि दारिद हरेंगे पिय !
द्वारिका के नाथ वे अनाथन के नाथ हैं॥

शिक्षक हैं सिगरे जग को तिय ! ताको कहा अब देति है सिच्छा।
जे तप कै परलोक सुधारत, संपति की तिनके नहिं इच्छा॥
मेरे हिये हरि को पदपंकज, बार हजार लै देख परिच्छा।
औरन को धन चाहिये बावरि ! ब्राह्मण को धन केवल भिच्छा॥

दानी बड़े तिहुं लोकनै में जग जीवत नाम सदा जिनको लै।
दीनन की सुधि लेत भली विधि, सिद्ध करो पिय ! मेरो मतो लै॥
दीनदयालु के द्वार न जात सो, और के द्वार पै दीन ह्वै बोलै।
श्रीयदुनाथ से जाके हितू सो, तिहूं पन क्यों कन मांगत डोलै ?

छत्रिन के प्रण युद्ध ज्यों बादल, साजि चढ़ै गज बाजिन ही।
वैश्य को बानिज और कृपीपन, शूद्र के सेवन नीति यही॥
विप्रन के प्रण है जु यहां, सुख संपति सों कछु काज नहीं।
कै पढ़िबो कै तपोधन है, कन मांगत ब्राह्मणै लाज नहीं॥

कोदों सवां जुरतौ भरि पेट, न चाहति हौं दधि दूध मिठौती।
सीत व्यतीत भयो सिसिआतहि, हौ हठती पै तुम्हें न हठौती ॥
जो जनती न हितू हरि से तो मै काहे को द्वारिका ठेलि पठौती ॥
या घर मे कबहूं न गयो पिय! टूटौ तवा अरु फूटि कठोती ॥

छांड़ि सबै झक तोहि लगी बक, आठहुं याम यही ठक ठानी।
जानहि देहै लदाय लढ़ा भरि, लैहौ लदाय यही जिय जानी ॥
पैये अटारी अटा कहं ते, जिनको विधि दीनी है टूटि सी छानी।
जो पै दरिद्र ललाट लिख्यो, तो पै काहु के मेटे न जात अजानी!

फाटे पट टूटि छानि, खायो भीख मांगि आनि,
बिना गये विमुख रहत देव पित्रई।
वे है दीनबंधु, दुखी देख के दयालु ह्वैहै,
देहै कछु भलो, सो हौ जानत अगत्रई ॥

द्वारिका लौं जात पिय! केतौ अलमात तुम,
काहे को लजात, भई कौन सी विचित्रई।
जो पै सब जन्म ये दरिद्र ही सताये तो पै,
कौन काज आय है कृपानिधि की मित्रई?

तैं तो कही नीकी, सुन बात हित ही की यह,
रीति मित्रई की नित प्रीति सरसाइये।
चित्त के मिले ते वित्त चाहिये परस्पर,
मित्र के जो जेइये तो आपहू जिमाइये ॥
वे है महाराज जोरि बैठत समाज भूप,
तहां यह रूप जाय कहा सकुचाइये।

दुख-सुख सब दिन काटे ही बनैगो, भूल,
बिपनि परे पै द्वार मित्र के न जाइये ॥

विप्र के भगत हरि जगत-विदित बंधु,
लेन सब ही की सुधि ऐसे महादानि हैं ।
पढ़े एक चटसार, कही तुम कैयो बार,
लोचन अपार वे तुम्हैं न पहिचानि हैं ?
एक दीनबंधु कृपासिंधु फेर गुरुबंधु,
तुम सम कौन दीन जाको जिय जानिहै ?
नाम लेत चौगुनी गये ते द्वार सौगुनी,
विलोकत सहसगुनी प्रीति प्रभु मानिहै ॥

द्वारिका जाहु जू, द्वारिका जू, आठहु याम यही झक तेरे ।
जो न कहौ करिये तौ बड़ो दुख, पैहौं कहां अपनी गति हेरे ॥
द्वार खड़े प्रभु के छड़िया तहं, भूपति जान न पावत नेरे ।
पान सुपारी तौ देखु बिचारि के, भेंट को चारि न चांवर मेरे ॥

यह सुनि के तब ब्राह्मणी, गई परोसिन पास ।
सेर पाव चांवर लिये, आई सहित हुलास ॥

सिद्ध करी गणपति सुमिर, बांधि दुपटिया खूट ।
मांगत खात चले तहां, मारग वाली बूट ॥

द्वारिका-वर्णन

मंगलसंगीत धाम-धाम में पुनीत जहां,
नाचें वारवधू देवनारि-अनुहारिका ।

घंटन के नाद कहूं बाजन के छाय रहे,
कहू कीर केकी पढ़े सुक और सारिका ॥
रतनन ठाठ हाट-बाटन मे देखियत,
घूमे गज अश्व रथ पत्ति नर नारिका।
दशों दिशि भीर, द्विज धरत न धीर मन,
उठत है पीर लखि बलबीर-द्वारिका ॥

दृष्टि चकचौधि गई देखत सुबर्नमयी,
एक ते सरस एक द्वारिका के भौन है ।
पूछे बिन कोऊ काहू से न करे बात जहा,
देवता से बैठे सब साधि साधि मौन है ॥
देखत सुदामा धाय पुरजन गहे पाय,
कृपा करि कहो, कहां कीने विप्र ! गौन है ?
धीरज अधीर के, हरण पर पीर के,
बताओ, बलबीर के महल यहा कौन है ?

द्वारपाल चलि तहं गयो, जहां कृष्ण यदुराय ।
हाथ जोरि ठाढ़ो भयो, बोल्यो शीश नवाय ॥

शीश पगा न झगा तन पै, प्रभु जाने को आहि बसे किहि ग्रामा ।
धोती फटी सी, लटी दुपटी अरु पांय उपानह को नहि सामा ॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल देखि, रह्यो चकि सो बसुधा अभिरामा ।
दीनदयाल्लु को पूछत नाम, बतावत आपनो नाम सुदामा ॥

लोचन पूरि रहे जल सों प्रभु दूर ते देखत ही दुख मेट्यो ।
सोच भयो सुरनायक के, कलपद्रुम के हिय मांझ खखेट्यो ।

कांपि कुबेर हिये सर से पग, जात सुमेरहु रंक समेट्यो।
राज भयो तब ही जब ही, भरि अंग रमापति सों द्विज भेट्यो॥

ऐसे बिहाल बिवाइन सों भये, कंटकजाल लगे पुनि जोये।
हाय महादुख पायो सखा! तुम आये इतै न कितै दिन खोये॥
देखि सुदामा की दीन दसा, करुणा करिकै करुणानिधि रोये।
पानी परात को हाथ छुओ नहि, नैनन के जल सों पग धोये॥

तंदुल त्रिय दीने हुते, आगे धरियो जाय।
देखि राजसंपति विभव, दै नहि सकत लजाय॥
अंतरयामी आप हरि, जानि भक्ति की रीति।
सुहृद सुदामा विप्र सों, प्रकट जनाई प्रीति॥

कछु भाभी हमको दियो, सो तुम काहे न देत?
चापि गाठरी कांख मे, रहे कहो किहि हेत?

आगे चना गुरुमात दिये, ते लिये तुम चाबि हमे नहि दीने।
श्याम कह्यो मुसकाय सुदामा सों, चोरि कि बानि मे हौ जु प्रवीने॥
गांठरि कांख मे चांपि रहे तुम, खोलत नाहि सुधारस भीने।
पाछिलि बान अजौ न तजी तुम, वैसे ही भाभी के तंदुल कीने॥

खोलत सकुचत गांठरी, चितवन हरि की ओर।
जीरण पट फट छुटि परे, बिखरि गये तिहि ठौर॥

तंदुल मांगत मोहन, विप्र संकोच ते देत नही अभिलाखे।
है नहि पास कछू कहिके, तेहि गोपि घनी विधि कांख मे राखे॥
सो लखि दीनदयाल उतै यह चोरि करी तुम यों हंसि भाखे।
खोलिके पोट अछोट मुठी गिरिधारन चाउर चाव सों चाखे॥

कांपि उठी कमला मन सोचति मो सों कहा हरि को मन औंको।
ऋद्धि कंपी सब सिद्धि कंपी नवनिद्धि कंपी ब्रह्मनायक धौंको ।।
सोच भयो सुरनायक के जब दूसरि बार लयो भरि झौंको।
मेरु डरे बकसे जनि मोंहि कुबेर चबावत चाउर चौंको ।।

हूल हियरा मे, कान कानन परी है टेर,
भेटन सुदामै स्याम बनै न अघातही।
कहै नरोतम रिद्धि सिद्धिन में सोर भयो,
ठाढ़ी थरहरै और सोचे कमला तहीं ।।
नाकलोक, नागलोग, ओक ओक थोक थोक,
ठाढ़े थरहरे, मुख से कहै न बात ही।
हाल्यो पर्यो लोकन मे, लाल्यो पर्यो चक्रिन में,
चाल्यो पर्यो लोगन मे चाउर चबात ही ।।

भौन भरो पकवान मिठाइन, लोग कहै निधि हैं सुखमा के।
सांझ सबेरे पिता अभिलाषत, दाखन प्राखत सिंधु रमा के ।।
ब्राह्मण एक कोऊ दुखिया, सेर पावक चाउर लायो समा के।
प्रीति की रीति कहा कहिये, तिहि बैठे चबावत कंत रमा के ।।

मूठी निसरी भरत ही, रुक्मनि पकरी बांह।
ऐसी तुम्हें कहा भई, संपति की अनचाह ।।

कही रुक्मनी कान में, यह धौं कौन मिलाप।
करत सुदामहि आप सो, होत सुदामा आप ।।

हाथ गह्यो प्रभु को कमला, कहे नाथ ! कहा तुमने चित धारी ?
तंदुल खाय मुठी दुइ, दीन कियो तुमने दुइ लोक भिखारी !

खाय मुठी तिसरी अब नाथ ! कहा निज बास की आस बिसारी ?
रंकहि आप समान कियो, तुम चाहत आपहि होन भिखारी ?

सब जीत लीनी सोभा सरद के चंद की।
दूसरे परोस्यो भात सान्यो है सुरभि घृत,
फूले फूले फुलके प्रफुल्लित दुति मंद की ॥
पापर मुगौरी बरा बेसन अनेक भांति,
देवता विलोकि सोभा भोजन अनंद की।
या बिधि सुदामा जी को अच्छ के जिमाय फिर,
पाछे कै पछावरी परोसी आनि कंद की ॥

कह्यो बिस्वकरमा को हरि तुम जाय करि,
नगर सुदामा जी को रचौ बेगि अब ही।
रत्नजटित धाम सुबरनमयी सब,
कोट औ बजार बाग फूलन के तब ही ॥

कल्पवृक्ष द्वार, गज रथ असवार प्यादे,
कीजिए अपार दास दासी देव छबही।
इंद्र औ कुबेर आदि देवबधु अपसरा,
गंधरव गुणी जहां ठाढ़ रहें सब ही ॥

नित नित सब द्वारावती, दिखलाई प्रभु आप।
भरे बाग अनुराग सब, जहां न व्यापहिं ताप ॥

परम कृपा दिन दिन करी, कृपानाथ यदुराय।
मित्र भावना विस्तरी, दूनो आदर भाय ॥

देनो हुतो सो दे चुके, विप्र न जानी बात।
चलती बेर गोपाल जी, कछू न दीनो हाथ॥

गोपुर लों पहुंचाय के, फिरे सकल दरबार।
मित्र वियोगी कृष्ण के, नेत्र चली जलधार॥

हौ कब इत आवत हुतो, वाही पठयो पेलि।
अब कहिहौ घर जाय के, धन धन धरहु सकेलि॥

बालापन के मित्र है, कहा देउं मैं साप।
जैसो हरि हमको दियो, तैसो पइयो आप॥

और कहा कहिये जहां, कंचन ही के धाम।
निपट कठिन हरि को हियो, मोको दियो न दाम॥

इमि सोचत सोचत झकत, आये निज पुर तीर।
दृष्टि परी इक बार ही, हय गयद की भीर॥

दाहिने वेद पढ़े चतुरानन,
सामुहे ध्यान महेश धर्‌यो है।
बायें दोऊ कर-जोर सुसेवक,
देवन साथ सुरेश खर्‌यो है॥
एतन बीच अनेक लिये धन,
पायन आय कुबेर पर्‌यो है।
देखि विभो अपनो सपनो,
बपुरो वह ब्राह्मण चौंकि पर्‌यो है॥

बेई सुरतरु प्रफुल्लित फुलवारिन मे,
बेई सुरवर हंस बोलत हिलत कों।

वेई हेम हीरन दिशान दहलीजन में,
वेई गजराज हय गरज-पिलन कों ॥
द्वार द्वार छड़ी लिये द्वारपौरिया जो खड़े।
बोलन मरोर-बरजोर त्यों झिलन कों ॥
द्वारिका तें चल्यों भूलि द्वारिका ही आयौं नाथ !
मांगिया न मो पै चारि चाउर गिल्न कों ॥

जगर-मगर जोति छाय रही चहूं ओर,
अगर-बगर हाथी घोरन को रोर है।
चौपर को बनो है बजार पुनि सोनन के,
महल दुकान की कतार चहुं ओर है॥
भीरभार धकापेल चहूं दिसि देखियत,
द्वारिका तें दूनो यहां प्यादन को जोर है।
रहिबे को ठाम है न, काहू सों पिछान मेरी,
बिन जाने बसे कोऊ हाड़ मेरे तोर है॥

फूटी एक थारी, बिन टोटनी की झारी हुती,
बांस की पिटारी और कंथारी हुती टाट की।
बेंटे बिन छुरी और कमंडलु सौ टूक वहौ,
फटे हुते पाबौ पाटी टूटी एक खाट की॥
पथरौटा, काठ को कठौता कहूं दीसै नाहिं,
पीतर को लोटो हो, कटोरो हो न बाट की।
कामरी फटी सी हुती, डोंड़न की माला ताक,
गोमनी की माटी की न सुद्ध कहूं माटकी॥

मध्ययुग
निर्गुणभक्ति धारा
ज्ञानाश्रयी शाखा

गुरु नानक

मन की मन ही मांहि रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही॥
दारा मीत पूत रथ संपति, धन जन पूर्न मही।
और सकल मिथ्या यह जानो, भजन राम सही॥
फिरत फिरत बहुते युग हार्यौ, मानस देह लही।
नानक कहत मिलनकी बिरियां, सुमिरत कहा नहीं॥

माई मैं मन की मान न त्यागो।
माया के मद जनम सिरायो, राम-भजन नहिं लाग्यो॥
जम को दण्ड पर्यो सिर ऊपर, तब सोवत तें जाग्यो।
कहा होत अब के पछिताये, छूटत नाहिन भाग्यो॥
यह चिंता उपजी घट में जब, गुरु चरनन अनुराग्यो।
सुफल जनम नानक तब हूआ, जो प्रभु-जस में पाग्यो॥

माधो मन का मान तियागो।
काम क्रोध संगत दुर्जन की, ता तें अह निसि भागो॥
सुख-दुख दोनों सम कर जानै, और मान अपमाना।
हर्ष शोक तें रहै अतीता, तिन जग तत्त्व पिछाना॥
अस्तुति निंदा दोऊ त्यागै, खोजै पद निरवाना।
जन नानक यह खेल कठिन है, किन हूं गुरुमुख जाना॥

जा में भजन राम को नाहीं।
तेहि नर जनम अकारथ खोयो, यह राखो मन मांही॥

तीरथ करै बर्त पुनि राखै, नहिं मनुवा बस जाको ।
निफल धर्म ताही तुम मानो, साच कहत मै याको ।
जैसे पाहन जल मे राख्यौ, भेदे नहिं तेहि पानी ॥
तैसे ही तुम ताहि पिछानो, भगति हीन जो प्रानी ।
कलि मे मुक्ति नाम ते पावत, गुरु यह भेद बतावै ॥
कहु नानक सोई नर गरुवा, जो प्रभु के गुन गावै ।

साधुमहिमा

जो नर दुख मे दुख नहि मानै ।
सुख सनेह अरु भय नहि जाके, कंचन माटी जानै ॥
नहि निंदा नहिं अस्तुति जाके, लोभ मोह अभिमाना ।
हर्ष सोक तें रहै नियारो, नांहि मान अपमाना ॥
आसा मनसा सकल त्यागि कै, जग तें रहै निरासा ।
काम क्रोध जेहि परसै नाहिन, तेहि घट ब्रह्म निवासा ॥
गुरु किरपा जेहि नर पै कीन्ही, तिन यह जुगति पिछानी ।
नानक लीन भयो गोविंद सों, ज्यों पानी संग पानी ॥

या जग मीत न देख्यो कोई ।
सकल जगत अपने सुख लाग्यों, दुख मे संग न होई ॥
दारा मीत पूत संबंधी, सगरे धन सों लागे ।
जब ही निरधन देख्यो नर को, संग छाड़ि सब भागे ॥
कहा कहूं या मन बौरे को, इन सों नेह लगाया ।
दीनानाथ सकल भयभंजन, जस ताको बिसराया ॥
स्वान पूछ ज्यों भयो न सूधो, बहुत जतन मैं कीन्हो ।
नानक लाज बिरद की राखो, नाम तिहारो लीन्हो ॥

हरि जू राख लेहु पत मेरो।
काल को त्रास भयो उर अंतर, सरन गह्यो अब तेरो।
भय करने को बिसरत नाहीं, तेहि चिता तन जारो॥
किये उपाय मुक्ति के कारन, दह दिसि को उठ धाया।
घट ही भीतर बसैं निरंजन, ताको मर्म न पाया॥

काहे रे वन खोजन जाई।
सर्व निवासी सदा अलेपा, तो ही संग समाई॥
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकुट माहि जस छाई।
तैसे ही हरि बसै निरंतर, घट ही खोजो माई॥
बाहिर भीतर एकै जानों, यह गुरु ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटे न भ्रम की काई॥

अब मेरे प्रीतम प्रानपियारे।
प्रेम भक्ति निज नाम दीजिये, द्याल अनुग्रह धारे॥
सुमिरौ चरन तिहारे प्रीतम, हिरदे तिहारी आसा।
संत जनां पै करौ बेनती, जन दरसन को प्यासा॥
बिछुरत-मरन जीवन हरि मिलते, जन को दरसन दीजै।
नाम अधार जीवन धन नायक, अब मेरे किरपा कीजै॥

भाई मैं केहि बिधि लखों गुसाई।
महा मोह अज्ञान तिमिर में, मन रहियो उरझाई॥
सकल जनम भ्रम ही भ्रम खोयो, नहिं इस्थिर मति पाई।
विषयासक्त रह्यौ निसि बासर, नहि छूटी अधमाई॥
साधु संग कबहूं नहि कीन्हा, नहिं कीरति प्रभु गाई।
जन नानक में नाहीं कोउ गुन, राखि लेहु सरनाई॥

अब हम चलीं ठाकुर पहिं हार।
जब हम सरन प्रभू की आईं, राखे प्रभु भावे मार॥
लोगन की चतुराईं उपमा, ते वैसंदर जार।
कोई भला कहु भावे बुरा कहु, हम तन दियो है ढार॥
जो आवत सरन ठाकुर प्रभु तुम्हरी, तिस राखो किरपाधार।
जन नानक सरन तुम्हारी हरिजी, राखो लाज मुरार॥

इस दम दा मैं नूं की वे भरोसा। आया आया न आया न आया।
सोच बिचार करै मत मन में, जिसने ढूंढा उसने पाया।
या संसार रैन दा सुपना, कहिं दीखा कहिं नाहिं दिखाया।
नानक भक्तन के पद परसें, निस दिन रामचरन चित लाया॥

माधो यह तन मिथ्या जानो।
या भीतर जो राम बसत हैं, साचो ताहि पिछानो॥
यह जग है संपति सुपने की, देख कहा ऐंड़ानो।
संग तिहारे कछू न चालै, नाहिं कहा लपटानो॥
अस्तुति निंदा दोऊ परिहरि, हरि कीरति उर आनो।
जन नानक सब ही में पूरन, एक पुरुष भगवानो॥

दादू

चेतावनी

दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तजि बेकाम ।।
काल न सूझै कंध पर मन चितवै बहु आस।
दादू जिव जाणौ नहीं, कठिन काल की पास ।।
जहं जहं दादू पग धरै, तहां काल का फंध।
सिर ऊपर सांधे खड़ा, अजहुं न चेतै अंध ।।
यहु बनु हरिया देखि करि, फूल्यौ फिरै गंवार।
दादू यहु मन मिरगला, काल अहेड़ी लार ।।
कहतां सुनतां देखतां, लेतां देतां प्राण।
दादू सो कतहू गया, माटी धरी मसाण ।।
पंथ दुहेला दूरि घर, संग न साथी कोय।
उस मारग हम जाहिंगे, दादू क्यों सुख सोइ ।।
काल झाल में जग जलै, भाजि न निकसै कोइ।
दादू सरणै साच कै, अभय अमर पद होइ ।।
काल हमारा कर गहे, दिन दिन खैंचत जाइ।
अजहुं जीव जागै नहीं, सोवत गई विहाइ ।।
धरती करते एक डग, दरिया करते फाल।
हांकौं परवत फाड़ते, सो भी खाये काल ।।
तिल तिल का अपराधी तेरा, रती रती का चोर।
पल पल का मैं गुनही तेरा, बक्सौ औगुण मोर ।।

गुनहगार अपराधी तेरा, भाजि कहां हम जाहिं।
दादू देख्या सोधि सब, तुम बिन कहिं मु समाहिं॥
दिन दिन नौतम भगति दे, दिन दिन नौतम नांव।
दिन दिन नौतम नेह दे, मैं बलिहारी जांव॥
पलक माहिं प्रगटै मही, जे जन करे पुकार।
दीन दुखी तब देखि करि, अति आतुर निहिं बार॥
अंतरजामी एक तू, आतम के आधार।
जे तुम छाड़हु हाथ मों, तौ कौन संवाहण हार॥
साहिब दर दादू खड़ा, निसि दिन करै पुकार।
मीरां मेरा मिहर करि, साहिब दे दीदार॥
मेरा वैरी मैं मुवा, मुझे न मारै कोउ।
मैं हीं मुझ को मारता, मैं मरजीवा होउ॥
मेरे आगे मैं खड़ा, पाछै रह्या लुकाइ।
दादू परगट पीव है, जे यहु आपा जाइ॥
मेरे हिरदे हरि बसै, दूजा नाहीं और।
कहौ कहां धौ राखिये, नहीं आन कौ ठौर॥
ना हम छाड़ें ना गहैं, ऐसा ज्ञान विचार।
मद्धि भाव सेवै सदा, दादू मुकति दुबार॥
जा कारन जग ढूढ़िया, सो तो घट ही माहिं।
मैं तैं पड़दा भरम का, ता थैं जानत नाहि॥
साधू जन संसार में, पारस परगट पाइ।
दादू केते ऊधरे, जेते परसे आइ॥
साधू जन संसार में, सीतल चंदन वास॥
दादू केते ऊधरे, जे आये उन पास॥

जहं अरंड अरु आक थे, तहं चंदन उग्या माहिं।
दादू चंदन करि लिया, आक कहे को नाहिं ॥
साध मिलै तव ऊपजै, हिरदे हरि का हेत ।
दादू संगति साधु की, कृपा करै तब देत ॥
पर उपगारी मंत सव, आये यहि कलि मांहि ।
पिवै पिलावै राम रस, आप सुवारथ नांहि ॥
साध सबद मुख बरखि है, सीतल होइ सरीर ।
दादू अंतर आतमा, पीवै हरि जल नीर ॥
मन हंसा मोती चुणै, कंकर दिया डारि ।
सतगुरु कहि समझाइया, पाया भेद बिचारि ॥
स्वांगी सब संसार है, साधू कोई एक ।
हीरा दूरि दिसंतरा, कंकर और अनेक ॥
प्रेय भगति जब ऊपजै, निहचल सहज समाध ।
दादू पीवे प्रेम रस, सतगुरु के परसाद ॥
दादू राता राम का, पीवै प्रेम अघाइ ।
मतवाला दीदार का, मांगै मुक्ति बलाइ ॥
ज्यू अमली के चित अमल, सूरे के संग्राम ।
निरधन के चित धन बसे, यों दादू के राम ॥
दादू पाती प्रेम की, बिरला बांचै कोइ ।
वेद पुरान पुस्तक पढ़ें, प्रेम बिना क्या होइ ॥
जो मन बंधे प्रीति सौं, ते जन सदा सजीव ।
उलटि सामने आप में, अंतर नाहीं पीव ॥
देह रहे संसार में, जीव राम के पास ।
दादू कुछ व्यापै नहीं, काल झाल दुख त्रास ॥

दादू बेली आत्मा, सहज फूल फल होइ।
सहज सहज सतगुरु कहै, बूझै बिरला कोइ॥
हरि तरवर तत आत्मा, वेलि करी विस्तार।
दादू लागै अमर फल, साधू सींचनहार॥
दया धर्म का रूखड़ा, सत सौं बधता जाइ।
संतोष सौं फूलै फलै, दादू अमर फल खाइ॥
मति बुधि विबेक बिचार बिन, माणस पसू समान।
समझाया समझै नहीं, दादू परम गियान॥
राहु गिलै ज्यों चंद कौं, गहन गिलै ज्यों सूर।
कर्म गिलै यौं जीव कौं, नख सिख लागै पूर॥
कर्म कुहाडा अंग वन, काटत बारंबार।
अपने हाथौं आप कौं, काटत है संसार॥
दादू देखौं पीव को, दूसर देखौं नाहि।
सबै दिसा सौं सोधि करि, पाया घट ही माहि॥
साईं सूर जे मन गहै, निमख न चलने देइ।
जब ही दादू पग भरै, तब ही पाकड़ि लेइ॥
जब लगि यह मन थिर नहीं, तब लगि परस न होइ।
दादू मनवां थिर भया, सहजि मिलैगा सोइ॥
यह मन कागज की गुड़ी, उड़ी चढ़ी आकास।
दादू भीगै प्रेम जल, आइ रहै हम पास॥
जो कुछ हम थै ना भया, जा पर रीझै राम।
दादू इस संसार में, हम आये बेकाम॥
जिसका दर्पण ऊजला, दर्पण देखै माहि।
जिसकी मैली आरसी, सो मुख देखै नाहि॥

जिहि घर निंदा साध की, सो घर गये समूल।
तिन की नीव न पाइये, नांव न ठांव न धूल॥
कादर काम न आवई, यहु सूरे का खेत।
तन मन सौपे राम कौ, दादू सीस सहेत॥

मन रे राम बिना तन छीजै।
जब यहु जाइ मिलै माटी मे, तब कहु कैसे कीजै॥
पारस परसि कंचन करि लीजै, सहज सुरति सुखदाई।
माया बेलि विषै फल लागे, तापर भूलि न भाई॥
जब लगि प्राण है नीका, तब लग ताहि जनि भूलै।
यहु संसार सेवल कै सुख ज्यू, ता पर तू जनि फूलै॥
और यह जानि जग जीवन, समझि देखि सचु पावै।
अंग अनेक आन मति भूलै, दादू जनि डहकावै॥

तेरे नाउं की बलि जाऊं, जहां रहौ जिस ठाऊं॥
तेरे वैनों की बलिहारी, तेरे नैनहुं ऊपरि वारी।
तेरी मूरति की बलि कीति, वारि वारि हौ दीति॥
सोभित नूर तुम्हारा, सुदर जोति उजारा।
मीठा प्राण पियारा, तू है पीव हमारा॥
तेज तुम्हारा कहिये, निर्मल काहे न लहिये।
दादू बलि बलि तेरे, आन पिया तू मेरे॥

भाई रे घर ही मे घर पाया।
सहजि समाइ रह्या ता माहीं, सतगुरु खोज बताया॥
ता धर काज सबै फिरि आया, आपै आप लखाया।
खोलि कपाट महल के दीन्हे, थिर अस्थान दिखाया॥

भय औ भेद भरम सब भागा, सांच सोई मन लाया।
पिंड परे जहां जीव समावै, ता में सहज समाया॥
निहचल सदा चलै नहिं कब हूं, देख्या सब में सोई।
ता ही सूं मेरा मन लागा, और न दूजा कोई॥
आदि अंत सोई घर पाया, इब मन अनत न जाई।
दादू एक रंगै रंग लागा, ता में रह्या समाई॥

बाबा मलूकदास

अब तेरी सरन आयो राम।
जबै सुनिया साध के मुख, पतितपावन नाम ॥
यही जान पुकार कीन्हीं अति सतायो काम।
विषय सेती भयौ आजिज, कह मलूक गुलाम ॥

अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम।
दास मलूका यों कहै, सब के दाता राम ॥
जहां जहां दुख पाइया, गुरु को थापा सोय।
जब हीं सिर टक्कर लगै, तब हरि सुमिरन होय ॥
आदर मन महत्तव सत, बालापन को नेह।
ये चारों तब ही गये, जब हिं कहा कछु देह ॥
प्रभुता ही को सब मरै, प्रभु को मरै न कोय।
जो कोई प्रभु को मरै, प्रभुता दासी होय ॥
मानप बैठे चुप कर, कदर न जानै कोय।
जब ही मुख खोलै कली, प्रगट बास तब होय ॥
कोई जीति सकै नहीं, यह मन जैसे देव।
याके जीते जीत है, अब मैं पायो भेव ॥
तैं गत जानै मन मुवा, तन करि डारा खेह।
ता का क्या इतबार है, मारे सकल विदेह ॥
जीती बाजी गुरु प्रताप तें, माया मोह निवार।
कह मलूक गुरु कृपा तें, उतरा भव-जल पार ॥

सुखद पंथ गुरुदेव यह, दीन्हो मोहिं बताय।
ऐसोऊ पथ पाय अब, जग-मग चलै बलाय॥

मलुका सोई पीर है, जो जानै पर पीर।
जो पर पीर न जानई सो काफिर बेपीर॥

सुंदरदास

जल को सनेही मीन विछुरत तजै प्रान।
मणि बिन अहि जैसे जीवत न लहिये ॥
स्वाति बूंद को सनेही, प्रगट जगत मांहि।
एक सीप दूसरो सु चातक हु कहिये ॥
रवि को सनेही पुनि, कमल सरोवर में।
ससि को सनेह हू चकोर जैसे रहिये ॥
तैसे ही सुंदर एक, प्रभु सूं सनेह जोरि।
और कछु देखि काहू ओर नहिं बहिये ॥

जैसे ईख रस की मिठाई भांति भांति भई।
फेरि करि गारे ईख रस की लहतु है ॥
जैसे घृत थीज के, डरा सो बांधि जात पुनि।
फेर पिघले तें वह घृत ही रहतु है ॥
जैसे पानी जमि के पाषाण हू सों देखियत।
सो पषाण फेरि पानी होय के बहतु है ॥
तैसे ही सुंदर यह जगत है ब्रह्म में।
ब्रह्म सो जगतमय वेद सु कहत है ॥

असन वसन बहु भूपण सकल अंग।
संपति विविध भांति भर्‌यो सब घर है ॥
स्रवण नगारो सुनि छिनक में छांड़ि जात।
ऐसे नहिं जानै कछु मेरो वहां घर है ॥

मन मे उछाह रण मांहि टूक टूक होइ।
निर्भय निसंक बा के रंच हू न डर है ॥
सुंदर कहत कोउ देह को ममत्व नाहि।
सूरमा को देखियत सीस बिनु धर है ॥

पांव रोपि रहे रण मांहि रजपूत कोऊ।
हय गज गाजन जुरत जहां दल है ॥
बाजत जुझाऊ सहनाई सिंधुराग पुनि।
सुनत ही कायर की छूट जात कल है ॥
झलकत बरछी, तिरछी तरवार वहै।
मार मार करत परत खलभल है ॥
ऐसे जुद्ध मे अडिग सुदर सुभट सोइ।
घर माहि सूरमा कहावत सकल है ॥

घेरिये तौ घेरे हू न आवत है मेरो पूत।
जोई परबोधिये सो कान न धरतु है ॥
नीति न अनीति देखै सुभ न असुभ पेखै।
पल ही में होती अनहोती हू करतु है ॥
गुरु की न साधु की न लोक वेद हू की संक।
काहू की न माने न तौ काहु से डरतु है ॥
सुंदर कहत ताहि धीजिये सु कौन भांति।
मन की सुभाव, कछु कह्यो न परतु है ॥

पल ही मे मरि जाय, पल ही में जीवतु है।
पल ही में पर हाथ देखत बिकानो है ॥

पल ही में फिरै नव खंड हू ब्रह्मांड सब।
देख्यो अनदेख्यो सो तौ यातें नहिं छानो है॥
जातो नहिं जानियत आवतो न दीसै कछु।
ऐसे ही बलाइ अब तासू पर्‌यो पानी है॥
सुदर कहत याकी गति हूं न लखि परै।
मन की प्रतीत कोऊ करै सौ दीवानो है॥

धीरज धारि बिचार निरंतर, तेहि रच्यो सोइ आपु हि ऐहै।
जेतिक भूक लगी घट प्राणहि, तेतिक तू अन्यारहि पैहै॥
जो मन में तृस्ना करि धावत, तौ तिहुं लोक न खात अघैहै।
सुंदर तू मत सोच करै कछु, चोंच दई जिन चूनहु दैहै॥

द्वंद बिना बिचरै बसुधा पर, जा घर आतम ज्ञान अपारो।
काम न क्रोध न लोभ न मोह, न राग न द्वेष न म्हारु न थारो॥
जोग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दसा न ढक्यो न उघारो।
सुदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गांव को पैंडो ही न्यारो॥

विधि न निषेध कछु भेद न अभेद पुनि।
क्रिया सो करत दीसै यू ही नित प्रति है॥
काहू कू निकट राखै काहू कू तौ दूर भाखै।
काहू सू नेरे न दूर ऐसी जाकी मति है॥
राग हू न द्वेष कोऊ लोक न उछाह दोऊ।
ऐसी बिधि रहै कहूं रति न बिरति है॥
बाहिर ब्यौहार ठानै मन में सुपन जानै।
संदर ज्ञानी की कछु अद्‌भुत गति है॥

तमोगुण बुद्धि सो तौ तवा के समान जैसे ।
ताके मध्य सूरज की रंच हू न जोत है ।।
रजोगुण बुद्धि जैसे आरसी की औधी ओर ।
ताके मध्य सूरज की कछुक उद्योत है ।।
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे आरसी की सूधी ओर ।
ताके मध्य प्रतिबिब सूरज की पोन है ।।
त्रिगुण अतीन जैसे प्रतिबिब मिटि जात ।
सुदर कहत एक सूरज ही होत है ।।

छीर नीर मिले दोऊ एकठे ही होइ रहे ।
नीर जैसे छांड़ि हंस छीर कू गहत है ।।
कंचन में और धातु मिलि करि बनि पर्यो ।
सुद्ध करि कंचन सुनार ज्यू लहतु है ।।
पावक हूं दारु मध्य दारू हूं सों होइ रह्यौ ।
मथि करि काढ़ै वह, दारू कूं दहतु है ।।
तैसे ही सुदर मिल्यो, आतमा अनातमा जु ।
भिन्न भिन्न करै सो तो सांख्य ही कहतु है ।।

है दिल मे दिलदार सही, अंखियां उलटी करि ताहि चितैये ।
आब में खाक में बाद में आतस, जानि में सुदर जानि जनैये ।।
नूरमें नूर है तेजमें तेज हि, ज्योतिमे ज्योति मिलै मिलि जैये ।
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहते हि लजैये ।।

देहसू ममत्व पुनि गेहसूं ममत्व, सुत दारसूं ममत्व, मन मायामें रहतु है ।
थिरता न लहे जैसे, कंदुक चौगान मांहि, कर्मनिके बस मार्यो धकाकूं वहुतहै ।।

अंतःकरण सदा जगत सू रचि रह्यो, मुख सू बनाय बात ब्रह्मकी कहतु है।
सुंदर अधिक मोहिं याही ते अचंभो आहि, भूमिपर पर्‌यो कोऊ चंद कू गहतुहै॥

गेह तज्यो पुनि नेह तज्यो पुनि खेह लगाइ के देह संवारी।
मेघ सहै सिर सीत सहै तन, धूप समय जो पंचागिनि बारी॥
भूख सहैं रहि रूख तरे, सुंदरदास सहै दुख भारी।
डासन छाड़ि के कासन ऊपर, आसनि मारि पै आस न मारी॥

मातु पिता युवती सुत बांधव, लागत हैं सब कूं अति प्यारो।
लोक कुटुंब खरौ हित राखत, होइ नही हम तें कहुं न्यारो॥
देह सनेह तहां लग जानहु, बोलत है मुख सबद उचारो।
सुंदर चेतन शक्ति गई जब, बेगि कहै घरबार निकारो॥

प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और।
चित्त सों न चंदन सनेह सों न सेहरा॥
हृदय सों न आसन सहज सों न सिंहासन।
भाव सी न सेज और सून्य सों न गेहरा॥
सील सों न स्नान अरु ध्यान सों न धूप और।
ज्ञान सों न दीपक अज्ञान तम केहरा॥
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और।
आतम सों देव नाहिं देह सों न देहरा॥

सुंदर सब ही संत मिलि सार लियौ हरि नाम।
तक्र तजी घृत काढ़ि कै और क्रिया किहि काम॥
लीन भया विछुरत फिरै, छीन भया गुन देह।
दीन भई सब कल्पना, सुंदर सुमिरन येह॥

भजन करत भय भागिया, सुमिरन भागा सोच।
जाप करत जौंरा टल्या, सुंदर साची लोच ॥
सुंदर भजिये राम को तजिये माया मोह।
पारस के परसे बिना, दिन दिन छीजै लोह॥
प्रीति सहित जे हरि भजैं, तब हरि होंहि प्रसन्न।
सुंदर स्वाद न प्रीति बिन, भूख बिना ज्यों अन्न॥

धरनीदास

हरि-जन हरि के हाथ बिकाने।
भावै कहो जग धृग-जीवन है, भावै कहो बौराने ॥
जाति गंवाय अजाति कहाये साधु संगति ठहराने।
मेरो दुख दारिद्र परानो, जूठन खाय अघाने ॥
पांच जने परबल परपंची उलटि परे बंदिखाने।
छूटी मजूरी भये हजूरी साहिब के मनमाने ॥
निरममता निरबेरे सभन तें, निहसंका निरबाने।
धरनी काम राम अपने तें, चरन-कमल लपटाने ॥

प्रभु तो बिन को रखवारा
हौं अति दीन अधीन अकर्मी, बाउर बेल बिचारा।
तू दयाल चारों युग निश्चल कोटिन्ह अधम उधारा ॥
अब के अजस अबर नहिं लागे, सरबस तोहि बड़ाई।
कुल मरजाद लोक लज्जा तजि गह्यो चरन सिर नाइ ॥
मैं तन मन धन तो पर वारो मूरख जानत ख्याला।
ब्याउर बेदन बांझ न बूझे, बिनु दागे नहिं छाला ॥
तुलसी भूषन भेष बनायो, स्रवन सुन्यो मरजादा।
धरनि चरन सरन सब पायो, छुटि हैं बाद बिवादा ॥

जगजीवन

आनंद के सिंधु में आन बसे, तिन को न रह्यो तन को तपनो।
जब आपु में आपु समाय गए, तब आपु में आपु लह्यो अपनो ॥
जब आपु में आपु लह्यो अपनो, तब अपनो ही जाप रह्यो जपनो।
जब ज्ञान को भान प्रकाश भयो, जगजीवन होय रह्यो सपनो ॥

अब मैं कहौं का कछु ज्ञान।
बुद्धि हीन सिद्ध हीन, हौं अजान हैवान ॥
ब्रह्म सेस महेस सुमिरत, गहै अंतर ध्यान।
संत तंते रहन लागे, कहत ग्रंथ पुरान ॥
जोति एकै अहै निरमल, करै सबै बयान।
जहां जैसे भाव आहै, भयो तस परमान ॥
करौ दया जान आपन, नहीं जानहुं आन।
जग जीवनदास सत्य समरथ चरन रहु लिपटान ॥

भीखा साहिब

कोउ लखि रूप सब्द सुनि आई।
अविगत रूप अजायब वानी, ता छबि का कहि जाई ।।
यह तौ सब्द गगन घहरानो, दामिनि चमक समाई।
यह तौ नाद अनाहद निसदिन, परखत अलख सुहाई ।।
यह तौ बादर उठत चहूं दिसि, दिवसहिं सूर छिपाई।
यह तो सुन्न निरंतर बुधुकत, निज आतम दरसाई ।।

यह तौ झरतु है बूंद झराझर, गरजि गरजि झरलाई।
वह तौ नूर जहूर बदन पर, हर दम तूर बजाई ।।
यह तौ चारि मास को पाहुन, कबहुं नाहिं थिरताई।
वह तौ अचल अमर की जै जै, अनंत लोग जस आई ।।
सतगुरु कृपा उभै बर पायो, सत्वत दृष्टि सुखदाई।
भीखा सो है जन्मसंघाती, आवहि जाहि न भाई ।।

चेतत बसंत मन चित चैतन्य, जोग जुगति गुरु ज्ञान धन्य ।।
पधार्यौ पवन घोर, दृष्टि पलान्यो पुरुव ओर।
उलटि गयो थकि मिटति दाह, पच्छिम दिसि कै खुललि राह ।।
सुन्न मंडल में बैठु जाय, उदित उजल छबि सहज पाय।
जोति जगामग झरत नूर, यां निसु दिन नौबति बजत तूर ।।
झलक झनक जिव एक होय, मत प्रान अपान को मिलन सोय।
रूह अलख नभ फूल्यो फूल, गोई केवल आतम राम मूल ।।
देखत चकित अचरज आहि, जो वह सो यह कहौं काहि।
भीखा निज पहिचान लीन्ह, वह साविक ब्रह्म सरूप चीन्ह ।।

पलटू साहिब

फूटि गया असमान सबद की धमक में ।
लगी गगन में आग सुरति की चमक में ॥
सेसनाग औ कमठ लगे सब काँपने ।
अरे हां पलटू सहज समाधि की दसा खबर नहिं अपने ॥

माया की चक्की चलै पीसि गया संसार ॥
पीसि गया संसार बचै ना लाख बचावे ।
दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै ॥
काम क्रोध मद लोभ चक्की के पीसन हारे ।
तिरगुन डारैं झीक पकरि के सबै निकारे ॥
दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवै ।
करमा तवा में धारि सेंकि कै साबित होवै ॥
तृस्ना बड़ी छिनारि जाइ उन सब घर घाला ।
काल बड़ा बरियार किया उन एक निवाला ॥
पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरे पार ।
माया की चक्की चलै पीसि गयो संसार ॥

धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय ॥
चादर लीजै धोय मैल है बहुत समानी ।
चल सतगुरु के घाट भरा जहं निर्मल पानी ॥
चादर भई पुरानि दिनो दिन बार न कीजै ।
सतसंगत में सौंद ज्ञान का साबुन दीजै ॥

छूटै कलमल दाग नाम का कलप लगावै।
चलिया चादर ओढ़ि बहुर नहिं भव जल आवै ॥
पलटू ऐसा कीजिये मन नहिं मैला होय ।
धुबिया फिर मर जायगा चादर लीजै धोय ॥

संत चढ़े मैदान पर तरकस बांधे ग्यान ॥
तरकस बांधे मोह ज्ञान दल मारि हटाई ।
मारि पांच पच्चीस दिहा गढ़ आगि लगाई ॥
काम क्रोध को मारि कैद में मन को कीन्हा ।
नव दरवाजे छोड़ि सुरत दसएं पर दीन्हा ॥
अनहद बाजै दूर अटल सिंहासन पाया ।
जीव भया संतोष आय गुरु नाम लखाया ॥
पलटू कप्फन बांधि कै खेंचो सुरति कमान ।
संत चढ़े मैदान पर तरकस बांधे ग्यान ॥

लागी गांसी सबद की पलटू मुआ तुरंत ॥
पलटू मुआ तुरंत खेत के ऊपर जाई ।
सिर पहिले उड़ि रुंड से करै लड़ाई ॥
तन में तिल तिल घाव परदा खुलि लटकत जाई ।
हेफ खाई सब लोग लड़ै यह कठिन लड़ाई ॥
सतगुरु मारा तीर बीच छाती में मेरी ।
तीर चला होइ पवन निकरिगा तारू फोरी ॥
कहने वाले बहुत हैं कथनी कथै बेअंत ।
लागी गांसी सबद की पलटू मुआ तुरंत ॥

जाकी जैसी भावना तासे तस ब्यौहार।
तासे तस ब्यौहार परसपर दूनौ तारी।
जे जेहि लाइक होय सोइ तस ज्ञान बिचारी॥
जो कोइ डारै फूल ताहि को फूल तयारी।
जो कोई गारी देत ताहि को हाजिर गारी॥
जो कोइ अस्तुति करै अपनी अस्तुति पावै।
जो कोइ निंदा करै ताहि के आगे आवै॥
पलटू जस में पीवका वैसे पीव हमार।
जाकी जैसी भावना तासे तस ब्यौहार॥

चरनदास

पतितउधारन बिरद तुम्हारो ।
जो यह बात सांच है हरि जू, तौ तुम हम कूं पार उतारो ॥
बालपने औ तरुन अवस्था, और बुढ़ापे माहीं ।
हमसे भई सभी तुम जानौ, तुमने नेक छिपानी नाहीं ॥
अनगिन पाप भये मन माने, नख, सिख औगुन धारी ।
हिरि फिरि कै तुम सरनै आयो, अब तुमको है लाज हमारी ॥
सुभ करमन को मारग छूटो, आलस निद्रा घेरो ।
एक हि बात भली बनि आई, जग में कहायो तेरो चेरो ॥
दीनदयाल कृपाल बिसंभर, स्री सुकदेव गुसाईं ।
जैसे और पतित घन तारे, चरनदास की गहियो बाहीं ॥

अब घर पाया हो मोहन प्यारा ।
लखो अचानक अज अबिनासी उघरि गये दृग तारा ॥
झूमि रह्यो मेरे आंगन में टरत नहीं बहु टारा ।
रोम रोम हिय माहीं देखो होत नहीं छिन न्यारा ।
भयो अचरज चरनदास पै ये खोज कियो बहु बारा ॥

अंखियां गुरुदरसन की प्यासी ।
इक टक लागी पंथ निहारूं, तन सूं भई उदासी ॥
रैन दिना मोहिं चैन नहीं है, चिंता अधिक सतावै ।
तलफत रहूं कल्पना भारी, निहचल बुधि नहिं आवै ॥
तन गयो सूख हूक अति लागै, हिरदै पावक बाढ़ी ।
खिन में लेटी खिन में बैठी घर अंगना खिन ठाढ़ी ॥
भीतर बाहर संग सहेली, बातन ही समझावें ।
चरनदास सुकदेव पियारे नैनन ना दरसावें ॥

रैदास

अब कैसे छूटै नाम रट लागी।

प्रभु जी तुम चंदन हम पानी। जा की अंग अंग बास समानी॥
प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा। जैसे चितवत चंद चकोरा॥
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती। जा की जोति बरै दिन राती॥
प्रभु जी तुम मोती हम धागा। जैसे सोनहिं मिलत सुहागा॥
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा। ऐसी भक्ति करै रैदासा॥

नामदेव

एक अनेक व्यापक पूरक, जित देखौं तित सोई ।
माया चित्र बिचित्र बिमोहत, बिरला बूझै कोई ।।
सब गोबिंद है सब गोबिंद है, गोबिंद बिन नहि कोई ।
सूत एक मनि सत्त सहस जस, ओत प्रोत प्रभु सोई ।।
जल तरंग अरु फेन बुदबुदा, जल तें भिन्न न होई ।
यह प्रपंच परब्रह्म की लीला, बिचरत आन न होई ।।
मिथ्या भ्रम अरु स्वप्न मनोरथ, सत्य पदारथ जाना ।
सुकिरत मनसा गुरु उपदेशी, जागत ही मन माना ।।
कहत नामदेव हरि की रचना, देखो हृदय बिचारी ।
घट घट अंतर सर्ब निरंतर, केवल एक मुरारी ।।

——

दूलनदास

जब गज अरध गुहरायो।

जब लगि आवै दूसरा अच्छर, तब लगि आपुहि धायो।।

पांय पियादे भे करुनामय, गरुड़ासन बिसरायो।

धाय गजंद गोद प्रभु लीन्हो, आपनि भक्ति दिढ़ायो।।

मीरा को विष अमृत कीन्हो, बिमल सुजस जग छायो।

नामदेव हित कारन प्रभु तुम, मितेक गाय जियायो।।

भक्त हेतु तुम जुग जुग जनमेउ, तुमहिं सदा यह भायो।

बलि बलि दूलनदास नाम की, नामहिं ते चित लायो।।

सांई तेरे कारन नैना भये बैरागी।

तेरा सत दरसन चहौं, कछु और न मांगी।।

निसु बासर तेरे नाम की, अंतर धुनि जागी।

फेरत हौं माला मनौं, अंसुवन झरि लागी।।

पल की तजी इत उक्ति तें, मन माया त्यागी।

दृष्टि सदा सत सनमुखी, दरसन अनुरागी।।

मदमाते राते मनौं, दाझे बिरह आगी।

मिलि प्रभु दूलनदास के, करु परम सुभागी।।

—— ——

गरीबदास

बंगला खूब बना है जोर, जामें सूरज चंद क डोर ।।
या बंगला के द्वादस दर हैं, मध्य पवन परवाना ।
नाम भजे तो जुग जुग तेरा, नातर होत बिराना ।।
पांच तत्त और तीन गुनन का बंगला अधिक बनाया ।
या बंगले में साहब बैठा, सतगुरु भेद लखाया ।।
रोम रोम तारागन दमकै कली कली दर चंदा ।
सूरजमुखी सबत्तर साजै, बांधा परमानंदा ।।
बंगले में बैकुंठ बनाया, सप्तपुरी सैलाना ।
भुवन चतुरदस लोक बिराजैं, कारीगर कुरबाना ।।
या बंगले में जाप होत है, निरंकार धुन सेसा ।
सुर नर मुनि जन माला फेरैं ब्रह्मा बिस्नु महेसा ।।
गन गंधर्व गलतान ध्यान में, तेंतिस कोट बिराजैं ।
सुर निरंती बीना सुनिये, अनहद नादू बाजैं ।।
इला पिंगला पेंग परी है, सुखमन झूल झुलंती ।
सुरत सनेही सबद सुनत है, राग होत सत तंती ।।
पांच पचीसो मगन भये हैं, देखो परमानंदा ।
मन चंचल निश्चल भया हंसा, मिलै परम सुख सिंधा ।।
नभ की डोर गगन सूं बांधै, तौ इहां रहने पावै ।
दसो दिसा सूं पवन झकोरै काहे दोष लगावै ।।
आठो बदत अल्हैया बाजै होता सबद टंकोरा ।
गरीबदास यूं ध्यान लगावै जैसे चंद चकोरा ।।

सहजोबाई

अब तुम अपनी ओर निहारो ।।

हमरे औगुन पै नहिं जावो, तुमहीं अपनी बिरद सम्हारो ।।

जुग जुग साख तुम्हारी ऐसी, बेद पुरानन गाई ।

पतितउधारन नाम तिहारो, यह सुनके मन दृढ़ता आई ।।

मैं अजान तुम सब कछु जानो, घट घट अंतरजामी ।

मैं तो चरन तुम्हारे लागी, हों किरपाल दयालहि स्वामी ।।

हाथ जोरि के अरज करत हौं, अपनाओ गहि बांहीं ।

द्वार तिहारे आय परी हों, पौरुष गुन मो में कछु नाहीं ।।

चरनदास सहजिया तेरी, दरसन की निधि पाऊं ।

लगन लगी और प्रान अड़े हैं, तुमको छोड़ि कहो कित जाऊं ।।

धर्मदास

गुरु मिले अगम के बासी।
उनके चरनकमल चित दीजे, सतगुरु मिले अबिनासी।
उनकी सीत प्रसादी लीजै, छूटि जाय चौरासी॥
अमृत बुंद झरै घट भीतर, साध संत जन लासी।
धरमदास बिनवै कर जोरि, सार सब्द मन बासी॥

साहब बूड़त नाव अब मोरी।
काम क्रोध की लहर उठतु है, मोह पवन झक झोरी।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी॥
कपट की भंवर परतु हैं बहुतैं, वा में बेड़ा अटको।
काल फांस लियो है द्वारे, आया सरन तुम्हारी॥
धरमदास पर दाया कीन्ही, काटि फंद जिव तारी।
कहैं कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरबन उबारी॥

———

मध्ययुग
रीतिमार्गी शाखा

केशवदास

रतनबावनी

मूकिबाहन गजबदन, एकरदन मुदमूल ।
बंदहुं गणनायक चरण, शरण सदा सुखतूल ।।
ओड़छेंद्र मधुशाहसुत, रतनसिंघ यह नाम ।
बादशाह सौं समर करि, गए स्वर्ग के धाम ।।
तिनकौ कछु बरनत चरित, जा विधि समर सु कीन ।
मारि शत्रुभट निकट अति, सैन सहित परवीन ।।

युद्ध का कारण

जिहि रिस कंपहि रूस रूम, कंपहि रन ऊ नह ।
जिहि कंपहि खुरसान शान तुरकान बिहूनह ।।
जिहि कंपहि ईरान तुर्न तूरान बलख्खह ।
जिहि कंपहि बुख्खार तार तातार सलख्खह ।।
राजाधिराज मधुशाह नृप यह विचार उहित भयव ।
हिंदुवान धर्मरच्छक समुझि, पास अकब्बर के गयव ।।
दिल्लीपति दरबार जाय मधुशाह सुहायव ।
जिमि तारन के मांह द्वंद शोभित छवि छायव ।।
देख अकब्बरशाह उच्च जामा तिन केरा ।
बोले बचन बिचारि कहौ कारन यहि केरो ।।
तब कहत भयव बुंदेलमणि मम सुदेश कंटकि अवन ।
करि कोप ओप बोले बचन मैं देखौं तेरो भवन ।।
सुनत बचन मधुशाह शाह के तीर समानह ।
लिखित पत्र तत्काल हाल तिहिं बचन प्रमानह ।।

जुरहु जुद्ध करि क्रुद्ध जोरि सेना इक ठौरिय ।
तोर तोर तन रोर शोर करिये चहुं ओरिय ।
तुव भुजन भार है कुंवर यह रतनसेन शोभा लहय ।
कछु दिवस गए गढ़ ओड़छो दिल्लीपति देखन चहय ।।
सुनत पत्र मधुशाह को रतनसेन ततकाल ।
करिय तयारी जुद्ध की रोस चढ़ो जिन भाल ।।
साजि चमू मधुशाहसुत हरवल दल कर अग्र ।
हय गय पय दर सजि सकल छांड़ि ओड़छो नग्र ।।

कुमार उवाच

रतनसेन कह वात सूर सामत सुनिज्जिय ।
कहहु पैंज पनधारि भारि सामतन लिज्जिय ।।
वरिय स्वर्ग अच्छरिय हरहु रिपु गर्व सर्व अब ।
जुरि करि संगर आज सुरमंडल भेदहु सब ।।
मधुशाहनंद इमि उच्चरइ खंडखंड पिंडहि करहुं ।
कहहुं सुदंत हथियान के मर्दहु दल यह प्रन धरहुं ।।

विप्र उवाच

जुतौ भूमि तौ बेलि, बेलि लगि भूमि न हारै ।
जुतौ बेलि तौ फूल, फूल लगि बेलि न जारै ।।
जुतौ फूल तौ सुफल, सुफल लगि फूल न तोरै ।
जौ फल तौ परिपक्व, पक्व लगि फलहिं न फोरै ।।
जा फल पक्व तौ काम सब, परिपक्वहिं जग मंडिये ।।
प्रान जुतौ पति बहु रहै, पति लगि प्रान न छंडिये ।।

कुमार उवाच

गई भूमि पुनि फिरहि बेलि पुनि जमै जरे तें ।
फल फूले तें लगहि फूल फूलंत भरे तें ।
केशव विद्या विकट निकट बिसरे तें आवें ।
बहुरि होय धन धर्म गई संपति पुनि पावै ।
फिरि होइ स्वभाव सुशील मति जगत गति यह गाइये ।
प्राण गए फिरि फिरि मिलहि पति न गए पति पाइये ।।

विप्र उवाच

मातु हेत पितु तजिय, पिता के हेत सहोदर ।
सुतहि सहोदर हेत, सखा सुत हेत तजहु वर ।
सखा हेत तजि बंधु बंधुहित तजहु सुजन जन ।
सुजन हेत तजि सजन सजन हित तजहु सुखन मन ।
कहि केशव सुख लगि घरनि तजि, घरनीहित घर खंडिये ।
सुइ छंडिय सब घर हेत पति, प्राण हेत पति छंडिये ।।

कुमार उवाच

जासु बीज हरि नाम जम्यो सुचि सुकृति भूमि थल ।
एकादशी अनेक बिमल कोमल जाने दल ।
द्विज चरणोदक बुंद कंद सीचत सुख बड्ढिय ।
गोदानन के हेत धर्म तरुवर दिन चड्ढिय ।।
सत्त फूल फुल्लिय सरस सुयश बास जग मंडिये ।
कहि केशव फलती बेर कर "पति" फल किमि कर छंडिये ।

विप्र उवाच

दानी कहा न देय चोर पुनि कहा न हरई ।
लोभी कहा न लेय आग पुनि कहा न जरई ।
पापी कहा न करै कह न बेचै ब्यौपारी ।
मूक बिन बरनै कहा कहा साधू न संचारी ॥
सुनि महाराज मधुशाहसुव सूर कहा नहिं मंडई ।
कहि केशव घर धन आदि दै साधु कहां नहि छंडई ॥

कुमार उवाच

पंच कहैं सो कहिय, पंच के कहन कहिज्जिय ।
पंच लहैं सो लहिय, पंच के लहन लहिज्जिय ॥
पंच रहैं तो रहिय, पंच के दिष्षित दिष्षिय ।
परमेसुर अरु पंच सबन, मिलि इक्कय लिष्षिय ॥
सुनि रतनसेन मधुशाह सुव पंच साथ नहिं लज्जिये ।
कहि केशव पंचन संग रहि, पंच भजैं तहं भज्जिये ॥

विप्र उवाच

द्विज मांगै सो देव विप्र को वचन न खंडिय ।
द्विज बोलै सो करिय विप्र को मान न भंगिय ॥
परमेस्वर अरु विप्र एक सम जानि सु लिज्जिय ।
विप्र वैर नहि करिय विप्र कहं सर्व सु दिज्जिय ॥
सुनि रतनसेन मधुशाहसुव विप्र बोल किन लिज्जियहु ।
कहि केशव तन मन वचने करि विप्र कहय सुइ किज्जियहु ॥

कुमार उवाच

पतिहिं गए मति जाय, गएं मति मान गरै जिय ।
मान गरे गुन गरै गरे गुन लाज जरै जिय ॥
लाज जरे जस भजै भजे जस धरम जाइ सब ।
धरम गये सब करम करम गए पाप बसै तब ॥
पाप बसे नरकन परै नरकन केशव को सहै ।
यह जान देहुं सरबसु तुम्हें सुपीठ दएं पति ना रहे ॥
पति मति अति दृढ़ जानि कर सुनि सब वचन समाज ।
राम रूप दरसन दियौ केवल त्रिभुवनराज ॥

रामायण-युद्ध

रावण चले चले ते धाम धाम ते सबै ।
साजि साजि साज सूर गाजि गाजि कै तबै ॥
देव दुंदुभी अपार भांति भांति बाजहीं ।
युद्ध भूमि मध्य क्रुद्ध मत्त दत राजहीं ॥

इंद्र श्रीरघुनाथ को रथहीन भूतल देखि कै ।
वेगि सारथि सों कहेउ रथ जाहि लै सु विशेषि कै ॥
तूण अंक्षय बाण स्वच्छ अभेद ले तन त्राण को ।
आइयो रणभूमि में करि अप्रमेय प्रणाम को ॥
कोटि भांतिन पौन ते मन ते महा लघुता लसै ।
बैठि कै ध्वज अग्र श्री हनुमंत अंतक ज्यौ हंसै ॥
रामचंद्र प्रदक्षिणा करि दक्ष ह्वै जलदी चढ़े ।
पुष्प वर्षि, बजाय दुंदुभि देवता बहुधा बढ़े ॥

राम को रथमध्य देखत क्रोध रावण के बढ्यौ।
वीस बाहुन की शरावलि ब्योम भूतल सो मढ्यौ॥
शैल ह्वै सिकता गई सब दृष्टि के बल संहरे।
ऋक्ष बानर भेदि तत्क्षण लक्षधा छतना करे॥
बाणन साथ बिधे सब बानर। जाय परे मलयाचल की धर॥
सूरजमंडल मे इक रोवत। एक अकाशनही मुख धोवत॥
एक गये यमलोक सहे दुख। एक कहें भव भूतन सों रुख॥
एक खते सागर मांझ परे मरि। एक गए बड़वानल में जरि॥
श्री लक्ष्मण कोप कर्‌यौ जबहीं। छोड़्यौ शर पावक को तब ही॥
जार्‌यौ शरपंजर छार कर्‌यौ। नैकृत्यन को अति चित्त डर्‌यौ॥
दौरे हनुमंत बली बल सों। लै अंगद संग सबै दल सों॥
माने गिरिराज तजे डर को। घेरें चहुं ओर पुरंदर को॥
अगद रण अगन तब अंगद मुरझाइ कै।
ऋक्षपतिहि अक्षरिपुहिं लक्षगति बुझाइ कै॥
वानर गण वाणान सन केशव जबही मुर्‌यौ।
रावण दुखदावन जगपावन समुहे जुर्‌यौ॥
इंद्रजीत जीति आनि रोकियो सुवाण तानि।
छोड़ि दीनि बीर बानि कान के प्रमान आनि॥
स्यों पताक काटि चाप चर्म वर्म मर्म छेदि।
जात भो रसातलै अशेष कंठमाल भेदि॥
सूरज मुसल नील पट्टिश परिघ नल। जामवंत हनू तोमर प्रहारे है॥
परसा सुखेन कुंत केशरी गवय शूल। विभीषणगदा गज भिंदिपाल तारे है॥
मोगराद्विविद तीर कटरा कुमुद नेजा। अंगद शिला गवाक्ष विटप विदारे है॥
अंकुश शरभ चक्र दधिमुख शेषशक्ति। बाण तिन रावण श्रीरामचंद्र मारे है॥

द्वैभुज श्री रघुनाथ को बिरचे युद्धविलास।
बाहु अठारह यूथपनि मारे केशवदास॥

युद्ध जोई जहां भांति जैसी करै। ताहि ताही दिशा रोकि राखै तहीं॥
अस्त्र आपने लै शस्त्र काटै सबै। ताहि केहूं कहूं घाव लागै नहीं॥
दौरि सौमित्र लै बाण कोदंड ज्यों। खंड खंडी ध्वजा धीर छत्रावली॥
शैल श्रृंगावली छोड़ि मानो उड़ी। एक ही बेर कै हंसवंशावली॥

लक्ष्मण शुभलक्षण बुद्धविचक्षण रावण सों रिस छेड़ दई।
बहु बाणनि छंड़ै जे सिर खंड़ै ते फिर खंड़ै शोभ नई॥
यद्यपि रणपंडित गुणगणमंडित रिपुबलखंडित भूल रहे।
तजि मन बच कायक सूर सहायक रघुनायक सों बचन कहे॥
ठाढ़ौ रण गाजत केहु न भाजत तन मन लाजत सब लायक।
मुनि श्री रघुनंदन मुनिजनबंदन दुष्टनिकदन सुखदायक॥
अब टरै न टार्यो मरै न मार्यो हौ हठि हार्यो धरि शायक।
रावण नहिं मारत देव पुकारत ह्वै अति आरत जगनायक॥

जेहि शर मधुमद मरदि महासुर मर्दन कीन्हेउं।
मारेहु कर्कश नर्क शंख हति शंख जो लीन्हेउं॥
निष्कंटक सुर कटक कर्यौ कैटभ वपु खंड्यौ।
खर दूषण त्रिशिरा कबंध तरुखंड विहंड्यौ॥
कुंभकरण जेहि संहर्यो पल न प्रतिज्ञा ते टरौ।
तेहि बाण प्राण दशकंठ के कंठ दशौं खंडित करौ॥
रघुपति पठयौ आसु ही असुहर बुद्धि निदान।
दशशिर दश हू दिशन को बलि दै आयौ बान॥

भवभारहि संयुत राकस को, गण जाइ रसातल में अनुराग्यो।
जग में जय शब्द समेतिहि केशव, राज विभीषण के सिर जाग्यो॥
भय दानवनंदिनि के सुख सों, मिलिके सियके हिय को दुख भाग्यो।
सुरदुंदुभि सीस वजी शर राम को, रावण के शिर साथहिं लाग्यो॥

बिहारी

मेरी भव-बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झांई परें, स्यामु हरित-दुति होइ ।।
बहके सब जिय की कहत, ठौरु कुठौरु लखें न ।
छिन औरै छिन और से, ए छवि छाके नैन ।।
फिरि फिरि चितु उतहीं रहतु, टुटी लाजकी लाव ।
अंग-अंग-छवि-झौंर, में, भयौ भौंर की नाव ।।
नीकी दई अनाकनी, फीकी परी गुहारि ।
तज्यौ मनौ तारन-बिरदु, बारक बारनु तारि ।।
दीरघ सांस न लेहि दुख, सुख साईंहि न भूलि ।
दई दई क्यों करतु है, दई दई सु कबूलि ।।
मरी डरी की टरी बिथा, कहा खरी चलि चाहि ।
रही कराहि कराहि अति, अब मुंह आहि न आहि ।।
कहा भयौ जौ बीछुरे, मो मनु तो मन साथ ।
उड़ी जाउ कित हूं तऊ, गुड़ी उड़ायक-हाथ ।।
सीतलता रु सुबास की, घटै न महिमा मूरु ।
पीनसवारें जौ तज्यौ, सोरा जानि कपूरु ।।
कागद पर लिखत न बनत, कहत संदेसु लजात ।
कहि है सब तेरौ हियौ, मेरे हिय की बात ।।
बंधु भये का दीन के, को तार्‌यो रघुराइ ।
तूठे तूठे फिरत हो, झूठे बिरद कहाइ ।।
जब जब वै सुधि कीजिये, तब तब सब सुधि जाहिं ।
आंखिनु आंखि लगी रहैं, आंखैं लागति नाहिं ।।

थोरें ही गुन रीझते, बिसराई वह बानि ।
तुम हूं कान्ह मनौ भए, आज कालिह के दानि ।।
कब कौ टेरतु दीन रट, होत न स्याम सहाइ ।
तुम हूं लागी जगतगुरु, जग-नायक जग-बाइ ।।
पत्रा ही तिथि पाइये, वा घर कै चहुं पास ।
नित प्रति पून्यौई रहै, आनन ओप उजास ।।
कोऊ कोरिक संग्रहौ, कोऊ लाख हजार ।
मो संपति जदुपति सदा, बिपति बिदारनहार ।।
तंत्री-नाद कवित्त-रस, सरस-राग रतिरंग ।
अनबूड़े बूड़े तरे, जे बूड़े सब अंग ।।
प्रगट भए द्विजराज-कुल, सुबस बसे ब्रज आइ ।
मेरे हरौ कलेस सब, केसव केसव राइ ।।
या अनुरागी चित्त की, गति समुझै नहि कोइ ।
ज्यौं ज्यौं बूड़े स्याम रंग, त्यों त्यौं उज्जलु होइ ।।
कैसे छोटे नरन तें, सरत बड़नु के काम ।
मढ़्यौ दमामौ जातु कहु, कहि चूहे कै चाम ।।
सकत न तुव ताते बचन, मो रस कौ रस खोइ ।
खिन खिन औटे खीर लौं, खरौ सवादिलु होइ ।।
जपमाला छापा तिलक, सरै न एकौ कामु ।
मन कांचै नाचै बृथा, साचै राचै रामु ।।
घरु घरु डोलत दीन ह्वै, जनु जनु जाचतु जाइ ।
दियें लोभ चसमा चखनु, लघु पुनि बड़ौ लखाइ ।।
मै समुझ्यौ निरधार, यह जगु कांचो कांच सौ ।
एकै रूपु अपार, प्रतिबिंबित लखियतु जहां ।।

कनकु कनकु तै सौगुनी, मादकता अधिकाइ ।
उहिं खाएं बौराइ इहि, पाये ही बौराइ ॥
कीजै चित सोई तरे, जिहि पतितनु के साथ ।
मेरे गुन-औगुन सबनु, गनौ न गोपीनाथ ॥
संगति सुमति न पावही, परै कुमति कै धंध ।
राखौ मेलि कपूर में, हींग न होइ सुगंध ॥
जोन्ह नहीं यह तमु वहै, किए जु जगत निकेतु ।
होत उदै ससि के भयो, मानहु ससहरि सेतु ॥
जान जात बितु होतु है, ज्यौं जिय मैं संतोषु ।
होत होत जो होइ तौ, होइ घरी में मोषु ॥
गिरि तै ऊंचे रसिक-मन, बूड़े जहां हजारु ।
वहै सदा पसु नरनु कौ, प्रेम-पयोधि पगारु ॥
जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सु बीति बहार ।
अब अलि रही गुलाब मैं, अपत कंटीली डार ॥
मै बरजी कै बार तू, इत किन लेति करौट ।
पंखुरी लगै गुलाब की, परिहै गात खरौट ॥
सूर उदित हू मुदित मन, मुखु सुखमा की ओर ।
चितै रहत चहु ओर तै, निहचल चखनु चकोर ॥
मोहूं दीजै मोषु ज्यौ, अनेक अधमनु दियौ ।
जौ बांधै ही तोषु तौ, बाधौ अपनै गुननु ॥
सबै हसत करतार दै, नागरता कै नाउं ।
गयौ गरबु गुन कौ सरबु, गए गंवारै गाउं ॥
मै तपाइ त्रय ताप सौ, राख्यौ हियौ हमामु ।
मति कबहुंक आएं यहां, पुलकि पसीजै स्यामु ॥

स्वारथु सुकृतु न श्रमु वृथा, देखि विहंग बिचारि ।
बाज पराए पानि परि, तू पछीनु न मारि ॥
सीस मुकट कटि काछनी, कर मुरली उर माल ।
इहि बानक मो मन सदा, बसौ बिहारीलाल ॥
भृकुटी–मटकनि पीतपट, चटक लटकती चाल ।
चल चख चितवनि चोरि चितु, लियौ बिहारीलाल ॥
न ए बिससियहि लखि नए, दुरजन दुसह–सुभाई ।
आटें परि प्रानन हरत, कांटे लौं लगि पाइ ॥
सखि सोहति गोपाल कैं, उर गुंजनु की माल ।
बाहिर लसत मनौ पिए, दावानल की ज्वाल ॥
बढ़त बढ़त संपति–सलिलु, मन–सरोजु बढ़ि जाइ ।
घटत घटत सु न फिरि घटै, बरु समूल कुम्हिलाइ ॥
दुसह दुराज प्रजानु कौ, क्यौं न बढ़ै दुख–दंदु ।
अधिक अंधेरो जग करत, मिलि मावस रवि चंदु ॥
तौ लगु या मन–सदन में, हरि आवैं किहि बाट ।
बिकट जुटे जौ लगु निपट, खुलै न कपट–कपाट ॥
प्यासे दुपहर जेठ के, फिरे सबै जलु सोधि ।
मरुधर पाइ मतीरु ही, मारू कहत पयोधि ॥
कहत सबै बेंदी दियैं, आंकु दस गुनौ होतु ।
तिय–लिलार बेंदी दियैं, अगनितु बढ़तु उदोतु ॥
सरस कुसुम मंडरातु अलि, न झुकि झपटि लपटातु ।
दरसत अति सुकुमारता, परसत मन न पत्यातु ॥
भजन कह्यो ता तैं भज्यौ, भज्यौ न एकौ बार ।
दूरि भजन जा तैं कह्यौ, सो तैं भज्यौ गंवार ॥

पनवारी माला पकरि, और न कछु उपाउ ।
तरि संसार-पयोधि कौ, हरि-नावैं करि नाउ ॥
जौ चाहत चटक न घटै, मैलो होइ न मित्त ।
रज-राजसु न छुवाइए, नेह-चीकनै चित्त ॥
कोरि जतन कीजै तऊ, नागर-नेहु दुरै न ।
कहै देत चितु चीकनौ, नई रुखाई नैन ॥
यह बरिया नहिं और की, तू करिया वह सोधि ।
पाहन-नाव चढ़ाइ जिहि, कीने पार पयोधि ॥
अति अगाधु अति औथरो, नदी कूप सरु बाइ ।
सो ताकौ सागरु जहा, जा की प्यास बुझाइ ॥
मानहु बिधि तन-अच्छ छबि, स्वच्छ राखिबै काज ।
दृग-पग-पोंछन कौ करे, भूषन पायंदाज ॥
मोर-मुकुट की चंद्रिकनु, यौ राजत नंदनंद ।
मनु ससि सेखर की अकस, किय सेखर सतचंद ॥
अधर धरत हरि कै परत, ओठ डीठि पट जोति ।
हरित बांस की बांसुरी, इंद्रधनुष-रंग होति ॥
तौ अनेक औगुन भरिहिं, चाहै याहि बलाइ ।
जौ पति संपति हूं बिना, जदुपति राखे जाइ ॥
करौ कुबत जगु कुटिलता, तजौ न दीनदयाल ।
दुखी होउगे सरलचित, बसत त्रिभंगी लाल ॥
निज करनी सकुचेंहि कत, सकुचावत इहि चाल ।
मोहूं से नित बिमुख त्यों, सनमुख रहि गोपाल ॥
मोहिं तुम्हें बाढ़ी बहस, को जीतै जदुराज ।
अपनैं अपनैं बिरद की दुहूं निबाहन लाज ॥

दूरि भजत प्रभु पीठि दै, गुन बिस्तारन काल।
प्रगटत निर्गुन निकट रहि, चंग-रंग भूपाल॥
कहै यहै स्रुति सुम्रित्यौ, यहै सयानै लोग।
तीन दबावत निसकही, पातक राजा रोग॥
जो सिर धरि महिमा मही, लहियति राजा राइ।
प्रगटत जड़ता अपनियै, सु मुकटु पहिरत पाइ॥
को कहि सकै बड़ेनु सौ, लखै बड़ीयौ भूल।
दीने दई गुलाब को, इन डारनु वे फूल॥
समै समै सुंदर सबै, रूपु कुरूपु न कोइ।
मन की रुचि जेती जितै, तित तेती रुचि होइ॥
या भव पारावार कौ, उलंघि पार को जाइ।
तियछवि छायाग्राहिनी, ग्रहै बीच ही आइ॥
दिन दस आदरु पाइकै, करि लै आपु बखानु।
जौ लगि काग सराध पखु, तौ लगि तौ सनमानु॥
मरनु प्याम पिजरा पर्‍यौ, सुआ समै कै फेर।
आदरु दै दै बोलियतु, बाइसु बलि की बेर॥
इहीं आस अटक्यौ रहतु, अलि गुलाब कै मूल।
ह्वैहैं फेरि बसंत ऋतु, इन डारन वे फूल॥
वे न इहां नागर बड़े, जिन आदर तो आब।
फूल्यो अनफूल्यो भयौ, गवई गांव गुलाब॥
चल्यो जाइ ह्यां को करै, हाथिनु कौ व्यौपार।
नहिं जाननु इहिं पुर बसै, धोबी ओड़ कुम्हार॥
खल बढ़ई बलु करि थके, कटै न कुबत-कुठार।
आलबाल उर झालरी, खरी प्रेमतरु डार॥

कत बेकाज चलाइयति, चतुराई की चाल।
कहे देति यह रावरे, सब गुन निग्गुन माल ॥
उनकौ हितु उनही बनै, कोऊ करौ अनेकु।
फिरतु काक गोलकु भयौ, दुहूं देह ज्यों एकु ॥
इक भीजें चहलै परै, बूडै बहैं हजार।
किते न औगुन जग करै, बै-नै चढ़ती बार ॥
नाचि अचानक ही उठे, बिनु पावसु बन मोर।
जानति हौ नदित करी, यह दिसि नंदकिसोर ॥
मैं यह तोहीं मैं लखी, भगति अपूरब बाल।
लहि प्रसाद-माला जु भौ, तनु कदंब की माल ॥
नहि पावसु ऋतुराजु यह, तजि तरवर चित-भूल।
अपतु भए बिनु पाइहै, क्यों नव दल फल फूल ॥
कहलाने एकत बसत, अहि मयूर मृग बाघ।
जगतु तपोबन सौ कियौ, दीरघ दाघ निदाघ ॥
पग पग अगमन है परत, चरन अरुन दुति झूलि।
ठौर ठौर लखियत उठे, दुपहरिया से फूलि ॥
नीच हियै हुलसे रहैं, गहे गेंद को पोत।
ज्यौ ज्यौ माथै मारियत, त्यौ त्यौ ऊंचे होत ॥
लोपे कोपे इंद्र लौ, रोपे प्रलय अकाल।
गिरिधारी राखे सबै, गो गोपी गोपाल।
प्रलय-करन बरपन लगे, जुरि जलधर इक साथ।
सुरपति-गरब हर्यो हरषि, गिरिधर गिरिधर हाथ ॥
अपनै अपनै मत लगे, बादि मचावत सोरु।
ज्यौं त्यौ सब कौ सेइबौ, एकै नंदकिसोरु ॥

बुरौ बुराई जौ तजै, तौ चितु खरौ डरातु ।
ज्यौं निकलंकु मयंकु लखि, गनै लोग उतपातु ।।
ओछे बड़े न ह्वै सकै, लगौ सतर ह्वै गैन ।
दीरघ होंहि न नैक हू, फारि निहारै नैन ।।
पटु पाखै भखु कांकरै, सदा परेई संग ।
सुखी परेवा पुहुमि में, एकै तु ही विहंग ।।
अरे परेखौ को करै, तुहीं बिलोकि बिचार ।
किहि नर किहिं सर राखियं, खरै बढ़ै परिवार ।।
तौ बलियै भलियै बनी, नागर नंद--किसोर ।
जौ तुम नीकै कै लख्यौ, मो करनी की ओर ।।
समै पलट पलटै प्रकृति, को न तजै निज चाल ।
भौ अकरुन करुना करौ, इहि कपूत कलिकाल ।।
गोधन तू हरष्यौ हियै, घरियक लेहि पुजाइ ।
समुझि परैगी सीस पर, परत पसुनु के पाइ ।।
सामा सेन सयान की, सबै साहि कै साथ ।
बाहु बली जय साहि जू, फते तिहारे हाथ ।।
यौं दल काढे बलख तैं, तैं जयसिंह भुवाल ।
उदर अघासुर कै परै, ज्यौं हरि गाइ गुवाल ।।
घर घर तुरकिनि हिंदुनी, देति असीस सराहि ।
पतिनु राखि चादर चुरी, तैं राखी जय साहि ।।
हुकुम पाइ जयसाहि को, हरि राधिका प्रसाद ।
करी बिहारी सतसई, भरी अनेक सवाद ।।

मतिराम

मो मन–तम–तोमहिं हरौ, राधा को मुख चंद ।
बढ़ै जाहि लखि सिंधु लौं, नंद–नंदन–आनंद ।।
मंजु गुंज के हार उर, मुकुट मोर–पर–पुंज ।
कुंजबिहारी बिहरियै, मेरेई मन – कुंज ।।
नंदलाल कहियै कहां, लह्यो अपूरब हार ।
गुन–बिहीन किंसुकनि कौ, तिन मधि मुकुर सुधार ।।
नैन बिसारे बान सौं, चली बटाउहिं मारि ।
वचन–सुधा रस सींचि कै, वाहि जीव दै नारि ।।
रोस न करि जौ तजि चल्यौ, जानि अंगार गंवार ।
छितिपालनि की माल मैं, तैं हीं लाल सिंगार ।।
कहा भयौ मतिराम हिय, जौ पहिरी नंद लाल ।
लाल मोल पावै नहीं, लाल गुंज की माल ।।
गुन औगुन को तनकऊ, प्रभु नहिं करत विचार ।
केतकि कुसुम न आदरत, हर सिर धरत कपार ।।
निज बल को परिमान तुम, तारे पतित बिसाल ।
कहा भयो जु न हौं तरतु, तुम खिस्याहु गोपाल ।।
बसिबे को निज सरबरनि, सुर जाको ललचाहिं ।
सो मराल बक-ताल मैं, पैठन पावत नाहिं ।।
अद्भुत या धन कौ तिमिर, मो पै कह्यो न जाइ ।
ज्यौं ज्यौं मनिगन जगमगत, त्यौं त्यौं अति अधिकाइ ।।
सतरौहीं भौंहनि नहीं, दुरै दुराऐं नेह ।
होति नाम नंदलाल कौ, नीपमाल सी देह ।।

जिन कै सील समान है, सांचे होत सु मित्र ।
नेही चंचल चखनि कौ, चाह्यौ चंचल चित्त ।।
खिन मे पुलकित होत है. खिन में मुकुलित होत ।
इंदीबर अरबिद से, चख मुख इंदु-उदोत ।।
ग्रीषम हू रबि तपन हूं, रहै जलद जनु झूमि ।
तपी दृगनि मीतल करै, गांउ निकट की भूमि ।।
अरुन बसन निकरी पहरि, पावस मै छबिखानि ।
इंद्र–गोप मी गोपिका, गोप-इद्र लखि आनि ।।
कियौ और कौ सब कछू, मान आपनौ लेइ ।
क्यौ न लहै संताप जौ, भार आप सिर देइ ।।
मो जीवन तू कहतु है, ब्रज-जीवन तू पीउ ।
जु पै जीव बिन जियत तौ, धिग जीवन यह जीउ ।।
प्रान निवासी तोहिं तजि, कब कौ कियौ उजार ।
तू अजहूं लौ बसतु है, प्रान कहा सु बिचार ।।
निज पग-सेवक समुझि करि, करि उर तै रिस दूरि ।
तेरी मृदु मुसक्यानि है, मेरी जीवन मूरि ।।
प्रतिबिबित तौ बिब मै, भूतल भयो कलंक ।
निज निरमलता ही दोष यह, मन में मानि मयंक ।।
तिहि पुरान भव द्वै पढ़े, जिहिं जानी यह बात ।
जो पुरान मो नव सदा, नव पुरान ह्वै जात ।।
सपने मैं सपनौ समुझि, होति दूरि ज्यौ संक ।
संक छोड़ि मंसार की, रहि जानी निहसंक ।।
हियें बसत मुख हसत हौ, हम कौ करत निहाल ।
घट-घट-व्यापी ब्रह्म तुम, प्रगट भए नंदलाल ।।

मो मन मेरी बुद्धि लै, करि हर कौ अनुकूल ।
लै त्रिलोक की साहिबी, दै धतूर को फूल ॥
तौ मुख-छबि सौं हारि जग, भयौ कलंक समेत ।
सरद इदु अरबिंदमुखि, अरबिदनि दुख देत ॥
मधुप-मोह मोहन तज्यौ, यह स्यामनि की रीति ।
करौ आपने काज कौ, तुम्हैं जानि सी प्रीति ॥
मत्रिनि के बस जो नृपति, सो न लहत सुख-साज ।
मनहि बांधि दृग देत दृग, मन-कुमार कौ राज ॥
स्याम-रूप अभिराम अति, सकल बिमल गुन-धाम ।
तुम निसि दिन मतिराम की, मति बिसरौ मति राम ॥
प्रेम लग्यौ अंगार ह्वै, सीता मन बिन ज्ञान ।
देत अगूठी राम की, मानिक भो हनुमान ॥
प्रतिपालक सेवक सकल, खल दल मलत हैं डांटि ।
शंकर तुम मम सांकरै, सबल सांकरै काटि ॥
सेवक सेवा के सुनें, सेवा देव अनेक ।
दीनबधुहरि जगत है, दीनबंधु हर एक ॥
अब फिरि आवत है नही, सो तन जीवन-हीन ।
तो तन पानिप-रूप मैं, मौ मन-मीन बिलीन ॥
भई देवता भाव सब, हौ तुमको बलि जाउं ।
वाही कौ मुख रूप मन, वाही कौ मुख नाउं ॥
अधम अजामिलि आदि जे, हौं तिनको हौ राउ ।
मो हूं पर कीजै दया, कान्ह दया-दरियाउ ॥
पगी प्रेम नंदलाल कैं, हमैं न भावत जोग ।
मधुप राजपद पाइ कै, भीख न मांगत लोग ॥

छोड़ि नेह नंदलाल कौ, हम नहिं चाहति जोग।
रंग बाती क्यों लेत है, रतन-पारखी लोग॥
भोग नाथ नरनाथ के, गुन-गन बिमल बिसाल।
भिच्छुक सेवत पानि हैं, पग सेवत महिपाल॥
छांह बिना ज्यौं जेठ रवि, ज्यौं बिनु ओषधि रोग।
ज्यौं बिनु पानी प्यास यौं, तेरौ दुसह बियोग॥
कपट बचन अपराध तें, निपट अधिक दुखदानि।
जरे अंग में संकु ज्यौं, होत बिथा की खानि॥
पीत झंगुलिया पहिरि कै, लाल लकुटिया हाथ।
धूरि भरे खेलत रहें, ब्रजबासिनि ब्रजनाथ॥
मेरी मति में राम हैं, कवि मेरे 'मति राम'।
चित मेरौ आराम में, चित मेरे आ राम॥

रसनिधि

जाकौ गति चाहत दियौ, लेत अगति तें राखि।
रसनिधि हैं या बात के, भक्त भागवत साखि ॥
भूले तें करतार के, रागु न आवै रास।
यही समझ कै राख तू, मन करतारैं पास ॥
हरि कौ सुमिरौ हर घरी, हरि हरि ठौर जुबान।
हर बिधि हरि के ह्वै रहौ, रसनिधि संत सुजान ॥
मनि समान जाके मनी, नैकु न आवत पास।
रसनिधि भावुक करत है, ता ही मन में बास ॥
परम दया करि दास पै, गुरू करी जब गौर।
रसनिधि मोहन भाव तौ, दरसायौ सब ठौर ॥
पाप पुन्य अरु जोति तें, रवि ससि न्यारे जान।
जद्यपि सो सब घटन में, प्रतिबिंबित है आन ॥
आपु भंवर आपुहि कमल, आपुहि रंग सुबास।
लेत आपुही बासना, आपु लसत सब पास ॥
पवन तु ही पानी तु ही, तु ही धरनि आकास।
तेज तु ही पुनि जीव है, तु ही लियौ तन बास ॥
कहूं हाकमी करत है, कहूं बंदगी आइ।
हाकिम बंदा आप ही, दूजा नहीं दिखाइ ॥
मोहनवारौ आपु ही, मनिमानिक पुनि आपु।
पोहनवारौ आपु ही, जोहनिहारौ आपु ॥
पंचन पंच मिलाइ कै, जीव ब्रह्म में लीन।
जीवन-मुक्त कहावही, रसनिधि वह परबीन ॥

हिंदू में क्या और है, मुसलमान में और।
साहिब सब का एक है, व्याप रहा सब ठौर॥
सज्जन पास न कहु अरे, ये अनसमझी बात।
मोम-रदन कहुं लोह के, चना चबाए जात॥
बेदाना सें होत है, दाना एक किनार।
बे दाना नहिं आदरें, दाना एक अनार॥
हित कग्यित यह भानि सौ, मिलियत है वह भांत।
छीर नीर तें पूछ लै, हित करिबे की बात॥
घट बढ इन में कौन है, तु ही सामरे ऐन।
तुम गिरि लै नख पै धरचो, इन गिरिधर लै नैन॥
जान अजान न होन है, जगत विदित यह बात।
बेर हमारी जान कै, क्यों अजान होइ जात॥
जदपि भयौ है समि अरे, मन ही तें उतपन्न।
तउ चकोरन मन विथर, नीकौ जानत धन्न॥
जे अंखियां बैगइहीं, लगै विरह की बाइ।
प्रीनम-पग-रज कौ तिन्हें, आंजन देहु लगाइ॥
निकसन नाहीं जतन कर, रही करेजे साल।
चुबक मीत मिले बिना, बिरह साल की भाल॥
रे निरमोही मनहरन, आरे आरे आइ।
भारे आरे विरह के, मन मो सीस चलाइ॥
पल अंजुग्नि मौ पियत दृग, जल अंसुवा भर सांस।
गनत रहत है अवधि के, दिन पखवारे मास॥
मोहन लखि जो वदन मुख, मो कछु कहत बनै न।
नैनन कै रमना नही, रमना कै नहि नैन॥

अरी मधुर अधरान तैं, कटुक बचन मत बोल।
तनक खुटाई तैं घटै, लखि सुवरन को मोल॥
जग तरबर तैं फल लगैं, जौ लग कांचौ गात।
पाके तै फल आप ही, डारनि तै छुटि जात॥
बिन औसर न सुहाइ तन, चंदन त्यावै मार।
औसर की नीकी लगैं, दीती सौ सौ गार॥
बित-चोरन चित-चोर मै ब्योरौ इतनौ आइ।
इन्हें पाइकै मारियै, उनके लगियै पाइ॥
समै पाइकै लगत है, नीचहु करत गुमान।
पाय अमर-पख दुजनि लौं काग चहै सनमान॥
झूठे ही जर जात हैं, याके साखी पांच।
देखी कै काहू सुनी, लगत सांच कौ आंच॥
रे कुचील तन तेलिया अपनौ मुख तौ हेर।
सुमननि बासे तिलन कौ काहे डारत पेर॥
रवि, ससि, अवनि सघन पवन, और अगिन की ज्वाल।
ऊंच नीच घर सम लखै, दुबिधा तज कै लाल॥
होत दूबरौ कूबरौ, ससि तै हर पखवार।
तो ही सौ हित राखही, दृग चकोर रिझवार॥
हरी करत है पुहुमि सब, घन तू रस बरसाइ।
आक जवासे कौ अरै, काहे देत जराइ॥
तोय मोल मै देत हौ, छीरहि सरस बढ़ाइ।
आंच न लागन देत वह, आप पहिल जर जाइ॥
अरे निरदई मालिया, फूले सुमननि तोर।
नैक कसक कर हेर तौ, प्रीत डार की ओर॥

प्यास सहत पी सकत नहि, औघट घाटनि पान।
गज की गरुवाई परी, गज ही के गर आन॥
औघट घाट पखेरुवा, पीवत निरमल नीर।
गज गरुवाई तें फिरैं, प्यासे सागर तीर॥
धरि सौनैं कैं पींजरा, राखौ अमृत पिवाइ।
विष कौ कीरा रहत है, विष ही मैं सुख पाइ॥
कीलत काठ कठोर क्यौं, होत कमल मैं बंद।
आई सो मनभंवर की, इतनी बात पसंद॥
सब ही कौ पोसत रहै, अमृत-कला सरसाइ।
ससि चकोर के दरद कौ, अजौं सकत नहि पाइ॥
समय पाइकैं रूप धन, मिलत सबैई आइ।
बिलम न जानैं याद जो, समय गए पछताइ॥
बैठत इक पग ध्यान धरि, मीनन कौ दुख देत।
बक मुख कारे हो गए, रसनिधि या ही हेत॥
अमित अथाहै हो भरे, जदपि समुद अभिराम।
कौन काम के जौ न तुम, आए प्यासन काम॥
ससि निरमोही हो भले, भोर भयैं घर जाव।
दिनकर बिरह चकोर कौ, मेट न सकिहै दाव॥
तेरी है या साहिबी, वार पार सब ठौर।
रसनिधि कौ निसतार लै, तु ही प्रभू कर गौर॥
रोम रोम जो अघ भर्यो, पतितन में सिरनाम।
रसनिधि वाहि निबाहिबौ, प्रभु तेरोई काम॥
गंग प्रगट जिहि चरन तैं, पावन जग कौ कीन।
तिहि चरनन कौ आसरौ, आइ रसिकनिधि लीन॥

मधुसूदन यह बिरह अरु, अरि नित मांड़त रार।
करुनानिधि अब यह समै, अपनौ बिरद बिचार॥
लखि औगुन तन आपनै, भूल सबै सुधि जाइ।
अधम-उधारन बिरद तुव, रसनिधि सुमिर सुहाइ॥
भगतन तौ तुम तारिहौ, अधम कौन पै जांइ।
अधम उधारन तुम बिना, उन्हैं ठौर कहुं नांइ॥
गिनति न मेरे अघन की, गिनती नहीं बढ़ाइ।
असरन-सरन कहाइ, प्रभु मत मोहि सरन छुड़ाइ॥
मैं गीधौ लखि गीधगति, गीधे गीधहि जान।
गीधे पतितहि तारिहौ, तब बदिहौं प्रभु बान॥
गह्यौ ग्राह गज जिहि समै, पहुंचत लगी न बार।
और कौन ऐसे समै, संकट काटनहार॥
तुम जगदीस दयाल प्रभु हौ, सब ही सुनु चेत।
दीनन भूलत हौ हिए, दीनबंधु केहि हेत॥

भूषण

छूटत कमान और तीर गोली बानन के ।
मुसकिल होत मुरचान हू की ओट मैं ॥
ताही समय सिवराज हुकुम के हल्ला कियो ।
दावा बांधि परा हल्ला वीरभटजोट मैं ॥
भूषन भनत तेरी हिम्मत कहां लौं कहौं ।
किंमति इहां लगि है जाकी भट झोट मैं ॥
ताव दै दै मूंछन कंगूरन पै पांव दै दै ।
अरिमुख घाव दै दै कूदि परे कोट मैं ॥

केतिक देस दल्यो दल के बल ।
दच्छिन चंगुल चांप कै चाख्यो ॥
रूप गुमान हर्‌यौ गुजरात को ।
सूरति को रस चूसि कै नाख्यो ॥
पंजन पेलि मलिच्छ मल्यो सब ।
सोइ बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो ॥
सो रंग है सिवराज बली जेहिं ।
नैरंग मैं रंग एक न राख्यो ॥

गरुड को दावा सदा नाग के समूह पर ।
दावा नागजूह पर सिंह सिरताज को ॥
दावा पुरुहूत को पहारन के कुल पर ।
पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ॥
भूषन अखंड नवखंड महिमंडल मैं ।
तम पर दावा रविकिरनसमाज को ॥

पूरब पछांह देस दच्छिन ते उत्तर लौ ।
जहां पादसाही तहां दावा सिवराज को ॥

वारिधि के कुंभभव घन बन दावानल ।
तरुन तिमिर हू के किरन समाज हो ॥
कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल ।
कैटभ के कालिका बिहंगम के बाज हो ॥
भूषन भनत जग जालिम के सचीपति ।
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हो ॥
रावन के राम कार्तबीज के परसुराम ॥
दिल्लीपति दिग्गज के मेरे सिवराज हो ॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी ।
डग्ग नाचे डग्ग पर रुंड मुड फरके ॥
भूषन भनत बाजे जीति के नगारे भारे ।
सारे करनाटी भूप सिंहल को सरके ॥
मारे सुनि सुभट पनारे भारे उद्भट ।
तारे लागे फिर न सितारे गढ़ धर के ॥
बीजापुर बीरन के गोलकुंडा धीरन के ।
दिल्ली उर मीरन के दाडिम से दरके ॥

बेद रखे बिदित पुरान राखे सारयुत ।
रामनाम राख्यो अति रसना सुघर मैं ॥
हिंदुनकी चोटी, रोटी राखी है सिपाहिन की ।
कांधे पै जनेऊ राख्यौ माला राखी गर मैं ॥

मीड़ि राखै मुगल मरोड़ि राखै पातसाह।
बैरि पीसि राखै बरदान राख्यो कर में ॥
राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज।
देव राखे देवल सुधर्म राख्यो घर में ॥

निकसत म्यान ते मयूखें प्रलै भानु कैसी।
फारे तम तोम से गयंदन के जाल को ॥
लागति लपटि कंठ बैरिन के नागिनी सी।
रुद्रहि रिझावै दै दै मुंडन की माल को ॥
लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली।
कहां लौं बखान करौं तेरी करवाल को ॥
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि।
कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल को ॥

भुज भुजगेस की ह्वै संगिनी भुजंगिनी सी।
खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के ॥
बखतर पाखरिन बीच धंसि जाति मीन।
पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के ॥
रैया राय चंपति को छत्रसाल महाराज।
भूषन सकत को बखानि यों बलन के ॥
पच्छी परछीने ऐसे परे पर छीने बीर।
तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के ॥

रैया राय चंपति को चढ़ो छत्रसालसिंह।
भूषन भनत समसेर जोम जमकै ॥

भादों की घटा सी उठी गरदैं गगन घेरें।
खेलैं समसेरैं फेरैं दामिनि सी दमकैं ॥
खान उमरावन के आन राजा रावन के।
सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं ॥
तिरिया वगारन की अरि के अगारन की।
नांघती पगारन नगारन की धमकैं ॥

राजत अखंड तेज छाजत सुजस बड़ो।
गाजत गयंद दिग्गजन हिय साल को ॥
जाहि के प्रताप सों मलीन आफताब होत।
ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को ॥
साज सजि गज तुरी पैदर कतार दीन्हें।
भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को ॥
और राव राजा एक मन में न ल्याऊं अब।
साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को ॥

——

पद्माकर

हिम्मतबहादुरबिरुदावली

तहं दुहुं दल उमड़े घन सम घुमड़े झुकि झुकि झुमड़े जोर भरे ।
ताकि तबल तमंके हिम्मत हुंके बीर बमंके रन उभरे ।।
बोलन रन करखा बाढ़त हर्षा बानन वर्षा होन लगी ।
उलछारत सेलैं अरिगन ठेलैं सीनन पेलैं रारि जगी ।।

वंदीजन बुल्ले रोसन खुल्ले डगडग दुल्ले कादर हैं ।
धौंसा धुन गज्जै दुहुँ दिसि वज्जे सुनि धुनि लज्जै बादर हैं ।।
निसान सु फहरें इत उत छहरें पावक लहरैं सी लगतीं ।
छुवती नकि नाका मनहु सलाका धुजा पताका नभ जगतीं ।।

अत्रनिकी मूकैं घालि न चूकैं दै दै कूकैं कूदि परे ।
गहि गरदन पटकैं नेकु न भटकैं झुकि झुकि झटकैं उमंग भरे ।।
रन करत अड़ंगे सुभट उमंगे वैरिन वंगे करि झपटैं ।
सीसन की टक्कर लेत उटक्कर घालत छक्कर लरि लपटैं ।।

तहं हत्थाहत्थी मत्थामत्थी लत्थालत्थी माचि रही ।
काटैं कर कटकट विकट सुभट भट कासं। खटपट जात कही ।।
गहि कठिन कटारी पेलत न्यारी रुधिर पनारी बमकि बहैं ।
खंजर खिल खनकैं ठेलत ठनकैं तन सन सनिकै हिलगि रहैं ।।

एकै गहि भाले करि मुख लाले सुभट उताले घालत हैं ।
तोरत रिपु ताले आले आले रुधिर पनाले चालत हैं ।।
झारत असि जुरि जे वीरन उरजे पुरजे काटि करैं ।
हथियारन मूटैं नेकु न छूटैं खलदल कूटैं लपटि लरैं ।।

गहि गहि हय झटकैं दिशि दिशि फटकैं भूपर पटकैं नहिं लटकैं ।
पाइन सों पीसैं अरिगन मीसैं जब से दीसैं नहिं भटकैं ॥
प्रति गजनि उठेलैं दंतन ठेलैं ह्वै भट भेलैं जोर करैं ।
जुत्थन सों जूटैं नेकु न टूटैं फिर फिर छूटैं फेर लरैं ॥

तहं अर्जुन बंका करि करि हंका दुरद निसंका हूलत हैं ।
बैठो जु किलाएं मुच्छन ताएं रन छत्रि छाएं फूलत हैं ॥
झारत हथियारन मारत बारन तन तरवारन लगत हंसै ।
पैरत भालन कौ सर जालन को असि घालन को धमकि धंसैं ॥

किलकिलकत चंडी लहि निज खंडी उमड़ि उमंडी हरपति हैं ।
संग लै बैतालनि दै दै तालनि मज्जा जालनि करषति हैं ॥
जुग्गिननि जमातीं हिय हरषातीं पद पद खातीं मासन को ।
रुधिरन सौ भरि भरि खप्पर धरि धरि नचती करि करि हासन को ॥

सुभ सुख समूह फतूह लिय हिय मंजु मोदन सों भरै ।
काली कपाली निस दिना नित नृपति की रक्षा करै ॥
पृथुरित नित्त सुवित्त है जग जित्ति कित्ति अनूप की ।
वर बरनिये विरुदावली हिम्मतबहादुर भूप की ॥

सबलसिंह चौहान

अभिमन्यु-वध

उत सेना सरदार सब, इत अर्जुनसुत एक।
सबै बीर घायल किये, पारथसुत रखि टेक ॥

कुरुपति तबहिं क्रोध अति कीन्हें। मार मार करि आज्ञा दीन्हें ॥
सुनि कै कर्ण बाण कर लीन्हें। पढ़ि कै मंत्र फूंक सर दीन्हें ॥
जो शर परशुराम ते पाए। क्रोधित ह्वै मो बाण चलाए ॥
दै कै हांक बाण तब छांटे। करते धनुष कुंवर को काटे ॥
टूटे धनुष कुंवर तब डारे। कर गहि शक्ति तबहिं परिहारे ॥
तुम हम ऊपर बाणहिं छांटे। बीचहि कर्ण धनुष मम काटे ॥
यह कहि कुंवर शक्ति परिहारे। कर्णहि हृदय ताकि कै मारे ॥
मूर्छित किए कर्ण ते छत्री। अर्जुनपुत्र महाबल अत्री ॥
बिनु धनुपाणि कुंवर को पाए। घेरि बीर सब निकटहि आए ॥

बालक घेरेउ आइ सब, मारत अस्त्र अनेक।
जिमि मृगगण के यूथ महं, डरत न केहरि एक ॥

लै कै शूल कियो परिहारा। बीर अनेक खेत महं मारा ॥
जूझी अनी भभरि कै भागे। हंसि कै द्रोण कहन अस लागे ॥
धन्य धन्य अभिमनु गुणसागर। सब छत्रिन महं परम उजागर ॥
धन्य सुभद्रा जग में जाई। ऐसे बीर जठर जनमाई ॥
धन्य धन्य जग में पितु पारथ। अभिमनु धन्य धन्य पुरुपारथ ॥
एक बीर लाखन दल मारे। अरु अनेक राजा संहारे ॥
धनु काटे शंका नहिं मन में। रुधिरप्रवाह चलत सब तन में ॥

यहि अंतर बोले कुरुराजा। धनपु नाहि भाजन केहि काजा॥
एक बीर को सबै डरत है। घेरि क्यों न रथ धाइ धरत है॥
बालक देखि करी यह करणी। सेना जूझि परी सब धरणी॥

दुर्योधन या विधि कह्यो, कर्ण द्रोण सों बैन।
बालक सब सेना बधी, तुम सब देखत नैन॥

यह कहिकै दुर्योधन आए। सबै वीर आगे ह्वै धाए॥
क्षत्रिन घेरो बालक रन मे। मानहु रवि आच्छादित घन मे॥
लै कै खंग फरी गहि हाथा। काटो बहु छत्रिन कै माथा॥
अभिमनु धाइ खग परिहारा। सन्मुख जेहि पावै तेहि मारा॥
भूरिश्रवा बाण दस छांटे। कुवर हाथ को खर्गहि काटे॥
तीनि बाण सर रथ उर मारे। आठ बाण ते अश्व सहारे॥
सारथि जूझि गिरउ मैदाना। अभिमनु वीर चित्त अनुमाना॥
यहि अन्तर सेना सब धाए। मार मार करि मारन धाए॥
रथ को खैंचि कुवर करि लीन्हें। ताते मार भयानक कीन्हे॥
अभिमनु कोपि खंभ परिहारे। इक इक घाव वीर सब मारे॥

अर्जुनसुत इमि मार किय, महावीर परचण्ड।
रूप भयानक देखियत, जिमि लीन्हे यमदण्ड॥

क्रोधित होइ चहूं दिशि धाए। मारि सबै सेना बिचलाए॥
यहि विधि किए भयानक भारत। साहस धन्य धन्य पुरुषारथ।
ऐसी मार खग सों कीन्हे। दश सहस्र राजा वधि लीन्हे॥
मारि सबै राजा बिचलाए। कर लै गदा कुरुपति धाए॥
शत बांधव नृप संगहि आए। अरु अनेक राजा मिलि धाए॥
चहुं दिशि महारथी सब घेरे। क्षत्री सबै बीर बहुतेरे॥

नाना अस्त्र सबहिं परिहारे । निकट न जाहि दूर ते मारे ।।
दुर्योधन कहं देखन पाए । गहे खंग अभिमनु तब आए ।।
जुरे वीर क्षत्री वहुतेरे । खंगघात ते बधेउ घनेरे ।।
जब नरेश के निकटहि आए । द्रोण गुरू दस बाण चलाए ।।

गुरू द्रोण अति क्रोध करि, मारे बाण अचूक ।
कुंवर हाथ को खंग तब, काटि कियो दुइ टूक ।।

खंग कटे अभिमनु भा कैसे । मणि बिन फणिक बिकल हुव जैसे ।।
क्रोधित भए सुभद्रानंदन । चरणघात सों तोरेउ स्यंदन ।।
रथ तें कूद कुंवर कर लीन्हें । चाक उठाय रणहि शुभ कीन्हें ।।
चाक कुंवर कर शोभित कैसे । हरि कर चक्र सुदर्शन जैसे ।।
रुधिर प्रवाह चलत सब अंगा । महाशूर मन नेक न भंगा ।।
गहिकै चाक चहूं दिशि धावै । जेहि पावै तेहि मारि गिरावै ।।
दुर्योधन पर चाक चलाए । गदा कोपि कुरुनाथ बचाए ।।
क्षत्री घेरि लगे शर मारन । जुरे आइ सब तहं हथियारन ।।
दुःशासनसुत गदा प्रहारे । अभिमनु के सिर ऊपर मारे ।।
जूझे कुंवर परे तब धरणी । जग महं रही सदा यह करणी ।।

धन्य धन्य सब कोउ कहै, कुंवर रहो मैदान ।
पै गुरुद्रोण मलीन मुख, कहै वचन परमान ।।

गुरू द्रोण यहि भांति बखाने । हर्षि नरेश सबै सुख माने ।
अभिमनुमरण सुनेंगे पारथ । करिहै महा भयानक भारत ।।
इंद्र वरुण यम होइं सहायक । कोइ नहि अर्जुन जीतन लायक ।।
भीमादिक यह युद्ध विचारे । पै जयदर्थ सबहि शर मारे ।।
क्रोधित भए पांडु के नंदन । फैंको सिंधुराज के स्यंदन ।।

गिरे दूरि उठि निकटहि आए। भीम उपर शत वाण चलाए ।।
धर्मराज तब कीन्ह दरेरी। पै जयदर्थ मारि मुख फेरी ।।
लै अनीक तब कुरुपति धाए। जहं जयदर्थ लरत तहं आए ।।
कौरव दल जयशंख बजाए। अभिमनु गिरे भूप सुनि पाए ।।
धर्मराज सुनि मौनहिं गहेऊ। संध्या भई युद्ध तब रहेऊ ।।

कुरुपांडव फिरि कै चले, भयो युद्ध को शेष ।
भीमादिक क्षत्रिय सबै, रोवत धर्मनरेश ।।

——

वृंद

श्री गुरुनाथ प्रताप तैं, होत मनोरथ सिद्ध ।
घन तैं ज्यौं तरु बेलि दल, फूल फलन की वृद्धि ॥

नीकी पै फीकी लगै, बिन अवसर की बात ।
जैसे बरनत युद्ध में, रस सिंगार न सुहात ॥

रागी अवगुन ना गनै, यहै जगत की चाल ।
देखा सब ही स्याम को, कहत बाल सब लाल ॥

जो जाकौ प्यारो लगै, सो तिहिं करत बखान ।
जैसे विष को विष-भखी, मानत अमृत समान ॥

जो जा कौ गुन जानही, सो तिहिं आदर देत ।
कोकिल अंबहि लेत है, काग निबौरी लेत ॥

जाही तें कछु पाइयै, करियै ताकी आस ।
रीते सरवर पै गए, कैसे बुझत पियास ॥

रस अनरस समझै न कछु, पढ़ै प्रेम की गाथ ।
बीछू मंत्र न जानई, सांप पिटारे हाथ ॥

अनमिलती जोई करत, ता ही को उपहास ।
जैसै जोगी जोग में, करत भोग की आस ॥

गुरुता लघुता पुरुष की, आस्रय बस तें होय ।
करी बृंद में बिंध्य सौं, दर्पन में लघु सोय ॥

उपकारी उपकार जग, सब सों करत प्रकास ।
ज्यों कटु मधुरे तरु मलय, मलयज करत सुबास ॥

हरि-रस परिहरि विषय-रस, संग्रह करत अयान ।
जैसे कोऊ करत है, छाड़ि सुधा विषपान ॥

कुल मारग छोड़ै न कोऊ, होहि वृद्धि कै हानि ।
गज इक मारत दूसरो, चढ़त महावत आनि ।।
ह्वै सहाय हित हू करै, तऊ दुष्ट दुख देत ।
जैसे पावक पवन को, मिलै जगायै लेत ।।
अपनी अपनी ठौर पर, सोभा लहत विसेख ।
चरन महावर ही भलौ, नैनन अंजन-रेख ।।
नहि इलाज देख्यौ सुन्यौ, जा सों मिटत सुभाव ।
मधुपुट कोटिक देत तऊ, विष न तजत विषभाव ।।
जाको जासो मन लग्यो, सो तिहि आवै धाय ।
भाल भस्म विष मुंड शिव, तोऊ शिवा सहाय ।।
प्रेम निवाहन कठिन है, समझ कीजियो कोय ।
भाग भखन है सुगम पै, लहर कठिन ही होय ।।
कोउ बिन देखे बिन सुनै, कैसे कहै विचार ।
कूपभेख जाने कहा, सागर कौ विस्तार ।।
जैसो बंधन प्रेम कौ, तैसो बंध न और ।
काठहि भेदै कमल कौ, छेद न निकसै भौर ।।
प्रेम पगन बरजी न क्यों, अब बरजंत बेकाज ।
रोम रोम विष रमि रह्यौ, नाहि न बनत इलाज ।।
फेर न ह्वैहै कपट सों, जो कीजे ब्यौपार ।
जैसे हाडी काठ की, चढ़ै न दूजी बार ।।
आप बुरे जग है बुरौ, भलौ भले जग जानि ।
तजत बहेरा छांह सब, गहत आंब की आनि ।।
सौ जु सयाने एक मत, यहै कहावत सांच ।
कांचहि पांच कहै न कोउ, पांचहि कहै न कांच ।।

भले बुरे सब एक से, जब लौ बोलत नाहिं ।
जान परतु है काक पिक, ऋतु वसंत के माहिं ॥
भले बुरे जहं एक से, तहां न बसिए जाय ।
ज्यौं अन्यायीपुर बिकै, खर गुर एकै भाय ॥
अति अनीति लहिये न धन, जो प्यारौ मन होय ।
पाए सोने की छुरी, पेट न मारै कोय ॥
हित हूं की कहिये न तिहिं, जो नर होय अबोध ।
ज्यौं नकटे को आरसी, होत दिखाए क्रोध ॥
अति हठ मत कर हठ बढ़ै, बात न करिहै कोय ।
ज्यौं ज्यौं भीजे कामरी, त्यौं त्यौं भारी होय ॥
बात कहन की रीति में, है अंतर अधिकाय ।
एक वचन तैं रिस बढ़ै, एक वचन तैं जाय ॥
एक सदा निवहै नही, जनि पछतावहु कोय ।
दुरजोधन अति मान तैं, भए निधन कुल खोय ॥
मूढ़ तहा ही मानिए, जहां न पंडित होय ।
दीपक की रवि के उदै, बात न पूछे कोय ॥
विन स्वारथ कैसे सहै, कोऊ करुए बैन ।
लात खाय पुचकारिए, होय दुधारू धैन ॥
सज्जन तजत न सजनता, कीन्हेहु दोष अपार ।
ज्यौं चंदन छेदे तऊ, सुरभित करहु कुठार ॥
दुष्ट न छांड़ै दुष्टता, पोखै राखै ओट ।
सरप हि केतौ हित करो, चुपै चलावै चोट ॥
जैसी हो भवितव्यता, तैसी बुद्धि प्रकास ।
सीता हरबे तैं भयौ, रावनकुल को नास ॥

निहचै भावी कौ कहौ, प्रतीकार जौ होइ।
तौ नल से हरचंद से, विपत न भरते कोइ॥
कछु सहाय न चल सकै, होनहार के पास।
भीष्म युधिष्ठिर से तहां, भो कुरुबंस-बिनास॥
अति ही सरल न हूजिये, देखौ ज्यों बनराय।
सीधे सीधे छेदिये, बांकौ तरु बच जाय॥
बहुतन को न विरोधिये, निबल जानि बलवान।
मिल भख जाहि पिपीलिका, नागहि नगके मान॥
सुजन कुसंगति संग तैं, सज्जनता न तजंत।
ज्यौ भुजंग गन संग तऊ, चंदन विष न धरंत॥
ऊंचे वैठे ना लहैं, गुन बिन बड़पन कोइ।
बैठो देवल सिखर पर, वायस गरुड़ न होइ॥
जे पर ते पर यह समझ, अपनो होय न कोय।
पालै पोषै काग तऊ, पिक-सुत काग न होय॥
भेष बनावै सूर कौ, कायर सूर न होय।
खाल उढ़ावै सिंह की, स्यार सिंह नहि होय॥
सब तें लघु है मांगिबौ, जामें फेर न फार।
बलि पै जाचत ही भए, वामनतन करतार॥
नाम भलौ होत न भलौ, भलौ भाग जिहिं भाल।
लच्छि नाम मांगत फिरै, भूखो नाम भुवाल॥
देवन हू सों देव प्रभु, कहा सुरेस नरेस।
कीनौ मीत धनेस तऊ, पहरै चर्म महेस॥
छल बल समय विचारि कै, अरि हनिये अनयास।
कियौ अकेले द्रोणसुत, निसि पांडवकुल नास॥

रसिकसभा में निरस नर, होत होत रस हानि ।
जैसे भैंसा ताल परि, मलिन करत जल आनि ।।
होय पहुंच जाकी जिती, तेतो करत प्रकास ।
रवि ज्यौं कैसे करि सकै, दीपक तम को नास ।।
जहां चतुर नाहि न तहां, मूढ़नि सों व्यवहार ।
बर पीपर बिन हो रहे, ज्यों एरंड अधिकार ।।
होत न कारज मो बिना, यह जु कहै सु अयान ।
जहां न कुक्कुट शब्द तहं, होत न कहा बिहान ।।
दुष्ट निकट वसिए नहीं, बस न कीजिए बात ।
कदली बेर प्रसग तै, छिदै कंटकन पात ।।
तिनके कारज होत है, जिनके वड़े सहाय ।
कृष्ण पक्ष पांडव जयी, कौरव गए विलाय ।।
अरि छोटौ गनिए नहीं, जाते होत बिगार ।
तिन समूह को छिनक मैं, जारत तनक अंगार ।।
वीर पराक्रम तैं करै, भुव-मंडल को राज ।
जोरावर या तै करन, वन अपनौ मृगराज ।।
जोरावर अरि मारिये, बुधबल किये उपाय ।
कालयमन कौ ज्यौं किसन, पट मुचुकुंद उठाय ।।
नृप प्रताप तैं देस मं, रहें दुष्ट नहि कोय ।
प्रगटत तेज दिनेस कौ, तहां तिमिर नहि होय ।।
बड़े अनीति करै तऊ, बुरो कहै नहि कोय ।
बालि हत्यो अपराध बिनु, ताहिं भजे सव कोय ।।
लघु मिलिए गरुवे जदपि, बड़े कछू ले ताहि ।
गिरिवर आने कपिन के, जौं मकरालय माहि ।।

छल-बल धर्म अधर्म करि, अरि साधिए अभीति ।
भारत में अर्जुन किसन, कहा करी युध रीति ॥
मुख दिखाय दुख दीजियै, खल सो लरियै नाहिं ।
जो गुर दीने ही मरै, क्यों विष दीजै ताहि ॥
एक अनीति करै लहै, संगी दुख सुख नाहिं ।
भीम कीचकन कौ दिए, मारि चिता के माहि ॥
बड़े विपत में हूं करै, भले बिराने काम ।
किय विराटतनु की विजय, अर्जुर करि संग्राम ॥
बड़े बड़ै हू काम करि, आप सिहावत नाहि ।
जयजस उत्तर को दियो, पथ बिराट के माहि ॥
चपचप करती ना रहै, नर लबार की जीह ।
चलहल दल जैसे चपल, चलत रहै निस दीह ॥
जैसो प्रभु तैसो अनुग, होय सु वात प्रमान ।
बामन कर की लष्टिका, बढ़ी चढ़ी असमान ॥
हार बड़े की जीत है, निबल न मानै तास ।
विमुख होय हरि ज्यों कियों, कालयमल कौ नास ॥
होय भले चाकरन तैं, भलो धनी को काम ।
ज्यौ अंगद हनुमान तैं, सीता पाई राम ॥
सबको मर्म बिनास मे, उपजति मति विपरीति ।
रघुपति मार्यो लंकपति, जो हरि लै गयो सीति ॥
प्रेम नेम के पंथ कौ, है कछु अद्भुत रूप ।
पिय हिय लागै लगत ज्यौ, सरद जौन सी धूप ॥
दुखदाई सोइ देत सुख, सुखदाई संग जात ।
घट जल भीजे चीरकौं, लागि लूअ सियरात ॥

रहै प्रजाधन यत्न सौ, जहं बांकी तरवार।
सो फल कोउ न लै सकै, जहां कटीली डार॥
बिना प्रयोजन भूलिहू, उठिये नाही ठाट।
जैबौ नहि जा गांव कौ, ताकी पूछ न बाट॥
जो कहियै सो कीजियै, पहिलै करि निर्धार।
पानी पी घर पूछवौ, नाहि न भलो बिचार॥
अरिहू बूझै मंत्र कौ, कहिये सांच सुनाय।
ज्यौ भीषम पाडवन कौ, दीनौ मरन बताय॥
नीचहु उत्तम संग मिलि, उत्तम ही ह्वै जाय।
गंग संग जल निंद्य हू, गंगोदक के भाय॥
गुन सनेह जुन होतु है, ताही की छवि होत।
गुन सनेह के दीप की, जैसे जोति उदोत॥
रस की कथा सुनी न तिहि, कूर कथा की चाहि।
जिन दाखै चाखी नहीं, मिष्ट निबौरी ताहि॥
अति उदारता बड़ेन की, कह लौ बरनै कोय।
चातक जांचै तनिक धन, बरस भरै घन तोय॥
औसर बीते जतन कौ, करिबौ नहि अभिराम।
जैसे पानी बह गए, सेतुबंध किहि काम॥
करै अनादर गुनंनि कौ, ताहि सभा छवि जाय।
गजकपोल शोभा मिटत, ज्यौं अलि देत उड़ाय॥
मीठी कोऊ बस्तु नहीं, मीठी जाकी चाह।
अमली मिसरी छांड़ि कै, आफू खातु सराहि॥
निहचै कारन बिपत कौ, किए प्रीति अरि संग।
मृग के सुख मृगराज कौ, होत कबहुं अंगभंग॥

ताको बुरो न ताकियै, जासौं जग व्यौसाइ ।
छांह फूल फल देत तरु, क्यौं तिहि कटन कराइ ।।
दुष्ट न छांड़ै दुष्टता, बड़ी टौर हू पाय ।
जैसे तजत न श्यामता, बिष शिवकंठ बसाय ।।
छोटे अरि कौं साधिये, छोटो करि उपचार ।
मरे न मूसा सिंह तें, मारै ताहि मंजार ।।
बड़े बड़े सों रिस करें, छोटे सों न रिसाय ।
तरु कठोर तोरै पवन, कोमल तृन बच जाय ।।
सेवक सोई जानियै, रहै बिपति में संग ।
तन छाया ज्यौं धूप में, रहै साथ इक रंग ।।
अंतर तनिक न राखियै, जहां प्रीति बिवहार ।
उर सौं उर लागै न तहं, जहां रहतु है हार ।।
निरखत पलक न मारियै, सज्जन मुख की ओर ।
उदय अस्त लौं एक टक, चितवत चंद चकोर ।।

——

सूदन

सुजान-चरित्र

बजी चारिहूं ओर ते टापबाजी । मनौ मेह आसाढ की बुंद गाजी ।।
पुकारैं दुहूं ओर के बीर हां हां । करी भौंह बांकी चढ़ाई सु वांहां ।।
छुटी बान कम्मान दम्मान भारी । किहूं भाल भाले बरच्छी संभारी ।।
इतै जट्ट जुट्टे उतै साहि सेना । मिलै जुद्ध कौ उद्धकै कुद्ध नैना ।।
कहूं चाप टंकार हंकार पारी । कहूं हूक बंदूक में ज्वाल झारी ।।
कहूं लैस कत्ती धरत्ती घुमाई । कहूं सैल की रेल हत्थौं चलाई ।।
तहां आपने आपने हत्थ किन्ने । तिन्हैं देखिकै अंबरी मोद भिन्ने ।।
टुटे सार संनाह झन्नाहटे सों । परें छूटिकै भूमि खन्नाहटे सों ।।
भुसंडीनु फुट्टे मही पिट्टि लुट्टे । छरों खाइ हुट्टे सरौं फेरि जुट्टे ।।
किते रत्त मत्ते उमत्ते घुमत्ते । तुरत्ते उठे फेरि लै हत्थ कत्ते ।।
लरत्ते परत्ते बदक्सी उमंडे । दिसा पुव्व के से जलद्दा घुमंडे ।।
लखें यों बदक्सी चमू माहिं पैठे । धए सूर सूरज्ज सव्वे इकैठे ।
तहां यों घमंडी गहैं सैल धायौ । मनौ द्रोनको पुत्त है छोह छायौ ।।
किधौं पूत जमदग्नि को जंग रूठ्यौ । बदक्सी सहसबाहु पै धाउ बैठ्यो ।।
हनैं सैल सौं जाहि भू में पटक्कें । सहसबाहु की सी भुजा लै कटक्कें ।।
लखैं त्यों बदक्सी भरे जं; अचंभे । लिखे चित्र के से रहे घान थंभे ।।
हुती एक पैं त्यार बंदूक त्यौं ही । दई फूंक कै धूक सुठ भेर ज्यों ही ।।
लगी आन नैजाब औ जीभ खंडी । धुक्यौं बाजि तें त्यौं धरा पै घमंडी ।।
गिरयौ देखि कै शत्रु सव्वै सपट्टे । लिए आपने आपने सस्त्र कट्टे ।।
पलक लागतें बाजि चढ्यौ घमंडी । ललक्कारि कै तेग की जंग मंडी ।।
रंग्यौ रत्त सूं हत्थ समसेर सोहै । मनौ देह धारैं रसैं जान को है ।।

फुटे जावके जीभ यों कढ़्ढि आई। तहां देव नरसिंह की मोह पाई॥
गहे तेग नंगी करी जंग चंगी। हनी साहि की सैन यों श्रौनरंगी॥
तहां नंद बदनेस के दृष्टि दीनी। उदैभान की सी प्रभा अंग भीनी॥
तुरी तेज कैसे हथी हत्थ लिन्नी। हियें देख हरिदेव की याद किन्नी॥
मृगाधीस जैसे करी जूह दट्टे। खगाधीस ज्यौ ब्यालजालै झपट्टे॥

× × ×

पुनि भोर भए वहु तोप दगी। इत उत्त घमाघम हौन लगी॥
छिपि भान भयौ निसि फैल गई। दुहुं ओर झरी झर लोइ गई॥
पुनि ऊगत सूर मरत्थ गयौ। उनि साहि कही रहि जाय लयौ॥
गज ग्यारह ऊंट तुरंग घनै। हनि लावत भो मजबूत मनै॥
पुनि कीनिय दौर दिल्लीसदलं। गढ बल्लम पूरब ओर भलं॥
दस खेत प्रमान रहे जब ही। बलिरामहिं सूर कह्यौ तब ही॥
चढ़ि जाइ इन्हे दबटाइ अरे। बढ़ि आवतु हे चहुं ओर खरे॥
यह आयसु सिंह सुजान दियं। उठियौ बलिराम हरष्षि हियं॥
असवार भयौ गढ ते कढियं। जिमि सिंह छवा बन ते बढियं॥
तब छतरसाल संतोष हुवौ। अस राम बली अस्वार हुवौ॥
पुनि जोधहुसिंह सवार हुवं। गढ़ बैरि रहा तिहि अग्ग हुवं॥
अरु पाषरहू लछिमन्न महा। हय हंक धमंकिय जोर गहा॥
सत अर्ध सवारनु लै दबट्यौ। झपट्यौ अति साहि दलै लवठ्यौ॥
बस पांच बंदूक तहां धमकीं। पुनि सांग कि सैल असै झमकीं॥
उतहू सरदार महा मनकौ। किय आनि असीलनुकौ झनकौ॥
इततै बलिराम उठाइ हयं। कर सेल घुमाइ हरीफ हयं॥
उनहूं अति झारिय रोस सनं। बिच ही गहि काटिय सेल रनं॥
लखि जोधहुसिंह उठाइ परं। हिय सेल हयद्दय मीर मरं॥

हय तै सु गिरचौ वह भुंम्मि भरं। बलिराम दई एक तेग गरं॥
हनि तासु सिरै बलिराम बली। तिहिं सैनहिं धाइय देतु झली॥
सब ही भट चोटनु देत भये। अपने अपने अरि बांट लिये।
मरते परते भट साहि भजे। रन पाइ बिजय भट सूर गजे॥
बलिराम फिरचौ ढिग सूरज कौं। सु बजाय विजयरन तूरज कौं॥

—

आधुनिक युग

बहुमुखी अनेक शाखाएं

हरिश्चंद्र

गंगावर्णन

नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक सी सोहति ।
बिच बिच छहरति बूंद मध्य मुक्तामनि पोहति ।।
लोल लहर लहि पवन एक पै इक इमि आवत ।
जिमि नरगन मन बिबिध मनोरथ करत मिटावत ।।
सुभग स्वर्गसोपानसरिस सबके मन भावत ।
दरसन मज्जन पान त्रिबिध भय दूर मिटावत ।।
श्री हरिपद नख चंद्रकांतमनिद्रवित सुधारस ।
ब्रह्मकमंडलमंडन भवखंडन सुरसरबस ।।
शिवसिर मालतिमाल भगीरथनृपति पुण्यफल ।
ऐरावत गज गिरिपति हिम नग कंठहार कल ।।
सगरसुवन सठ सहस परस जलमात्र उधारन ।
अगनित धारा रूप धारि सागर संचारन ।।
कासी कहं प्रिय जानि ललकि भेंट्यो जग धाई ।
सपनेहूं नहिं तजी रही अंकम लपटाई ।।
कहूँ बंधे नव घाट उच्च गिरिवर सम सोहत ।
कहुं छतरी कहुं मढी बढ़ी मन मोहत जोहत ।।
धवल धाम चहुं ओर फरहरत धुजा पताका ।
घहरत घंटा धुनि धमकत धौंसा करि साका ।।
मधुरी नौबत बजत कहूं नारी नर गावत ।
बेद पढ़त कहुं द्विज कहुं जोगी ध्यान लगावत ।।

कहुँ सुंदरी नहाति नीर करजुगल उछारत ।
जुग अंबुज मिलि मुक्त गुच्छ मनु सुच्छ निकारत ॥
धोवत सुंदरि बदन करन अति ही छबि पावत ।
बारिधि नाते ससि कलंक मनु कमल मिटावत ॥
सुंदरि ससिमुख नीरमध्य इमि सुंदर सोहत ।
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत ॥
दीठि जहीं जहं जात रहत तितहीं ठहराई ।
गंगा छबि हरिचंद कछू बरनी नहि जाई ॥

कालिंदी सुषमा

तरनितनूजातट तमाल तरुवर बहु छाए ।
झुके कूल सों जलपरसनहित मनहु सुहाए ॥
किधौ मुकुर मैं लखत उझकि सब निज निज सोभा ।
कै प्रनवत जल जानि परम पावन फललोभा ॥
मनु आतप वारन तीर को सिमिटि सबै छाए रहत ।
कै हरिसेवाहित नै रहे निरखि नैन मन सुख लहत ॥
कहूं तीर पर कमल अमल सोभित बहु भांतिन ।
कहूं सैवालनमध्य कुमुदिनी लगि रहि पांतिन ॥
मनु दृग धारि अनेक जमुन निरखत निज सोभा ।
कै उमगे प्रिय प्रिया प्रेम के अनगिन गोभा ॥
कै करिकै कर बहु पीय कों टेरत निज ढिग सोहई ।
कै पूजन को उपचार लै चलति मिलन मन मोहई ॥
कै प्रियपदउपमान जानि एहि निज उर धारत ।
कै मुख करि बहु भृंगन मिस अस्तुति उच्चारत ॥

कै ब्रजतियगनवदनकमल की झलकत झांई ।
कै ब्रज हरिपदपरसहेत कमला बहु आई ॥
कै सात्विक अरु अनुराग दोऊ ब्रजमंडल बगरे फिरत ।
कै जानि लक्ष्छमी भौन एहि करि सतधा निज जल धरत ॥
तिन पै जेहि छिन चंद जोति राका निसि आवति ।
जल मे मिलिकै नभ अवनी लौ तान तनावति ॥
होत मुकुरमय सबै तव उज्जल इक ओभा ।
तन मन नैन जुडात देखि सुंदर सो सोभा ॥
सो को कवि जो छवि कहि सकै ता छन जमुनानीर की ।
मिलि अवनि और अवर रहत छवि इसकी नभ तीर की ॥
परत चद्रप्रतिबिंब कहू जलमधि चमकायो ।
लोल लहर लहि नचत कवहुं सोई मन भायो ॥
मनु हरिदरसन हेत चद जल बसत सुहायो ।
कै तरग कर मुकुर लिये सोभित छवि छायो ॥
कै रासरमन मे हरिमुकुटआभा जल दिखरात है ।
कै जलउर हरिमूरति बसति वा प्रतिबिंब लखात है ॥
कबहु होत सत चंद कबहुं प्रगट दुरि भाजत ।
पवन गवन बस बिंबरूप जल मे बहु साजत ॥
मनु सीस भरि अनुराग जमुनजल लोटत डोलै ।
कै तरग की डोर हिंडोरन करत कलोलै ॥
कै बालगुडी नभ मै उड़ी सोहत इत उत धावती ।
कै अवगाहत डोलत कोऊ ब्रजरमनी जल आवती ॥
कूजत कहू कलहस कहू मज्जत पारावत ।
कहुं कारंडव उड़त कहूं जलकुक्कुट धावत ॥

चक्रवाक कहुं बसत कहूँ बक ध्यान लगावत।
सुक पिक जल कहुं पियत कहूं भ्रमरावलि गावत॥
कहुं तट पर नाचत मोर बहु रोर बिविध पच्छी करत।
जलपान न्हान करि सुख भरे शोभा सब जिय धरत॥
कहूं बालुका बिमल सिकत कोमल बहु छाई।
उज्जल झलकत रजत सिढी मनु सरस सुहाई॥
पियके आगम हेत पांवड़े मनहुं बिछाए।
रत्नरासि करि चूर कूल में मनु बगराए॥
मनु मुक्त मांग सोभित भरी श्याम नीर चिकरन परसि।
मन गुन छायो कै तीर में ब्रज निवास लखि हिय हरसि॥

देशभक्त के आंसू

रोवहु सब मिलि कै आवहु भारत भाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई॥
सब के पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो।
सब के पहिले जेहि सभ्य बिधाता कीनो॥
सब के पहिले जो रूप रंग रस भीनो।
सब के पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो॥
अब सब के पीछे सोई परत लखाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई॥

जहं भये शाक्य हरिचंदरु नहुष ययाती।
जहं राम युधिष्ठिर बासुदेव सर्याती॥
जहं भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती।

तहं रही मूढ़ता कलह अविद्या राती ॥
अब जहं देखहु तहं दुखही दुख दिखलाई ।
हा हा ! भारतदुर्दशा न देखी जाई ॥

लरि वैदिक जैन डुबाई पुस्तक सारी ।
करि कलह बुलाई जवनसैन पुनि भारी ॥
तिन नासी बुधि बल विद्या धन बहु बारी ।
छाई अब आलस कुमति कलह अंधियारी ॥
भए अंध पंगु सब दीन हीन बिलखाई ।
हा हा ! भारतदुर्दशा न देखी जाई ॥

अगरेज राजसुख साज सजे सब भारी ।
पै धन बिदेस चलि जात इहै अति ख्वारी ॥
ताहु पै महंगी काल रोग बिस्तारी ।
दिन दिन दूने दुख ईस देत हा हा री ॥
सब के ऊपर टिक्कस की आफत आई ।
हा हा ! भारतदुर्दशा न देखी जाई ॥

कोमल भावना

रहै क्यों एक म्यान असि दोय ।
जिन नयनन में हरि रस छायो तेहि क्यों भावै कोय ॥
जा तन मन मैं रमि रहे मोहन तहाँ ज्ञान क्यों आवै ।
चाहो जितनी बात प्रबोधो ह्यां को जौ पतियावै ॥
अमृत खाइ अब देखि इनारुनि को मूरख जो भूलै ।
हरीचंद ब्रज तो कदलीवन काटो तो फिरि फूलै

निराशा

सब भांति दैव प्रतिकूल होइ एहि नासा ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।
अब सुखसूरज को उदय नहीं इत ह्वैहै ।
सो दिन फिर इत सपने हूं नहिं एहै ।।
मंगलमय भारतभुव मसान ह्वै जैहै ।।
दुख ही दुख करिहै चारहुं ओर प्रकासा ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।

इत कलह बिरोध सबन में हिय घर करिहै ।
मूरखता को तम चारहुं ओर पसरिहै ।।
बीरता एकता ममता दूर सिधरिहै ।
तजि उद्यम सब ही दासवृत्ति अनुसरिहै ।।
ह्वै जैहै चारहुं बरन शूद्र बनि दासा ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।

ह्वैहै इत के सब भूत पिशाच उपासी ।
कोउ बनि जैहै आपहु स्वयंप्रकासी ।।
नसि जैहै सगरे सत्य धर्म अविनासी ।
निज हरि सौ ह्वैहै विमुख भरतभुववासी ।।
तजि सुपथ सवहि जन करिहै कुपथविलासा ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।

अपनी वस्तुन कह लखिहै सबहि पराई ।
निज चाल छोड़ गहिहै औरन की धाई ।।
तुरकनहिन करिहै हिंदूसंग लराई ।

यवनन के चरनहि रहिहैं सीस चढ़ाई ।।
तजि निज कुल करिहैं नीचन संग निवासा ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।

रहे हमहुं कबहुं स्वाधीन आर्य बलधारी ।
यह दैहैं जिय सों सब ही बात बिसारी ।।
हरिबिमुख धरम बिनु धनबलहीन दुखारी ।
आलसी मंद तनछीन छुधित मसारी ।।
सुख सों सहिहैं सिर यवनपादुकात्रासा ।
अब तजहु बीरबर भारत की सब आसा ।।

सूक्ति-सुमन

प्रारंभ ही नहि विघ्न के भय अधम जन उद्यम तजै ।
पुनि करहिं तौ कोउ विघ्न सों डरि मध्य ही मध्यम तजै ।।
धरि लात विघ्न अनेक पै निरभय न उद्यम ते टरै ।
जे पुरुष उत्तम अंत मैं ते सिद्ध सब कारज करै ।।

का सेसहि नहि भार ? पै धरती देत न डारि ।
कहा दिवसमनि नहि थकत ? पै नहि रुकत विचारि ।।
सज्जन ताको हित करत जेहि किय अंगीकार ।
यहै नेम सुकृतीन को, निज जिय करहु बिचार ।।

जो दूजे को हित करै तौ खोवै निज काज ।
जो खोयो निज काज तौ कौन बात को राज ? ।।
दूजे ही को हित करै तौ वह परबस मूढ़ ।
कठपुतरी सो स्वाद कछु पावै कबहुं न कूढ़ ।।

लक्ष्मी

कूर सदा भाखति पियहि, चंचल सहज सुभाव।
नर गुन औगुन नहि लखति, सज्जन खल सम भाव॥
डरति सूर सों, भीरु कहं, गनति न कछु रतिहीन।
बारनारि अरु लच्छमी, कहौ कहौ बस कौन॥

गुरुवश्यता

जब लौ बिगरै काज नहि, तब लौं न गुरु कछु नेहि कहै।
पै शिष्य जाइ कुराह तौ, गुरु सीस अंकुस ह्वै रहै॥
तासों सदा गुरु वाक्यवस, हम नित्य पर आधीन है।
निर्लोभ गुरु से संत जन ही, जगत में स्वाधीन है॥

शारदी सुषमा

सरद बिमल ऋतु सोहई निरमल नील अकास।
निसानाथ पूरन उदित सोलह कला प्रकास॥
चारु चमेली वन रही महमह महंकि सुबास।
नदी तीर फूले लखौ सेत सेत बहु कास॥

कमल कुमोदिनि सरन में फूले सोभा देन।
भौर बृंद जा में लखौ गूंजि गूंजि रस लेत॥
वसन चांदनी, चंदमुख, उडुगन मोती माल।
कास फूल मधुहास यह, सरद किधौं नव बाल॥

अहो यह सरद संभु ह्वै आई।
कास फूल फूले चहुं दिसि तें सोई मनु भस्म लगाई॥

चंद उदित सोइ सीस अभूषन सोभा लगति सुहाई ।
ता सों रंजति घनपटली सोइ मनु गजखाल बनाई ॥
फूले कुसुम मुंडमाला सोइ सोहत अति धवलाई ।
राजहंस सोभा सोइ मानों हासविभव दरसाई ॥
अहो यह सरद संभु बनि आई ॥

सेवाधर्म

नृप सों सचिव सों सब मुसाहेबगनन सों डरते रहौ ।
पुनि विटहु जे अति पास के तिनको कह्यौ करते रहौ ॥
मुख लखत बीतत दिवस निसि, भय रहत संकित प्रान हैं ।
निज उदरपूरनहेतु सेवा स्वानवृत्ति समान हैं ॥
सेवक प्रभु सों डरत सदा हीं । पराधीन सपने सुख नाहीं ॥
जे ऊंचे पद के अधिकारी । तिनको मनही मन भय भारी ॥
सब ही द्वेष बड़न सों करहीं । अनुछिन कान स्वामिको भरहिं ॥

बदरीनारायण चौधरी

विजयी भारत

जय जय भारत भूमि भवानी।

जाकी सुयश पताका जग के, दसहुं दिसि फहरानी।
सब सुखसामग्री पूरित ऋतु, सकल समान सोहानी।।
जाकी सोभा लखि अलका अरु, अमरावती खिसानी।
धर्मसूर जित ज्यों नीति जहं, गई प्रथम पहिचानी।।
सकल कला गुन सहित सभ्यता, जहं सो सबहिं सुझानी।
भये असंख्य जहां जोगी तापस, ऋषिवर मुनि ज्ञानी।।
बिबुध विप्र बिज्ञान सकल विद्या, जिन तें जग जानी।
जगविजयी नृप रहे कबहुं जहं, न्यायनिरत गुनखानी।।
जिन प्रताप सुर असुरन हू की, हिम्मत बिनसि बिलानी।
कालहु सम अरि तृन समझत, जहं के छत्री अभिमानी।।
वीरबधू बुधजननी रहीं, लाखन जित सती सयानी।
कोटि कोटि जित कोटपती, रत बनिक बनिक धनधानी।।
सेवत शिल्प यथोचित सेवा, सूद्र समृद्धि बढानी।
जाको अन्न खाय ऐंडत जग, जाति अनेक अघानी।।
जाकी संपति लुटत हजारन, बरसन हूं न खोटानी।
सहस सहस बरिसन दुख नित, नव जो न ग्लानि उर आनी।।
धन्य धन्य पूरब सम जग, नृपगन मन अजहुं लोभानी।
प्रनमत तीस कोटि जन अजहूं, जाहि जोरि जुग पानी।।
जिनमें झलक एकता की लखि, जगमति सहमि सकानी।
ईस कृपा लहि बहुरि प्रेमघन, कनहु सोई छवि छानी।।
सोइ प्रताप गुनजन गर्वित ह्वै, भरी पुरी धन धानी।।

प्रतापनारायण मिश्र

जनम के ठगिया

साधो मनुवां अजब दिवाना ।
माया मोह जनम के ठगिया, तिनके रूप भुलाना ।
छल परपंच करत जग धूनत, दुख को सुख करि माना ।।
फिकिर तहां की तनिक नहीं है, अंत समय जहं जाना ।
मुख ते धरम धरम गोहरावत, करम करत मनमाना ।।
जो साहब घट घट की जानै, तेही करत बहाना ।
तेहि ते पूछत मारग घर को, आपहि जौन भुलाना ।।
हियां कहां सज्जन कर वासा, हाय न इतनो जाना ।
यहि मनुवां के पीछे चलकै, सुख का कहां ठिकाना ।।
जो परताप सुखद को चींहे, सोई परम सयाना ।।

अपने करम आपने संगी

जागो भाई जागो रात अब थोरी ।
काल चोर नहिं करन चहत है, जीवनधन की चोरी ।
औसर चूके फिरि पछितैहो, हाथ मींजि सिर फोरी ।।
काम करो नहिं काम न ऐहैं, बातें कोरी कोरी ।
जो कछु बीती बीत चुकी सो, चिंता ते मुख मोरी ।।
आगे जामें बनै सो कीजै, करि तन मन इक ठौरी ।
कोऊ काहु को नहिं साथी, मात पिता सुत गोरी ।।
अपने करम आपने संगी, और भावना भोरी ।
सत्य सहायक स्वामि सुखद से, लेहु प्रीति जिय जोरी ।।
नाहिं तु फिर परतापहरी, कोउ बात न पूछिहि तोरी ।।

नाथूराम शंकर

मंगलकामना

द्विज वेद पढ़ें सुविचार बढ़ें, बल पाप चढ़ें सब ऊपर को।
अविरुद्ध रहें ऋजु पंथ गहें, परिवार कहें वसुधा भर को।।
ध्रुव धर्म धरें परदुःख हरें, तन त्याग तरें भवसागर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शंकर को।।

विदुषी उपजें क्षमता न तजें, व्रत धार तजें सुकृतीवर को।
सधवा सुधरें विधवा उबरें, सकलंक करें न किसी घर को।।
दुहिता न बिकें कुटनी न टिकें, कुलबोर छिकें तरसें दर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शंकर को।।

नृपनीति जगे न अनीति ठगे, भ्रमभूत लगे न प्रजाघर को।
झगड़े न मचें खल खर्व लचें, मद से न रचें भट संगर को।।
सुरभी न कटें न अनाज घटें, सुख भोग डटें डपटें डर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शंकर को।।

महिमा उमड़े लघुता न लड़े, जड़ता जकड़े न चराचर को।
शठता सटके मुदिता मटके, प्रतिभा भटके न समादर को।।
विकसे विमला शुभ कर्मकला, पकड़े कमला श्रम के कर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शंकर को।।

मतजाल जलें छलिया न छलें, कुल फूल फलें तज मत्सर को।
अघदंभ दबें न प्रपंच फबें, गुनवान नवें न निरक्षर को।।
सुमरे जप से निरखें तप से, सुर पादप से तुझ अक्षर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता, कर दे कविता कवि शंकर को।।

शंकर-मिलन

मैं समझता था कहीं भी कुछ पता तेरा नहीं।
आज शंकर तू मिला तो अब पता मेरा नहीं॥

अब लों न चले उस पद्धति पै, जिस पै व्रतशील विनीत गये।
वह आज अचानक सूझ पड़ी, भ्रम के दिन बाधक बीत गये॥
प्रभु शंकर की सुधि साथ लगी, मुख मोड़ हठी विपरीत गये।
चलते चलते हम हार गये, पर पाय मनोरथ जीत गये॥

रसविहीन के लिये कविता वृथा है

भरिबो है समुद्र को शंबुक में, छिति को छिगुनी पर धारिबो है।
बांधिबो है मृणाल सों मत्त करी, जुही फूल सों शैल बिदारिबो है॥
गनिबो है सितारन को कवि शंकर, रेणु सों तेल निकारिबो है।
कविता समुझाइबो मूढ़न को, सविता गहि भूमि पै डारिबो है॥

अंध जगत्

बोझ लदे हय हाथिन पै,
खर स्वान खढे नित जाय खुजाये।
बंधन में मृगराज पड़े,
शठ स्यार स्वतंत्र पुकारन पाये॥
मानसरोवर में बिहरें बक,
शंकर मार मराल उड़ाये।
मान घटो गुरु लोगन को,
जगबंचक पामर पंच कहाये॥

पितृदेव क्या थे और मैं क्या हूं ?

क्या शंकर, प्रतिकूल काल का अंत न होगा ?
क्या मंगल मे मेल मृत्युपर्यंत न होगा।
क्या अनुभूत दरिद्रदुःख अब दूर न होगा।
क्या दाहक दुर्दैवकोप कर्पूर न होगा ॥

होकर मालामाल पिता ने नाम किया था।
मैंने उन के साथ न घर का काम किया था ॥
विद्या का भरपूर अटल अभ्यास किया था।
पर औरों की भांति न कुछ भी पास किया था।

जीवन का फल पूज्य पिता जी पाय चुके थे।
कर पूरे मब काम कुलीन कहाय चुके थे ॥
मुंदर स्वर्गसमान विलास बिमार चुके थे।
हम मब उनका अंत अनंत निहार चुके थे ॥

बांध बाप की पाग बना मुखिया घर का मैं।
केवल परमाधार रहा कुनबे भर का मैं ॥
मुख मे पहली भाति निरंकुश रहता था मैं।
क्या कहता है कौन न कुछ भी करता था मैं ॥

जिनका संचित कोश खिलाया खाया मैंने।
करके उनकी होड़ न द्रव्य कमाया मैंने ॥
लूट रहे थे लोग न छल पहचाना मैंने।
घाटे का परिणाम कठोर न जाना मैंने ॥

अटके डिगरीदार किसी ने दाम न छोड़े ।
छीन लिये धन धाम ग्राम आराम न छोड़े ॥
हाय किसी के पास विभूषण वस्त्र न छोड़े ।
नाम रहा निरुपाधि पुलिस ने शस्त्र न छोड़े ॥

बैठ रहे मुख मोड़ पुराने आने वाले ।
लेते नहीं प्रणाम लूट कर खाने वाले ॥
देते हैं दुर्वाद बड़ाई करने वाले ।
लड़ते है बिन बात अड़ी पर मरने वाले ।

कविताप्रेमी लोग न अब सत्कवि कहते हैं ।
हा ! न विज्ञ विज्ञानगगन का रवि कहते हैं ॥
धर्मधुरंधर धीर नहीं गुरुजन कहते हैं ।
मुझको सब कंगाल धनी निर्धन कहते हैं ॥

वित्त विना विख्यात विरद विपरीत हुआ है ।
मन मेरा निःशक महा भयभीत हुआ है ॥
कगाली की मार पड़ी रसभंग हुआ है ।
जीवन का मग हाय विधाता तंग हुआ है ॥

प्रतिभा को प्रतिवाद प्रचंड लताड़ चुका है ।
आदर को अपमानपिशाच पछाड़ चुका है ॥
पौरुष का सिर नीच निरुद्यम फोड चुका है ।
हाय हर्ष का रक्त विषाद निचोड़ चुका है ॥

दरसे देश उदास जाति अनुकूल नहीं है ।
शत्रु करें उपहास मित्र सुखमूल नहीं है ॥

छूटे नातेदार किसी से मेल नही है।
घर मे हाहाकर खुशी का खेल नहीं है ॥

बालक चोखे खान पान पर अड़ जाते है।
खेल खिलौने देख पिछाड़ी पड़ जाते है ॥
पर मनमानी वस्तु बिना वस रह जाते है।
हाय हमारे काढ कलेजे सो जाते है।

फूल फूल कर फूल फली फल खाने वाले।
नाना व्यंजन पाक प्रसादी पाने वाले ॥
दूध रसाला आदि सुधारस पीने वाले।
हाय बने हम शाक चनों पर जीने वाले।

लड़के लकड़ी बीन बीन कर ला देते है।
ईंधन भर का काम अवश्य चला देते है ॥
वृद्ध चचा दो तीन बार जल भर देते है।
माग मांग कर छाछ महेरी भर देते है ॥

छप्पर में विन बास घुने एरंड पड़े है।
बरतन का क्या काम घने घनखंड पड़े है।
खाट कहां? छै सात फटे से टाट पड़े है।
चक्की पीसे कौन बिना भिड़ पाट पड़े है ॥

जाड़े का प्रतियोग, न उष्णविलास मिलेगा।
गरमी का प्रतिकार न शीतल वास मिलेगा ॥
घेर रही बरसात न सूखा ठौर मिलेगा।
इस खंडहर को छोड़ कहां घर और मिलेगा ॥

कर कर केहरिनाद बलाहक बरस रहे हैं।
अस्थिर विद्युद्दृश्य दशों दिश दरस रहे हैं।।
गदला पानी छेद छत्त से छोड़ रहे हैं।
इंद्रदेव जी टांग त्राण की तोड़ रहे हैं।।

दिया जले किस भांति तेल को दाम नहीं है।
काटे मच्छर डांस कहां आराम नहीं है।।
टूट पड़े दीवार यहां संदेह नहीं है।
कर दे पनियांढार नहीं तो मेह नहीं है।।

बीत गई अब रात अंधेरा दूर हुआ है।
संटक का कुल हाय न चकनाचूर हुआ है।।
आज तीसरा रुद्र रूप उपवास हुआ है।
हा! हम सबका घोर नरक में वास हुआ है।।

जो जगती पर बीज पाप के बो न सकेगा।
जिसका साहस सत्य धर्म को खो न सकेगा।।
जो विधिविपरीत कभी कुछ न कर सकेगा।
रो रो कर वह रंक कहा तक मर न सकेगा।।

आत्म-बोध

पठ पाठ प्रचंड प्रमादभरे, कपटी जन जन्म गमाय गये।
रण रोप भयानक आपस में, भट केवल पाप कमाय गये।।
धन, धाम बिसार धरानल में, धनवान असंख्य समाय गये।
कवि 'शंकर' सिद्धि मनोरथ की, जड़ शुद्ध सुबोध जमाय गये।।

उपदेश अनेक सुने मन को, रुचि के अनुसार सुधार चुके।
धर ध्यान यथाविधि मंत्र जपे, पढ़ वेद पुराण विचार चुके॥
गुरु गौरव धार महंत बने, धन धाम कुटंब विसार चुके।
कवि 'शंकर' ज्ञान विना न तरे, सब ओर फिरे झक मार चुके॥
निगमागम तंत्र पुराण पढ़े, प्रतिवाद प्रगल्भ कहाय खरे।
रच दंभ प्रपंच पसार घने, बन वंचक वेष अनेक धरे॥
विचरे कर पान प्रमाद सुरा, अभिमान हलाहल खाय मरे।
कवि 'शंकर' मोहमदोदधि से, वकराज विवेक बिना न तरे॥
घरबार बिसार विरक्त वने, ठनि वेष बनाय प्रमत्त रहैं।
बकबाद अबोध गृहस्थ सुने, शठ शिष्य अनन्य सुजान कहैं॥
घुस घोर घमंड महावन में, विचरैं कुलबोर कुपंथ गहैं।
कवि 'शंकर' एक विवेक बिना, कपटी उतपात अनेक सहैं॥
तन सुंदर रोगविहीन रहै, मन त्याग उमंग उदास न हो।
मुख धर्म प्रसंग प्रकाश करे, नरमंडल में उपहास न हो॥
धन की महिमा भरपूर मिले, प्रतिकूल मनोजविलास न हो।
कवि 'शंकर' ये उपभोग वृथा, पटुता प्रतिभा यदि पास न हो॥
दिन रात समोद विलास करें, रसरंग भरे सुखसाज बने।
शिर धार किरीट कृपाण गहें, अवनी भर के अधिराज बनें॥
अनुकूल अखंड प्रताप रहै, अविरुद्ध अनेक समाज बने।
कवि 'शंकर' वैभव ज्ञान बिना, भवसागर के न जहाज बने॥

श्रीधर पाठक

उजड़ा गांव

कबहुं न तहां पधारि ग्राम्य जन पग अब धरिहैं।
मधुर भुलौनी माहिं नित्य चिंताहि बिसरिहैं ॥
ना किसान अब समाचार तहं आय सुनैहैं।
ना नाऊ की बातें सब को मन बहलैहैं ॥
लकड़हार कौ बिरहा कबहुं न तहं सुनि परिहैं।
तान श्रवन आनंदउदधि कबहुं न उभरिहैं ॥
मांधौ पोंछि लोहार काम को तहं रुकिहै ना।
भारी बलहि ढिलाय सुनन बातें झुकिहै ना ॥
घर को स्वामी आपु दीखिहै तहं अब नाहीं।
झाग उठे प्याले को फिरवावत सब पाहीं ॥
धनी करहु उपहास तुच्छ मानहु किन मानी।
दीनन की यह लघु सम्पति साधारन जानी ॥
मोंहि अधिक प्रिय लगै अधिक ही मो हिय भाई।
सब ही बनावटनि सों एक सहज सुघराई ॥

जादूभरी थैली

कै यह जादूभरी विश्वबाजीगर थैली।
खेलत में खुलि परी शैल के सिर पै फैली ॥
पुरुष प्रकृति कौं किधौं जबै जोबनरस आयौ।
प्रेमकेलि रसरेलि करन रंगमहल सजायौ ॥
खिली प्रकृति पटरानी के महलन फुलवारी।
खुली धरी कै भरी तासु सिंगारपिटारी ॥

प्रकृति यहां एकांत बैठि निज रूप संवारति ।
पल पल पलटति भेस छनिक छवि छिन-छिन धारति ।।
बिमल अम्बुसर मुकुरन महं मुखबिम्ब निहारति ।
अपनी छबि पै मोहि आपही तन मन वारति ।।
यही स्वर्ग सुरलोक यही सुरकानन सुंदर ।
यहि अमरन कौ ओक यहीं कहुं बसत पुरंदर ।।

स्वर्गीय वीणा

कहीं पै स्वर्गीय कोई बाला, सुमंजु वीणा बजा रही है ।
सुरों के संगीत की सी कैसी, सुरीली गुंजार आ रही है ।।

हरेक स्वर में नवीनता है, हरेक पद में प्रवीनता है ।
निराली लय है औ लीनता है, अलाप अद्‌भुत मिला रही है ।।

अलक्ष्य पर्दो मे गत सुनाती, तरल तरानों मे मन लुभाती ।
अनूठे अटपट स्वरों मे स्वर्गिक, सुधा की धारा बहा रही है ।।

कोई पुरंदर की किंकिरी है, कि या किसी सुर की सुंदरी है ।
वियोगतप्ता सी भोगमुक्ता, हृदय के उद्‌गार गा रही है ।।

कभी नई तान प्रेममय है, कभी प्रकोपन कभी विनय है ।
दया है दाक्षिण्य का उदय है, अनेकों बानक बना रही है ।।

भरे गगन में है जितने तारे, हुए है बदमस्त गत पै सारे ।
समस्त ब्रह्मांड भर को मानों, दो उंगलियों पर नचा रही है ।।

सुनो तो सुनने की शक्ति वालो, सको तो जाकर के कुछ पता लो ।
है कौन जोगन ये जो गगन में, कि इतनी चुलबुल मचा रही है ।।

ओ घन श्याम !

हे बारिद ! नव जलधर ! हे धाराधर नाम ।
हे पयोद ! पय सुंदर हे अतिशय अभिराम ।।
हे प्रानद आनंद घन हे जगजीवनसार ।
हे सजीव जीवनधन हे त्रिभुवन आधार ।।
हे घन स्याम परम प्रिय हे आनंदघन स्याम ।
मुदित करन हरिजनहिय हे हरितनुज मुदाम ।।
हे जग जीयजुड़ावन भीयछुड़ावनहार ।
हे बकतीयउड़ावन हीयबढावनहार ।।
हे रनबंक धनुसधर सर तरकस जलधार ।
ग्रीसमबिसमकलुसहर रविकरप्रखरप्रहार ।।
हे गिरितुगशिखरचर हे निर्भय नभयान ।
हे नित नूतन तनधर हे पवमान विमान ।।
तुम भारत के धन बल गुन गौरव आधार ।
तुम ही तन तुम ही मन तुम प्राननपतवार ।।
परम पुरातन तुम्हरौ भारत संग सत प्रेम ।
जिहि जानत जग सगरौ मानत निश्चिल नेम ।।
सो तुमकों नहिं चहियत छांडन हित सम्बंध ।
अटल सदैवहि कहियत पूरन प्रकृति प्रबंध ।।
सोचहु सुमिरि सुजस निज हे उज्ज्वल जस मौन ।
इन दुखियनहिं तुमहिं तज घन अवलम्बन कौन ।।
पठवहु परम सुहावनि पावनि पूरब पौन ।
सुभ संदेससुनावनि जरझरलावनि जौन ।।

स्याम घटा लै धावहु छावहु नभहि दबाय।
दिव्य छटा फैलावहु लावहु दलहि सजाय॥
घोरहु घुमड़ी घमकहु घेरहु दसहु दिसान।
दामिनि द्रुतहि दमंकहु धाइहु धनुस निसान॥
गरजन गहन सुनावहु रनव्रतबीरसमान।
लरजन ललित दिखावहु बांधहु धुर धुरवान॥
मुग्ध मयूर नचावहु निज घनघोर सुनाय।
दादुर भेक बुलावहु नव अभिषेक कराय॥
कहुं कहुं कड़कि सुनावहु विज्जुपतन ठनकार।
कहुं मृदु श्रवन करावहु झिल्लीगनझनकार॥
बन बन कीट पतंगन घर घर तियगनतान।
पुरबहु रंग विरंगन हे बहु ढंगनिधान॥
करि कृतकृत्य किसानन सम्बत सर सरसाउ।
सींचि सस्य तृन धानन तब निज धाम सिधाउ॥
समै समै पुनि आवहु पुनि जावहु इहि रीति।
सहज सुभाग बढ़ावहु गहि मग प्राकृत नीति॥
प्रथित प्रेम रस पागहु पूरन प्रनय प्रतीत।
सदा सरस अनुरागहु हे घन! विनय विनीत॥

अयोध्यासिंह उपाध्याय

युवक

जाति-आशा-निशि-मंजु-मयंक, कामना-लतिका-कुसुम-कलाप,
युवक है लोक-कालिमा-काल, देश-कमनीय-कंठ—आलाप।
जगाता है नव जीवनज्योति, राग-आरंजित जिसका गात;
लोक-लोचन का है जो ओक, युवक है वह भव-भव्य-प्रभात ।।

सुमनता है जिसकी स्वर्गीय, सफलता वसुधा-सिद्धि-विधान,
मिली जिसमें मोहकता दिव्य, युवक है वह महान उद्यान।
बने महिमा-मंडित अवनीप, दें जिसे स्वमुकुट-मंडप-मान;
अचल है जिसकी अंतर्ज्योति, युवक है वह महि-रत्न महान ।।

वहा वसुधा पर सुधाप्रवाह, बन सका जो मंडन भव-शीश,
तिमिर में भरता है जो भूति, युवक है वह राका-रजनीश।
ललित लय है जिसकी प्रलयाग्नि, या परम द्रवणशील नवनीत;
भरित है जिसमें विजयोल्लास, युवक है वह स्वदेश-संगीत ।।

नरक जिससे बनता है स्वर्ग, मरु महितल नंदन उद्यान,
कल्पतरुसम कमनीय करील, युवक है वह अनुभूत विधान।
प्रबल है जिसका हृदयोल्लास, उदधि-उत्ताल-तरंग-समान;
पवि-पतन है जिसका विक्षोभ, युवक है वह प्रचंड उत्थान ।।

दग्ध कर शिर पर पड़ उर वेध, दुर्जनों का करता है अंत,
भयंकर प्रलय-भानु यम-दंड, युवक है काल-सर्प-विष-दंत।
प्रलय-पावक का प्रबल प्रकोप, अग्निगिरि का ज्वलंत उद्गार;
त्रिलोचन-अनल-वमन-रत-नेत्र, युवक है मूर्तिमंत संहार ।।

सफलता-सूत्र

दूर कर अवनि-तल-तम-तोम, तमी-तामस का कर संहार,
दलन कर दानव-दल का व्यूह, भानु करता है प्रभा-प्रसार।
प्रति-दिवस कला-हानि अवलोक, कलानिधि होता नही सशंक;
समय पर सकल कला कर लाभ, सरस करता है भूतल-अंक॥

वायु से ताडित हो बहु वार, टला कब वारिवाह गंभीर,
सघनता कर संचय सब काल, बरसता है वसुधा पर नीर।
विटप-कुल होकर पत्र-विहीन, बना कुसुमाकर को अनुकूल;
पुन: पाता है बहु कमनीय, नवल श्यामल दल औ फलफूल॥

शोक हर शोकित लोक अशोक, सहन कर ललना-पाद-प्रहार,
पहनता है नज अविकच भाव, विकच सुमनों का सुंदर हार।
धीर धर ले धरती अवलंब, अधिक नुच कट छंट कर बहु वार;
पद-दलित प्रति-दिन हो-हो दूब, पनपती है रख पानिप प्यार॥

कुसुम-तरु-कंटक को अवलोक, समाकुल होता नही मिलिंद,
सफलता पाता है सब काल, छिन्न हो कदली-पादप-वृंद।
टले है करतब हिम बल देख, विघ्न-बाधा कृमि-कुल का व्यूह,
सहमता है पौरुष-तम देख, विफलता गृह-मक्षिका-समूह॥

हुई जिसको अवगत यह बात, सका यह मर्म मनुज को जान,
मिली जिसको अनुभूति-विभूति, हुआ जिसको भव-हित का ज्ञान।
सजाने को जीवन-कल-कंठ, कर सुयश-सौरभ का विस्तार;
वही ले साहस-सुमन-समूह, सफलता का गूंथेगा हार॥

कुल-ललना

आंख में लज्जा हो ऐसी, फाड़ जो परदों को फेंके,
राह जो बुरे तेवरों की, पहाड़ी घाटी बन छेंके।
चांद सा मुखड़ा ऐसा हो, न जिस पर हों धब्बे काले;
चांदनी उससे वह छिटके, सुधा जो वसुधा पर ढाले॥

हंसे तो वह बिजली चमके, गिरे जो पापी के सर पर,
बहे उसमें वह रस-धारा, करे जो खुलती आंखें तर।
कान सीपों जैसे सुंदर, मैल से सदा रहें डरते;
बड़ी ही सुंदर बातों के, मोतियों से होवें भरते॥

हिलावें जो वे होंठों को, फूल तो मुंह से झड़ पावे,
रहे जिसमें ऐसी रंगत, काठ उकठा भी फल लावे।
कलेजा उनका कमलों सा, खुले से खिले रंग लावे;
दिशा जिससे महमह महके, रमा जिसमें घर कर पावे॥

रहे जी में सब दिन बहती, देश-ममता की वह धारा,
वेग से जिसके वह जावे, जमा कूड़ा करकट सारा।
लगे निजता इतनी मीठी, परायापन इतना कड़ुआ;
कि जिससे ग्लास कांच के ले, न फेंके गंगा-जल-गड़ुवा॥

अलग जो कर दें पय पानी, हंस की सी चालें चलें,
जहां अंधियाला दिखलावे, वहां पर दीपक जैसी बलें।
सदा अपने हाथों में ले, लोक-हित फूलों की डाली;
कुलवती ललनाएं रख लें, लाल के मुखड़े की लाली॥

भारत के नवयुवक

जाति-धन प्रिय नव-युवक-समूह, विमल मानसके मंजु मराल ।
देश के परम मनोरम रत्न, ललित भारत–ललना के लाल ।।
लोक की लाखों आंखे आज, लगी है तुम लोगों की ओर ।
भरी उनमें है करुणा भूरि, लालसामय है ललचित कोर ।।
उठो, लो आंखें अपनी खोल, विलोको अवनी तल का हाल ।
अनालोकित में भर आलोक, करो कमनीय कलंकित भाल ।।
भरे उर मे जो अभिनय ओज, सुना दो वह सुंदर झनकार ।
ध्वनित हो जिसमें मानस-यंत्र, छेड़ दो उस तंत्री का तार ।।
रगों मे बिजली जावे दौड़, जगे भारत-भूतल का भाग ।
प्रभावित धुन से हो भरपूर, उमग गाओ वह रोचक राग ।।
हो सके जिससे सुघटित जाति, सुकंठों मे गूंजे वह तान ।
भाव जिसमे हो भरे सजीव, करो ऐसे गीतो का गान ।।
कर विपुल साहस वज्र-प्रहार, विफलता-गिरि को कर दो चूर ।
जगा दो सकल साधना-ज्योति, विविध बाधातम कर दो दूर ।।
गगन मे जा, भूतल में घूम, निकालो कार्य-सिद्धि की राह ।
अचल को विचलित कर दो भूरि, रोक दो वारिधि-वारि-प्रवाह ।।
धूल मे क्यों मिलती है धाक, बचा लो बची बचाई आन ।
मचा दो दोषदलन की धूम, मसल दो दुख को मशक-समान ।।
लाभ-हित देश-प्रेम-रवि-ज्योति, आंख लो निज भावों की खोल ।
त्याग करके निजता-अभिमान, जाति-ममता का समझो मोल ।।
देश के हित निज-जाति-निमित्त, अतुल हो तुम लोगों का त्याग ।
अवनि-जन-अनुरंजन के हेतु, बनो तुम मूर्तिमान अनुराग ।।
अनाथों के कहलाओ नाथ, हरो अबला-जन-दुख अविलंब ।

सबलता करो जाति को दान, अबल-जन के होकर अवलंब ।।
बनो असहायों के सर्वस्व, अबुध-जन की अनुपम अनुभूति ।
वृद्ध जन के लोचन की ज्योति, अकिंचन-जन की विपुल विभूति ।।
सरस रुचि रुचिर कंठ के हार, सुजीवन-नव-घन-मत्त-मयूर ।
लोक-भावुकता-तन शृंगार, सुजनता-भव्य-भाल-सिंदूर ।।
भरो भूतल मे कीर्तिकलाप, दिखा भारतजननी से प्यार ।
करो पूजन उनका पद-कंज, बना सुरभित सुमनों का हार ।।

कमनीय कामना

ऐ नव-जीवन के जीवन-धन, ऐ अनुरंजन के आधार ।
ऐ मंजुलता के अवलंबन, ऐ रसमयता के अवतार ।।
ऐ उमंगमय मानस के मधु, ऐ तरंगमय चित के चाव ।
प्रकृति कंठ के हार मनोहर, भवभावुकता के अनुभाव ।।

ऐ कुसुमाकर जो भारत को, कुसुमित करते हो कर प्यार ।
तो जीवन-विहीन मे कर दो, अभिनव जीवन का संचार ।।
मलय-पवन नित मंद मद वह, करे मंदता मन की दूर ।
सौरभ-रहित भाव-भवनों मे, सरस सुरभि भर दे भरपूर ।।

कोकिल की काकली सुनाके, वह अति कलित अलौकिक गान ।
जिससे कुंठित विपुल कंठ मे, पूरित हो उत्कंठित तान ।।
भरी मत्तता मोहकता से, अलिकुल की आकुल झंकार ।
झंकृत करे अलंकृत मानस, छेड़े हृत्तंत्री के तार ।।

तरु-किसलय की नवल लालिमा, भरे लोचनों में अनुराग ।
लता-बेलियों के विलास से, विलसे अंतर का नव राग ।।

विकसे विकसे कुसुम देख हो, देश-प्रेम का परम विकास।
जाति-वासनाएं बन जाएं, सरस वास का वर आवास ॥

लाली मुख की रखे मुखों पर, लग लग करके लाल गुलाल।
रंजित करे अरंजित जन को, आरंजित अबीर का थाल ॥

रंग बिगड़ता रहे बनाता, समय रंग रख रख कर रंग।
भंग भंग कर सके न गौरव, सु उमडित हो फाग उमंग ॥

अतीत-संगीत

था भव-प्रातःकाल राग-रंजित था नभ-तल;
लोहित-वमन ललित अंक था लोक समुज्ज्वल।
था अभिव्यक्ति-विकास प्रकृति-मानस मे होता;
धीरे धीरे तिमिर-पुंज था तामस खोता।
क्षितिज-अंक से निकल विभा के बहु-विध गोले;
केलि-निरत थे विविध कल्पना-कुसुमो को ले।
मथर गति से पवन-प्रगति थी विकसित होती;
नव-जीवन का बीज नवल निधि मे थी बोती ॥
सलिल-निलय संसार-लहरियो द्वारा चुंबित;
अरुण असित सित विपुल बिंब से था प्रतिबिंबित।
किसी अकल्पित दिशा मध्य कर महा उजाला;
एक अलौकिक तम तमोरि था उगने वाला।
इसी समय इस सलिल-राशि मे महा मनोहर;
एक अयुत-दल कमल हुआ भव-लोचन-गोचर।
उसकी परमिति किसी काल में गई न मापी;
उसका था विस्तार अमित जगतीतलव्यापी।

विश्व-महान-विभूति-भूत थी उस पर विलसी;
जिसमें विविध विधान की विबुधता थी निवसी।
था जिस काल असंख्य लोक लीलामय बनता;
भव कमनीय वितान जिस समय विभु था तनता।
उसी समय संसारमयी नीरवता टूटी;
महा कंठ का गान हुआ खजडता छूटी।
उससे हुआ दिगंत ध्वनित नभ-निधि लहराया;
सकल लोक के स्वर-समूह मे जीवन आया।
गिरा हुई अवतीर्ण अनाहत नाद सुनाया;
कर की वीणा बजी विमोहित विश्व दिखाया।
लोकोत्तर झंकार अखिल लोकों में फैली;
विविध-कंठ आधार बनी अवधारित शैली।
जो ज्वलंत बहुपिंड व्योमतल मे थे फिरते;
जहां-तहां जो विविध रंग के घन थे घिरते।
महा उदधि मे तरल तरंगे जो उठ पाती;
सरिताएं जो मंद मंद बहती दिखलाती।
जितने थे सर-स्रोत, रहे जो झरने झरते;
अपर तरुलता आदि जो विविध रव थे करते।
उनमें भी थी बजी बीन ही झंकृत होती;
जिससे जागी जगविकास की ममता सोती।
वेद-ध्वनि से ध्वनित हुआ भव-मंडल सारा;
लोक-लोक में वही मधुर स्वर-सप्तक-धारा।
श्रवण-रसायन बनी, मुग्धमानस में निवसी;
विविध राग-रागिनी-मधुर, वह बहुविधि विलसी।

उससे होकर मत्त गान, वह शिव ने गाया;
जिसने सारे विबुध–वृंद को चकित बनाया।
उसकी मंजुल गूंज भूरि भुवनों में गूंजी;
बनी विश्व के विविध-धर्म-भावों की पूंजी।
उसके रस से सिचीं लोक–भाषा–लतिकाएं;
जिनमें विकसी कलित-ललित सुरभित कलिकाएं।
वह सुकंठता उससे साधु नारद ने पाई;
जिसने सुरपुर सदन-सदन में सुधा बहाई।
उससे भर भर मिले छलकते मानस प्याले;
जिनको पी गंधर्व बने मधुता मतवाले।
नाच उठी अप्सरा, गान वह मोहक गाया।
जिसने सारे स्वर-समूह को सरस बनाया।
ले ले उसका स्वाद किन्नरों ने रस पाया;
सुना मनोहर तान वाद्य बहु मंजु बजाया।
उसकी ही कमनीय कला मुरली ने पाई;
मनमोहन ने जिसे महा मधुमयी बनाई।
जब यह मुरली बड़े मधुर स्वर से बजती थी;
प्रकृति उस समय दिव्य साज द्वारा सजती थी।
पाहन होते द्रवित पादपावलि छवि पाती;
रस-धारा थी लता-बेलियों पर बह जाती।
खग मृग बनते मत्त, नाचते मोर दिखाते;
विकसित होते फूल, फल मधुर रस टपकाते।
रुकता सलिल प्रवाह कलित कालिंदी होती;
वृंदावन की भूमि मलिनताएं थी खोती।

होता हृदय-विकास, मुग्ध मानस बन जाते;
साधक-सिद्ध पुनीत साधना के फल पाते।
साहस-हीन मलीन जनों में जीवन आता;
पातक होता दूर, मुक्ति-पथ मानव पाता।
क्या न कभी फिर मधुर मुरलिका बज पावेगी;
क्या न कान में सरस सुधा फिर टपकावेगी।
जो जन-जन में भर विनोद-रस बरसावेगा;
वह अतीत संगीत क्या न गाया जावेगा॥

देवीप्रसाद पूर्ण

मृत्युंजय

प्रतिनिधे खल काल कराल के ! कुटिल क्रूर भयानक पातकी ॥
अति विलक्षण है तव दुष्क्रिया। अशुचि मृत्यु हरे अधमाधम ॥
करत सैर हुते कल बाग की। तुरगबाग गहे कर रेशमी ॥
सुनि परै तिनकी अब वारता। चल बसे तजिके जगबाग सो ॥
रतनमंदिर मंजु अमंद में। रमत जौन निरंतर ही रहे ॥
दिवस अंतर में सोइ सोवहीं। अब भयंकर घोर मसान में ॥
गतिसुधारन की करि धारना। उचित है चित धीरज धारियो ॥
झटिति हो अथवा कछु काल में। अवशि जीतहिंगे हम काल को ॥
सकल पापन सों बचि कै सदा। शुभ सुकर्म करौ बिन वासना ॥
परम सार रहै नित ध्यान में। सुखद पंथ यही वर ज्ञान को ॥
जगत है मन की सब कल्पना। दृढ जबै यह निश्चय होत है ॥
जगत भासत पूरन ब्रह्म ही। बस वही परिपूरन ज्ञान है ॥
पर दशा वह पूरन ज्ञान की। स्थिर सदा रस एक रहै नहीं ॥
न जब लौं मनको बस कीजिये। तजि सबै जड जंगम वासना ॥
सुहृद संग सहोदर सुंदरी। सुखद संतति धाम वसुंधरा ॥
सुजस संपति की मनकामना। सबन को बस बंधन मानिये ॥
यदि लखात असार जहान है। कुढत जो जग बंधन ते हियो ॥
उदित जो उर मुक्ति सुकामना। करहु तो तुम साधन ज्ञान को ॥
तिमिरनाश प्रकाश बिना नहीं। न बिलै घन वात बिना यथा ॥
न बरखा बिन जात निदाघ ज्यों। मिटत काल नहीं बिन ज्ञान के ॥
बिलग वारिधि ते न तरंग है। पृथकता बरु मंद विचारहीं ॥

लहर अंबुधि दोनहुं अंबु है। जगत ब्रह्ममयो तिमि जानिये ॥
कनक के वरु कंकन किंकिनी। अमित आकृति के रचिये तऊ ॥
कनक ते नहि अन्य कछू तथा। सकल ब्रह्ममयो जग जानिये ॥
भवन मे मठ में घट मे तथा। गगन देखि अनेक परो तऊ ॥
विमल बुद्धिन को नभ एक है। भवन में परमातम है तथा ॥

विधि – विडंबना

पतन निश्चित है जिसका हुआ, हठ उसे प्रिय है निज देह मे।
अटल है उसकी विधिवामता, विनय मे नय मे घटती नहीं ॥
महिमता जिसकी अवलोक के, अनिश निंदक है खलमंडली।
सुयश क्या उसका जग मे नहीं, धवल है, बल है यदि दैव का ॥
हृदय सुस्थिर होकर देख तू, नियति का बल केवल है जिसे।
कठिन कंटकमार्ग उसे सदा, सुगम है गम है करना वृथा ॥
शतसहस्रगुणान्वित है यहां, विविध शास्त्रविशारद है पड़े।
हृदय ! क्यों उनमे फिर एक दो, सुकृत मे कृत सेवक लोक है ॥
जनन का मरना परिणाम है, मरण हा न मिले फिर देह क्यों।
मन ! बली विधि की करतूत से, पतन का तन का चिर संग है ॥
मन ! रमारमणीरमणीयता, मिल गई यदि य विधियोग मे।
पर जिसे न मिली कवितासुधा, रसिकता सिकतासम है उसे ॥
सुविधि से विधि से यदि है मिली, रसवती सरसीव सरस्वती।
मन ! तदा तुझको अमरत्वदा, नवसुधा वसुधा पर है मिली ॥
चतुर है चतुराननसा वही, सुभगभाग्यविभूषितभाल है।
वह ! जिसे मन मे परकाव्य की, रुचिरता चिरतापकरी न हो ॥

रामचंद्र शुक्ल

उपदेश

अप्रमेय को शब्द बांधि के बताइये,
जो अथाह ताहि यों न बुद्धि सों थहाइये।
ताहि पूछि औ बताय लोग भूल ही करें,
सो प्रसंग लाय व्यर्थ वाद माहिं ते परें॥

अंधकार आदि में रह्यो पुराण यों कहै,
वा महानिशा अखंडबीच ब्रह्म ही रहै।
फेर में न ब्रह्म के, न आदि के रहौ, अरे,
चर्मचक्षु को अगम्य और बुद्धि के परे॥

चलत तारे रहत पूछन जात यह सब नाहिं,
लेहु एतो जानि बस हैं चलत या जग माहिं।
सदा जीवन मरण, सुख दुख शोक और उछाह,
कार्यकारण की लरी औ कालचक्रप्रवाह॥

और यह भवधार जो अविराम चलति लखाति,
दूर उद्गम सों सरित चलि सिंधु दिशि ज्यों जाति।
एक पाछे एक उठति तरंग तार लगाय,
एक है सब, एक सी पै परति नाहिं लखाय॥

जानिबो एतो बहुत भूस्वर्ग आदिक धाम,
सकल माया दृश्य हैं सब रूप हैं परिणाम।
रहत घूमत चक्र यह श्रम दुःखपूर्ण अपार,
थामि याको सकत कोऊ नाहिं काहु प्रकार॥

ब्रह्मलोक तें परे सनातन शक्ति विराजति,
जो या जग मे 'धर्म' नाम सों आवति बाजनि।
आदि अंत नहिं जासु नियम है जाके अचल,
सत्वोन्मुख जो करति सर्गगति संचित करि फल ॥

कला ताकी करत है घनपुंजरंजित जाय,
चंद्रिकन पै मोर की दुति ताहि की दरसाय।
नखत ग्रह मे सोइ ताही को करै उपचार,
दमकि दामिनि बहि पवन औ मेघ दै जलधार ॥

नाहिं कुंठित होति कैसहु करन मे व्यवहार,
होत जो कछु जहां सो सब तासु रुचि अनुसार।
भरति जननि उरोज मे जो मधुर छीर रसाल,
धरति सोई व्यालदशनन बीच गरल कराल ॥

गगनमंडप बीच सोई ग्रह नछत्र सजाय,
बांधि गति, सुर ताल पै निज रही नाच नचाय।
सोइ गहरे खात मे भूगर्भ भीतर जाय,
स्वर्ण, मानिक, नील मणि की राशि धरत छपाय ॥

शक्ति तुम्हरे हाथ देवन सों कछू कम नाहिं,
देव, नर, पशु आदि जेते जीव लोकन माहिं।
कर्मवश सब रहत भरमत बहत यह धार,
लहत सुख औ सहत दुख निज कर्म के अनुसार ॥

——

मैथिलीशरण गुप्त

भारतवर्ष की श्रेष्ठता

भूगोल का गौरव प्रकृति का पुण्य लीलास्थल कहां ?
फैला मनोहर गिरि हिमालय और गंगाजल जहां।
संपूर्ण देशों से अधिक किस देश का उत्कर्ष है।
उसका कि जो ऋषिभूमि है, वह कौन ? भारतवर्ष है।

हां! वृद्ध भारतवर्ष ही संसार का सिरमौर है।
ऐसा पुरातन देश कोई विश्व में क्या और है ?
भगवान की भवभूतियों का यह प्रथम भंडार है।
विधि ने किया नरसृष्टि का पहले यहीं विस्तार है॥

यह पुण्यभूमि प्रसिद्ध है इसके निवासी आर्य हैं,
विद्या कला कौशल्य सबके जो प्रथम आचार्य हैं।
संतान उनकी आज यद्यपि हम अधोगति में पड़े,
पर चिन्ह उनकी उच्चता के आज भी कुछ हैं खड़े॥

शुभ शांतिमय शोभा जहां भवबंधनों को खोलती,
हिलमिल मृगों से खेल करती सिंहिनी थीं डोलती।
स्वर्गीय भावों से भरे ऋषि होम करते थे जहां,
उन ऋषिगणों से ही हमारा था हुआ उद्भव यहां॥

उन पूर्वजों की कीर्ति का वर्णन अतीव अपार है,
गाते हमी गुण है न उनके गा रहा संसार है।
वे धर्म पर करते निछावर तृणसमान शरीर थे,
उनसे वही गंभीर थे, वर वीर थे, ध्रुव धीर थे॥

उनके अलौकिक दर्शनों से दूर होता पाप था,
अति पुण्य मिलता था तथा मिटता हृदय का ताप था।
उपदेश उनके शांतिकारक थे निवारक शोक के,
सब लोक उनका भक्त था वे थे हितैषी लोक के॥

वे ईशनियमों की कभी अवहेलना करते न थे,
सन्मार्ग में चलते हुए वे विघ्न से डरते न थे।
अपने लिये वे दूसरों का अहित कभी करते न थे,
चिंताप्रपूर्ण अशांतिपूर्वक वे कभी मरते न थे॥

वे मोहबंधनमुक्त थे स्वच्छंद थे स्वाधीन थे,
संपूर्णसुखसंयुक्त थे वे शांतिशिखरासीन थे।
मन से वचन से कर्म से वे प्रभुभजन में लीन थे,
विख्यात ब्रह्मानंदनद के वे मनोहर मीन थे॥

वे आर्य ही थे जो कभी अपने लिये जीते न थे,
वे स्वार्थवश हो मोह की मदिरा कभी पीते न थे।
संसार के उपकारहित जब जन्म लेते थे सभी,
निश्चेष्ट होकर किस तरह वे बैठ सकते थे कभी॥

आदर्श जन संसार में इतने कहां पर हैं हुए?
सत्कार्यभूषण आर्यगण जितने यहां पर हैं हुए।
हैं रह गये यद्यपि हमारे गीत आज रहे सहे,
पर दूसरों के वचन भी साक्षी हमारे हो रहे॥

लक्ष्मी नहीं सर्वस्व जावे सत्य छोड़ेंगे नहीं,
अंधे बनें पर सत्य से संबंध तोड़ेंगे नहीं।

निज सुतमरण स्वीकार है पर वचन की रक्षा रहे,
है कौन जो उन पूर्वजों के शील की सीमा कहे ॥

सर्वस्व करके दान जो चालीस दिन भूखे रहे,
अपने अतिथिसत्कार में फिर भी न जो रूखे रहे।
परतृप्ति कर निजतृप्ति मानी रंतिदेव नरेश ने,
ऐसे अतिथिसंतोषकर पैदा किये किस देश ने ॥

आमिष दिया अपना जिन्होंने श्येनभक्षण के लिये,
जो बिक गये चांडाल के घर सत्यरक्षण के लिये।
दे दी जिन्होंने अस्थियां परमार्थहित जानी जहां,
शिवि, हरिश्चंद्र, दधीचि से होते रहे दानी कहां ॥

सत्पुत्र पुरु से थे जिन्होंने तातहित सब कुछ सहा,
भाई भरत से थे जिन्होंने राज्य भी त्यागा अहा।
जो धीरता के वीरता के प्रौढतम पालक हुए,
प्रह्लाद, ध्रुव, कुश लव तथा अभिमन्युसम बालक हुए ॥

वह भीष्म का इंद्रियदमन उनकी धरा सी धीरता,
वह शील उनका और उनकी वीरता गंभीरता।
उनकी सरलता और उनकी वह विशालविवेकता,
है एक जन के अनुकरण में सब गुणों की एकता ॥

•बार बार तू आया

बार बार तू आया, पर मैंने पहचान न पाया।
हिमकपित कृशपाणि पसारे, पहुंच बुभुक्षित मेरे द्वारे।
तू ने मेरा धक्का खाया, बार बार तू आया।

दीन दृगों से निकल पड़ा तू, बड़ा सरस था विकल बड़ा तू।
पर मैं कौतुक से मुसकाया, बार बार तू आया।
गर्वितांगों का गंध लगाये, आया फिर तू अलख जगाये।
हट कर मैंने तुझे हटाया, बार बार तू आया।
आर्त गिरा कानों में आई, वह थी तेरी आहट लाई।
पर मैं उस पर ध्यान न लाया, बार बार तू आया।
पीड़ित के निःश्वास अरे रे! मैं क्या जानूं कर थे तेरे!
मुझ पर मायामद था छाया, बार बार तू आया।
अब जो मैं पहचानूं तुझको, तो तू भूल गया है मुझको।
मैं हूं जिसने तुझे भुलाया, बार बार तू आया।
पर मैंने पहचान न पाया।

इंद्र-जाल

अच्छा इंद्रजाल दिखलाया।
खोलूं जब तक पलक कौतुकी, तुमने पेड़ लगाया!
भांति भांति के फूल खिले हैं, रंग रूप रस गंध मिले हैं,
भौंरे हर्षसमेत हिले हैं, गुंजारव है छाया!
अच्छा इंद्रजाल दिखलाया।
उड़ उड़ कर पछी आते हैं, फुर फुर कर फिर उड़ जाते हैं,
क्या लाते हैं, क्या पाते हैं, तब भी पता न पाया!
अच्छा इंद्रजाल दिखलाया।
यह जो अम्ल मधुर फल लाया, उसने किसे नहीं ललचाया।
वह पछताया जिसने खाया, और न जिसने खाया!
अच्छा इंद्रजाल दिखलाया!

पहले के पत्ते झड़ते हैं, उड़ते हैं गिरते पड़ते हैं।
नवदल रत्नतुल्य जड़ते हैं, यह क्रम किसे न भाया !
अच्छा इंद्रजाल दिखलाया !
फल में स्वादु, सुगंध कुसुम में पर है मूल कहां इस द्रुम में,
क्या कहते हो, वह है तुम में, राम तुम्हारी माया !
अच्छा इंद्रजाल दिखलाया !

———

जयशंकर प्रसाद

किरण

किरण ! तुम क्यों बिखरी हो आज,
रंगी हो तुम किसके अनुराग ?
स्वर्ण सरसिज किंजल्कसमान,
उठाती हो परमाणुपराग ।
धरा पर झुकी प्रार्थनासदृश,
मधुर मुरली सी फिर भी मौन,
किसी अज्ञात विश्व की विकल—
वेदना दूती सी तुम कौन ?

अरुणशिशु के मुख पर सविलास
सुनहली लट घुंघराली कांत,
नाचती हो जैसे तुम कौन ?
उषा के अंचल में अश्रांत ।
भला, उस भोले मुख को छोड़
चली हो किसे चूमने भाल,
खेल है कैसा या है नृत्य ?
कौन देता है सम पर ताल ?

कोकनदमधुधारा सी तरल,
विश्व में बहती हो किस ओर,
प्रकृति को देती परमानंद
उठाकर सुंदर सरस हिलोर ।

स्वर्ग के सूत्रसदृश तुम कौन ?
मिलाती हो उससे भूलोक,
जोड़ती हो कैसा संबंध
बना दोगी क्या विरज, विशोक ?

चपल, ठहरो कुछ लो विश्राम,
चल चुकी हो पथशून्य अनंत,
सुमनमंदिर के खोलो द्वार,
जगे फिर सोया वहां वसंत।

— —

वियोगी हरि

उत्साह-तरंग

जयतु कंस करि केहरी, मधुरिपु केशी काल।
कालियनदमर्दन हरे, केशव कृष्ण कृपाल॥

परिनामहुं जो देतु है, लोकोत्तर आनंद।
सुरस वीर रसराजु सो, सहित उछाह अमंद॥

छांडि वीररसु अब हमैं, नहिं भावतु रस आन।
ध्यावतु सावन आंधरो, हरो हरो हि जहान॥

कहा करौं माधुर्य लै, मृदुल मंजु बिनु ओज।
दिपैं न ज्योति बिकास बिनु, सुंदर नैन सरोज॥

खंड खंड ह्वै जाय बरु, देतु न पाछें पैंड।
लरत सूरमा खेत की, मरत न छांडतु मेंड॥

खलखंडन मंडनसुजन, सरल सुहृद सविवेक।
गुणगंभीर रणसूरमा, मिलतु लाख में एक॥

खलघालक पालकसुजन, सुहृद सदय गंभीर।
कहूं एक जन लाख में, प्रकृतिसूर रणधीर॥

मुंहमांगे रणसूरमा, देतु दान परहेतु।
सीसदान हूं देतु पै, पीठिदान नहिं देतु॥

दया धर्म जान्यौ तु हीं, सब धर्मनु कौ सार।
नृप शिवि तेरे दान पै, बलि हूं बलि सौ बार॥

तूं हीं या नरदेह कौ, बलि पारखी अनूप।
दया खड्ग मरमी तु हीं, दयासूर शिवि भूप॥

सुंदर सत्य सरोजु सुचि, विकस्यो धर्मतडाग।
सुरभित चहुं हरिचंद को, जुग जुग पुण्य पराग॥

जौ न जन्म हरिचंद कौ, होतो या जग मांहि ।
जग जुग रहति असत्य की, अमिट अंधेरी छांह ॥

इत गाधी उत सत्य दोउ, मिले परस्पर चाहि ।
यह छांडतु नहि ताहि त्यौं, वह छांडतु नहि याहि ॥

धनि तेरी तपधीरता, धनि गुणगण गंभीर ।
या कलि में गाधी तुही, इक सत्याग्रह वीर ॥

नही विचल्यौ सत पथ ते, सहि असह्य दुखद्वंद ।
कलि मे गांधीरूप ह्वै, प्रगट्यौ पुनि हरिचंद ॥

हंसत हंसत निज धर्म पै, दियौ जु सीसु चढाय ।
धर्मसमर मे मरि भयौ, अमर हकीकतराय ॥

सुरतरु लै कीजै कहा, अरु चिंतामणि ढेरु ।
इक दधीचि की अस्थि पै, वारिय कोटि सुमेरु ॥

करि कादर सों मित्रता, कहा लाभ है मीत ।
सत्रुनाहु रणसूर प्रति, मंगलमूर्ति पुनीत ॥

कहतु कौन कायर तुम्हे, बल पायर रण माहि ।
भभरि भाजिबो पीठि दै, सब के बस कौ नाहि ॥

मनि मनमानिक सौंपियो, कुटिल कादरन हाथ ।
है वै ही सत जोहरी, नहि निज धर पै साथ ॥

औघट घाट कृपाण कौ, ससरधार बिनु पार ।
सन्मुख जे उतरे तरे, परे विमुख मझधार ॥

पैरि पार असिधार के, नाघि युद्ध नद भीर ।
भेदि भानुमंडलहि अब, चल्यौ कहा रणधीर ॥

लरतु काल सों लाख मे, कोइ माई को लाल ।
कहु केते करवाल कों, करत कंठ कलमाल ॥

धन्य भीम ? रणधीर तू, धरि अरि छाती पांव।
भरि अंजुरिनि शोणितु पियौ, इन मूंछहि दै ताव ॥

धन्य कर्ण ! रिपुरक्त सों, दियो पूरि रण-कुंड।
करि कंदुक अति चाव सों, उछरि उछारे मुंड ॥

प्राण हथेरी पर धरे, किए ओजमदपान।
नबर तीर तलवार लै, चलै जूझिबे ज्वान ॥

छत्रिय छत्रिय कहे ते, छत्रिय होय न कोय।
सीसु चढावै खड्ग पै, छत्रिय सोई होय ॥

जोरि नाम संग सिंह पदु, कियौ सिंह बदनाम।
ह्वैहै क्यों करि सिंह यों, करि शृगाल के काम ॥

वह दिनु वह छिनु वह घरी, पुनि पुनि आवत नाहि।
हिलुरि हिलुरि जब हंस ए, समर माहिं अवगाहि ॥

कादर तौ जीवत मरत, दिन मे बार हजार।
प्रानपखेरू बीर के, उडत एक ही बार ॥

अरे फिरत कत बावरे, भटकत तीरथ भूरि।
अजौ न धारत सीस पै, सहज सूरपगधूरि ॥

तहं पुष्कर तहं सुरसरी, तहं तीरथ तप याग।
उठ्यो सुबीरकबंध जहं, तहंई पुण्य प्रयाग ॥

कै कृपाण की धार, कै अनल कुंड कौ ठाठ।
ए ही बीरबधून के, द्वै अन्हान के घाट ॥

सुभटसीस सोनित सनी, समरभूमि धनि धन्य।
नहि तो मम तारणतरण, त्रिभुवन तीरथ अन्य ॥

नमो नमो कुरुखेत ! तुव, महिमा अकथ अनूप।
कण कण तेरो लेखियतु, महसतीर्थप्रनिरूप ॥

जो जन लोभी सीस के, ते अधीन दिन दीन।
सीसु चढाये बिनु भयौ, कहौ कौन स्वाधीन॥
एक ओर स्वाधीनता, सीस दूसरी ओर।
जो दो मे भावै तुम्है, भरि सो लेहु अंकोर॥
चाहौ जो स्वाधीनता, सुनौ मंत्र मन लाय।
बलिवेदी पै निज करन, निज सिर देहु चढाय॥
सौप्यो स्वामिहि कोउ जन, कोउ धन हिय गय ठौर।
पै वह सहजै सौपि सिर, भयौ सबनु सिरमौर॥
लै बल बिक्रम बीन कवि !, किन छेड़त वह तान।
उठै डोलि जेहि सुनत ही, धरा मेरु सम भान॥
लै निज तंत्री छेड़ दै कवि !, वह राग अभंग।
उठै धरा ते ओज की, नभ लगि तुंग तरंग॥
अब नख सिख सिंगार के, पढत कवित कमनीय।
आजु लाल भूषण सरिस, रहे न कवि जातीय॥
सिवासुजससरसिज सुरस, मधुकर मत्त अनन्य।
रसभूषण भूषण सुकवि, भूषण, भूषण धन्य॥
रिपुगण सुनि भूषण कवितु, क्यो न होय सरविद्ध।
जाकी रसना पै सदा, रहति चंडिका सिद्ध॥
एकछत्र बन कौ अधिप, पंचानन ही एक।
गजशोणित सो आप ही, कियौ राज-अभिषेक॥
कांपितु कोपित केहरी, मुहु बाये विकराल।
रहै धधकि अंगार कै, प्रलयकाल के लाल॥
छिन्न भिन्न ह्वै उड़ति क्यो, मद भौरन की भीर।
दार्यो कुंभ करीद्र कौ, कहूं केहरी बीर॥

पराधीन सबु देखियतु, बल बीरज तें बीन।
या कानन में केसरी ! इक तू ही स्वाधीन।

या तनुवारिधि मे सदा, खेलत अतनु तरग।
उमगेगी क्यों करि कहौ, ता मधि युद्ध उमंग।।

होति लाख में एक कहुं, अनल वर्न वह आंख।
देखत ही दह करति जो, दुवनदीहदल राख।।

सुभट-नयन अंगारु पै, अचरजु एकु लखातु।
ज्यौं ज्यौं परतु उमाह-जलु, त्यौं त्यौं धधकत जातु।।

जाव फूटि रतिरगरली, अलसौंहीं वह आंख।
सहज-ओज-ज्वाला-ज्वलित, चिर जीवौ जुग लाख।।

सुरत-रंग कहं दृगनि में, कहं रण-ओज उदोतु।
या तें उज्ज्वल होतु मुखु, वा तें कज्जल होतु।।

बसति आपु लघु म्यान में, वह कृपान लघु गात।
त्रिभुवन में न समातु पै, सुजसु तासु अवदात।।

तड़ित और तरवार में, समता किमि ठहराय।
ज्यौं ही यह चमकति दमकि, त्यौं ही वह दुरि जाय।।

वह नागी तरवार हू, बनी लजीली नारि।
नहिं खोल्यौ मुख म्यान तें, ह्वै मनु परदावारि।।

इत नर सारंग पै चढ़तु, चढ़ि रागन रण रागु।
उत अरि-अंगना अग तें, उतरतु सहज सुहागु।।

गोघातक वा बाघकी, जननि खैंचिहौ पूछ।
तीखन डाढ़ें तोरिहौ, अरु उखारिहौ मूछ।।

प्रेम-मरमु जानै कहा, विषयी कायर कूर।
इक सांचो रणसूर ही, पहिचानतु रससूर।।

रे विषयी प्रेमी बनत, नैक न लागति लाजु।
केते कठिन कपोत व्रत, पालन हारे आज॥
सब तो साचे में ढरे, ढरे न ए द्वै ढार।
प्रेम मेड़ रखवार औ, सीसु-चढ़ावन हार॥
मथि मथि अच्छरनिधि मरे, कढ्यौ न कछु वै सार।
इक प्रेमी इक सूरमा, भये उतरि भव पार॥
और अस्त्र केहि काम के, प्रेम अस्त्र जो साथ।
प्रेम रथी के हाथ हैं, महारथिनु के माथ॥
खड खड ह्वै जाव पै, धर्म न तजियौ एक।
सपथ लाल या खग की, रहियौ गहि कुल टेक॥
कह्यो माय मुख चूमि कै, कर गहाय करवाल।
जनि लजाइयौ दूध मो, पयोधरनु कौ लाल॥
चूर चूर ह्वै अंत लौं, रखियौ कुल की लाज।
जननि दूध पितु खंग की, अहै परिच्छा आज॥
कोटि कोटि जापै भये, धूरि–धूसरित आज।
वत्स तुम्हारे हाथ है, ता धरनी की लाज॥
मिलनु न पत्रा में सुदिनु, भिरन न कादर मद।
नहिं सोधत रणबांकुरे, नखत बार तिथिचंद॥
रहिहौ अस्त्र गहाय हरि, रखि निज प्रण की लाज।
कै अब भीषम ही यहां, कै तुम ही यदुराज॥
इत पारथ रथसारथी, उत भीषम रणधीर।
तिल हू नहि टारे टरैं, दुहूं वज्र प्रण वीर॥
भानु अस्त लौं आजु जौ, बच्यौ जयद्रथ जीव।
चिता लाय तनु जारिहौं, तोर तोर गांडीव॥

लै न सक्यौ हरि ! आजु जौ, अधम जयद्रथ जीव ।
तौ पारथ हौं क्लीब अब, नहिं लैहौं गांडीव ॥

सुख न तौ लौं ऐंठिहौं, हौं प्रताप-पुंजहीन ।
करि पायो जौ लौं न मैं, गढ़ चितौर स्वाधीन ॥

महल नाहिं पगु धारिहौं, रहिहौं कुटी छवाय ।
हौं प्रताप जौ लौं न ध्वज, दई फेरि फहराय ॥

मिलियौ नहिं परखति प्रिये! मिलिहौं सरवसु बारि ।
विसिख हारु हौं पैन्हि तुम, ज्वालमाल उर धारि ॥

सुमृदु सिरीष प्रसून ते, कठिन बज्र ते होय ।
प्रकृति बीरवर हीय कौ, चित्र न खीच्यौ कोय ॥

झांसी दुर्गम दुर्ग धनि, महिमा अमित अनूप ।
जहां चंचला अवतरी, प्रगट चंडिका रूप ॥

पराधीनता दुखभरी, कटति न काटे रात ।
हा स्वतन्त्रता को कबै, ह्वैहै पुण्य प्रभात ॥

अथयौ वीर प्रताप रवि, भावन भारत मांझ ।
अब तौ आई दुखमई, अधिक अंधेरी सांझ ॥

निजता सों तो बैर अब, है परता सों प्रीति ।
निज तौ पर, पर निज भये, कहा दई यह रीति ॥

परभाषा परभाव, परभूषन परपरिधान ।
पराधीन जन की अहै, यह पूरी पहिचान ॥

दंभ दिखावत धर्म कौ, यह अधीन मतिअंध ।
पराधीन अरु धर्म कौ, कहो कहा संबंध ॥

जैहै डूबि घरीक में, भारत सुकृत समाज ।
सुदृढ़ सौर्य बल वीर्य कौ, रह्यौ न आज जहाज ॥

जरि अपमान अंगार तें, अजहु जिअत ज्यौ छार ।
क्यों न गर्भ मे मरि गिर्‌यो, निलज नीच भूभार ॥
दई छाड़ि निज सभ्यता, निज समाज निज राज ।
निज भाषा हू त्यागि तुम, भये पराये आज ॥
मरनु भलो निज धर्म मे, भयदायक परधर्म ।
पराधीन जानै कहा, यह निज पर कौ मर्म ॥
तुच्छ स्वर्ग हूं गिनतु जो, इक स्वतत्रता काज ।
बस वाही के हाथ है, आज हिद की लाज ॥
भीख सरिस स्वाधीनता, कत कत जाचत सोधि ।
अरे ! मसक की पासुरिनु, पार्‌यौ कौन पयोधि ॥
अणु अणु पै मेवाड के, छपी तिहारी छाप ।
तेरे प्रखर प्रताप तें, राणा प्रबल प्रताप ॥
जगत जाहि खोजत फिरै, सो स्वतत्रता आप ।
बिकल तोहि हेरति अजौ, राणा निठुर प्रताप ॥
ओ प्रताप ! मेवाडपति ! यह कैसो तुव काम ?
खात खलनु तुव खंग पै, होत कालकौ नाम ॥
गरब करत कत बावरे, उलंघि उच्च गिरिशृंग ।
जसगौरव सिवराज कौ, इत नभ ते हु उतंग ॥
पराधीनतासिधु मधि, डूबत हिंदू हिद ।
तेरे कर पतवार अब, पतधर गुरु गोविद ॥
माथ रहौ वा ना रहौ, तजे न सत्य अकाल ।
कहत कहत ही चुनि गये, धनि गुरु गोविदलाल ॥
अरे अहेरी ! यह कहा, कायर करत अहेर ।
क्यों न लपकि ललकारि तू, पकरि पछारत शेर ॥

बस काढो मन म्यान ते, यह तीछन तरवार।
जानत नहि ठाड़े यहां, रसिक छैल सुकुमार ॥
कवच कहां ये धारिहैं, लचकीले मृदु गात।
सुमनहार के भार जे, तीन तीन बल खात ॥
कहा भयो इक दुर्ग जो, ढायो रिपु रणधीर।
तुम तो मानिनिमानगढ़, नित ढाहत रतिवीर ॥
सुमनसेजसग बाल तुम, पौढे करि सिगार।
को भीषमसर सेज की, अब पतराखनहार ॥
गहै कहु केहि काम ए, कादर कामअधीर।
तियमृगईछन ही जिन्हे, हैं अति तीछन तीर ॥
अरपत विषम अगार चहुं, भयौ छार बर बाग।
कविकोकिल कुहकत तऊ, नव दपतिरतिराग ॥
सुख सपति सब लुटि गयौ, भयौ देस उर घाय।
कनककिकिनी की अजों, सुनत झनक कविराय ॥
तियकटिकृसता कौ कवितु, नित बखानु नव कौन।
वह तौ छीन भई नहीं, पै इनकी मति छीन ॥
मरत पूत उत दूध बिनु, बिलपत बिकल किसान।
इत बैठ्यो सठ करत तै, सग कामिनि मदपान ॥
वृष रवि आतप तपि कृषक, मरत कलपि बिनु नीर।
इत लेपत तुम अरगजै, बिरमि उसीर कुटीर ॥
उत हाकिम रैयतरकत, करत पान उर चीर।
इत पीवत तै मद अरे! नृपति मनोजअधीर ॥
लखि जिनके मजबूत भुज, कांपत है यमदूत।
भारतभू पै अब कहां, वै बांके रजपूत ॥

रे निलज्ज ! जिनके अछत, अरिहि झुकायौ माथ।
अब तिन मूछन पै कहा, पुनि पुनि फेरत हाथ ॥
कहं प्रताप कहं दाप वह, कहां आन कहं बान।
कहा ऐंड़ वह मेंड़ अब, है सब मूखी शान ॥
अब कोयल ! वह ऋतु कहां, कह कूजनतरुडार।
वह रसाल रसबौर कह, वह बन बिहंगबिहार ॥
ह्वैहौ पुनि स्वाधीन तुम, सदा न रहिहौ दास।
या युग के बलिदान कौ, लिखियौ तब इतिहास ॥
आजु कालि कब ते करत, भये न अबहूं तयार।
घलाघली उत ह्वै रही, इत मांजत हथियार ॥
भूलेहु कबहु न जाइये, देसविमुख जन पास।
देसबिरोधी संगतें, भलौ नरक कौ बास ॥
तन कारो कारो कुदिन, कारो कुल गृह गोत।
पै कुरूपवारेनु कौ, हियौ न कारो होत ॥
चित्र आर्य साम्राज्य कौ, सक्यौ न कोउ उतारि।
चीन ग्रीसहू के गये, चतुर चतेरे हारि ॥
ऐहैं याही ठौर हम, कहा फिरे जग होत।
जैसे पछी पोत कौ, उड़ि आवतु पुनि पोत ॥
अथयौ सौ अथयौ न पुनि, उनयो भीषममान।
आर्यशक्तिजयपद्मिनी, परी तबहिं तें म्लान ॥
कठिन राम कौ नाम है, सहज राम कौ नाम।
करत राम कौ काम जे, परत राम सो काम ॥
चूसि गरीबनु को रकतु, करत इन्द्रसम भोग।
तउ 'गरीबपरबर' उन्हें, कहत कहो ए लोग ॥

नभ जिमि बिन ससि सूरके, जिमि पंछी बिन पांख।
बिना जीव जिमि देह तिमि, बिना ओज यह आंख ।।

इन नैननि किन राखिये, दुखित दूबरे दीन।
कीजै निज बलिदान दै, दलित देस स्वाधीन ।।

कलपावत कब तें हमें, धारि निठुरता रूप।
करुनाधन ! तुम हूं भये, आजकालि के भूप ।।

——

रामनरेश त्रिपाठी

तेरी छवि

हे मेरे प्रभु व्याप्त हो रही है, तेरी छवि त्रिभुवन में।
तेरी ही छवि का विकास है, कवि की वाणी में मन में॥
माता के निःस्वार्थ नेह में, प्रेममयी की माया में।
बालक के कोमल अधरों पर, मधुर हास्य की छाया में॥
पतिव्रता नारी के व्रत में, वृद्धों के लोलुप मन में।
होनहार युवकों के निर्मल, ब्रह्मचर्यमय यौवन में॥
तृण की लघुता में पर्वत, की गर्वभरी गौरवता में।
तेरी ही छवि का विकास है, रजनी की नीरवता में॥
उषा की चंचल समीर में, खेतों में खलियानों में।
गाते हुए गीत सुख दुख के, सरलस्वभाव किसानों में॥
श्रमी किंतु निर्धन मजूर की, अति छोटी अभिलाषा में।
पति की बाट जोहती बैठी, गरीबनी की आशा में॥
भूख प्यास से दलित दीन, की मर्मभेदिनी आहों में।
दुखिया के निराश आंसू में, प्रेमीजन की राहों में॥
मुग्ध मोर के सरस नृत्य में, कोकिल के पंचम स्वर में।
वन पुष्पों के स्वाभिमान में, कलियों के सुंदर घर में॥
निर्जनता की व्याकुलता में, संध्या के संकीर्तन में।
तेरी ही छवि का विकास है, संतत परहितचिंतन में॥
खोल चंद्र की खिड़की जब तू, स्वर्गसदन में हंसता है।
पृथ्वी पर नवीन जीवन का, नया विकास विकसता है॥
जी में आता है किरणों में, घुल कर पल भर में।
बरस पड़ूं मैं इस पृथ्वी पर, विस्तृत शोभासागर में॥

अन्वेषण

मैं ढूँढ़ता तुझे था जब कुंज और वन में।
तू खोजता मुझे था तब दीन के वतन में॥
तू आह बन किसी की मुझको पुकारता था।
मैं था तुझे बुलाता संगीत में भजन में॥
मेरे लिये खड़ा था दुखियों के द्वार पर तू।
मैं बाट जोहता था तेरी किसी चमन में॥
बन कर किसी के आँसू मेरे लिये बहा तू।
आँखें लगी थीं मेरी तब यार के वदन में॥
बाजे बजा बजा के मैं था तुझे रिझाता।
तब तू लगा हुआ था पतितों के संगठन में॥
मैं था विरक्त तुझसे जग की अनित्यता पर।
उत्थान भर रहा था तब तू किसी पतन में॥
बेबस गिरे हुओं के तू बीच में खड़ा था।
मैं स्वर्ग देखता था झुकता कहाँ चरन में॥
तूने दिये अनेकों अवसर न मिल सका मैं।
तू कर्म में मगन था मैं मस्त था कथन में॥
हरिचंद और ध्रुव ने कुछ और ही बताया।
मैं तो समझ रहा था तेरा प्रताप धन में॥
मैं सोचता तुझे था रावण की लालसा में।
पर था दधीचि के तू परमार्थ रूप तन में॥
तेरा पता सिकंदर को मैं समझ रहा था।
पर तू बसा हुआ था फरहाद कोहकन में॥

क्रीसस की हाय में था करता विनोद तू ही ।
तू अंत में हंसा था महमूद के रुदन में ॥
प्रह्लाद जानता था तेरा सही ठिकाना ।
तू ही मचल रहा था मंसूर की रटन में ॥
आखिर चमक पड़ा तू गांधी की हड्डियों में ।
मैं था तुझे समझता सुहराब पील तन में ॥
कैसे तुझे मिलूंगा जब भेद इस कदर है ।
हैरान हो के भगवन् ! आया हूं मैं सरन में ॥
तू रूप है किरन में सौंदर्य है सुमन में ।
तू प्रान है पवन में विस्तार है गगन में ॥
तू ज्ञान हिन्दुओं में ईमान मुस्लिमों में ।
तू प्रेम क्रिश्चियन में है सत्य तू सुजन में ॥
हे दीनबंधु ! ऐसी प्रतिभा प्रदान कर तू ।
देखूं तुझे दृगों में मन में तथा वचन में ॥
कठिनाइयों दुखों का इतिहास ही सुयश है ।
मुझ को समर्थ कर तू बस कष्ट के सहन में ॥
दुख में न हार मानूं सुख में तुझे न भूलूं ।
ऐसा प्रभाव भर दे मेरे अधीर मन में ॥

सूर्यकांत त्रिपाठी

नयन

मदभरे ये नयन नलिन मलीन हैं ।
अल्प जल में या विकल लघु मीन हैं ?
या प्रतीक्षा में किसी की शर्वरी-
बीत जाने पर हुए ये दीन हैं ।।
या पथिक से लोल लोचन कह रहे-
हम तपस्वी हैं सभी दुख सह रहे,
गिन रहे दिन ग्रीष्म वर्षा शीत के,
कालतालतरंग में हम बह रहे ।
मौन हैं पर पतन में उत्थान में,
वेणुवर वादननिरत विभुगान में,
है छिपा जो मर्म उसका, नहिं समझते,
किंतु तो भी हैं उसी के ध्यान में ।।
आह ! कितने विकल जन मन मिल चुके,
खिल चुके कितने हृदय हैं हिल चुके,
तप चुके वे प्रियव्यथा की आंच में,
दुःख उन अनुरागियों के झिल चुके ।।
क्यों हमारे ही लिये वे मौन हैं ?
पथिक ! वे कोमल कुसुम हैं कौन हैं ?

यमुना के प्रति

कस अतीत का दुर्जय जीवन, अपनी अलकों में सुकुमार ।
कनककुसुम सा गूंथा तू ने, यमुने ! किस का रूप अपार ?

निर्निमेष नयनों मे छाया, किस विस्मृतिमदिरा का राग ?
अब तक पलकों मे पुलकों मे, छलक रहा है विपुल सुहाग !
मुक्त हृदय के सिहासन पर, किस अतीत के वे सम्राट।
दीप रहे जिन के मस्तक पर, रवि शशि तारे विश्व विराट ?

स्मृति

जटिल जीवनमद मे गिर गिर, डूब जाती हो तुम चुपचाप।
मनन द्रुत गतमयि अयि फिर फिर, उमड करती हो प्रेमालाप ॥
सुप्त मेरे अतीत के गान, सुना प्रिय हर लेती हो ध्यान।

सफल जीवन के सब असफल, कही की जीत कही की हार ॥
जगा देता है गीत सकल, तुम्हारा ही निर्भय झंकार।
वायुव्याकुल शत दल से हाय, विमल रह जाता है निरुपाय !

नूतन शैशव मृदु मधुर मलय, स्नेहकंपित किसलय लघुगात।
कुसुम अस्फुट नव नव संचय, मृदुल वह जीवनकनकप्रभात ॥
आज निद्रित अतीत मे बंद, तात वह गति, वह लय, वह छंद।

आसुओं मे कोमल झरझर, स्वच्छ निर्झर जल कण मे प्राण ॥
सिमट सटपट, अंतर भर भर, जिसे देते थे जीवनदान।
वही चुंबन की प्रथम हिलोर, स्वप्न स्मृति, दूर अतीत अछोर !

तृप्ति वह तृष्णा की अविकृत, स्वर्ग आशाओं की अभिराम।
क्लांति की सरल मूर्ति निद्रित, गरल की अमृत अमृत की प्राण ॥
रेणु सी किस दिगंत मे लीन ? वेणुध्वनि सी न शरीराधीन।

तुम और मैं

तुम तुंगहिमालयशृंग और मैं चंचलगति सुरसरिता।
तुम विमलहृदयउच्छ्वास और मैं कांतकामिनी कविता॥
तुम प्रेम और मैं शांति
तुम सुरापानघनअंधकार,
मैं हूं मतवाली भ्रांति।

तुम दिनकर के खर किरणजाल मैं सरसिजकी मुसकान।
तुम वर्षों के बीते वियोग मैं हूँ पिछली पहिचान॥
तुम योग और मैं सिद्धि।
तुम हो रागानुग निश्छल तप,
मैं शुचिता सरल समृद्धि॥

तुम मृदुमानस के भाव और मैं मनोरंजिनी भाषा।
तुम नंदनवनघनविटप और मैं सुखशीतलतलशाखा॥
तुम प्राण और मैं काया।
तुम शुद्ध सच्चिदानंद ब्रह्म,
मैं मनोमोहिनी माया।

तुम प्रेममयी के कंठहार मैं वेणी कालनागिनी।
तुम करपल्लवझंकृत सितार मैं व्याकुलविरहरागिनी॥
तुम पथ हो मैं हूं रेणु।
तुम हो राधा के मनमोहन,
मैं उन अधरों की वेणु॥

तुम पथिक दूर के श्रांत और मैं बाट जोहती आशा।
तुम भवसागर दुस्तर पार जाने की मैं अभिलाषा॥

तुम नभ हो मैं नीलिमा।
तुम शरद सुधाकरकलाहास,
मैं हूं निशीथमधुरिमा॥
तुम गंधकुसुमकोमलपराग मैं मृदुगति मलयसमीर।
तुम स्वेच्छाचारी युक्त पुरुष मैं प्रकृतिप्रेमजंजीर॥
तुम शिव हो मैं हूं शक्ति।
तुम रघुकुलगौरव रामचंद्र,
मैं सीता अचला भक्ति॥
तुम हो प्रियतम मधुमास और मैं पिक कलकूजनतान।
तुम मदन पंचशरहस्त और मैं हूं मुग्धा अनजान॥
तुम अंबर मैं दिग्वसना।
तुम चित्रकार घनपटलश्याम,
मैं तडित्तूलिकारचना॥
तुम रणतांडवउन्माद नृत्य मैं युवतिमधुरनूपुरध्वनि,
तुम नाद वेद ओंकारसार मैं कविशृंगारशिरोमणि॥
तुम यश हो मैं हूं प्राप्ति।
तुम कुंदइंदुअरविंद शुभ्र,
तो मैं हूँ निर्मल व्याप्ति

सुमित्रानंदन पंत

छाया

कहो कौन दमयंती सी तुम, तरु के नीचे सोई?
हाय ! तुम्हें भी त्याग गया क्या, अलि ! नल सा निष्ठुर कोई?
नीले पत्तों की शय्या पर तुम विरक्ति सी मूर्छा सी
विजन विपिन में कौन पड़ी हो, विरहमलिन दुखविधुरा सी ?

पछतावे की परछाई सी तुम, भू पर छाई हो कौन ?
दुर्बलता की अंगडाई सी, अपराधी सी, भय से मौन ?
निर्जनता के मानसपट पर, बार बार भर ठंडी सांस--
क्या तुम छिप कर क्रूर काल का, लिखती हो अकरुण इतिहास?

निज जीवन के मलिन पृष्ठ पर नीरव शब्दों में निर्झर
किस अतीत का करुण चित्र तुम, खींच रही हो कोमलतर !
दिनकर कुल में दिव्य जन्म पा, बढ़ कर नित तरुवर के संग
मुरझे पत्तों की साडी से, ढक कर अपने कोमल अंग

सदुपदेश सुमनों से तरु के, गूंथ हृदय का सुरभित हार,
परसेवारत रहती हो तुम, हरती नित पथश्रांति अपार।
हा सखि आओ बांह खोल हम, लग कर गले जुडा लें प्राण।
फिर तुम तम में मैं प्रियतम में, हो जावें द्रुत, अंतर्धान ॥

मुसकान

कहेंगे क्या मुझ से अब लोग, कभी आता है इसका ध्यान !
रोकने पर भी तो सखि हाय ! नहीं रुकती है यह मुसकान

विपिन में गावस के से दीप, सुकोमल सहमा सौ सौ भाव
सजग हो उठते नित उर बीच, नही रख सकती तनिक दुराव!
कल्पना के ये शिशु नादान, हंसा देते है मुझे निदान!

तारको से पलकों पर कूद, नीद हर लेते नव नव भाव
कभी बन हिमजल की लघु बूद, बढाते मुझ मे चिर अपनाव,
गुदगुदाते ये तन मन प्राण, नही रुकती तब यह मुसकान
कभी उडते पत्तो के साथ मुझे मिलते मेरे सुकुमार,

बढा कर लहरो मे निज हाथ बुलाते फिर मुझ को उस पार,
नहीं रखती मै जग का ज्ञान. और हस पडती हूं अनजान,
रोकने पर भी तो सखि! हाय! नही रुकती तब यह मुसकान ।।

मधुकरी

सिखा दो ना हे मधुपकुमारि! मुझे भी अपने मीठे गान।
कुसुम के चुने कटोरो मे, करा दो ना कुछ कुछ मधु-पान।।

नवल-कलियो के धोरे झूम, प्रसूनो के अधरो को चूम।
मुदित, कवि-सी तुम पाठ, सीखती हो सखि! जग मे घूम।
सुना दो ना तब हे सुकुमारि! मुझे भी ये केसर के गान।।

किसी के उर मे तुम अनजान! कभी बध जाती बन चित-चोर
अधखिले, खिले सुकोमल-गान, गूथती हो फिर उड उड़ भोर
मुझे भी बतला दो न कुमारि! मधुर निशि-स्वप्नों के वे गान?

सूघ चुन कर सखि सारे फूल, सहज बिंध बिंध निज सुख-दुख भूल
सरस रचती हो ऐसा राग, धूल बन जाती है मधुमूल

पिला दो ना तब हे सुकुमारि ! इसी में थोड़े मधुमय-गान।
कुसुम के खुले कटोरों में, करा दो ना कुछ कुछ मधुपान।

चाह

मैं नहीं चाहता चिर-सुख, चाहता नहीं अविरत-दुख,
सुख-दुख की खेल-मिचौनी, खोले जीवन अपना मुख।
सुख-दुख के मधुर मिलन में, यह जीवन हो परिपूरन,
फिर घन में ओझल हो शशि, फिर शशि में ओझल हो घन।
जग पीड़ित है अति दुख में, जग पीड़ित है अति सुख में,
मानव जग में बंट जावे, दुख सुख औ सुख दुख में।
अविरत दुख है उत्पीड़न, अविरत सुख भी उत्पीडन
दुख-सुख की निशा-दिवा में, सोता-जगता जग जीवन।
यह साझ-उषा का आगन, आलिंगन विरह-मिलन का।
चिर हास-अश्रुमय आनन, रे! इस मानव जीवन का।।

बरसो

जग के उर्वर आगन में, बरसो ज्योतिर्मय जीवन।
बरसो लघु-लघु तृण, तरु पर, हे चिर अव्यय नित-नूतन!
बरसो कुसुमों में मधु बन, प्राणों में अमर प्रणय-धन,
स्मिति-स्वप्न अधर-पलकों में, उर-अगों में सुख यौवन?
छू-छू जग के मृत रज-कण, कर दो तृण तरु में चेतन;
मृन्मरण बाध दो जग का, दे प्राणों का आलिगन!
बरसो सुख बन, सुखमा बन, बरसो जग-जीवन के धन;
दिशि-दिशि में औ पल-पल में, बरसो संसृति के सावन।

श्री गुलाबरत्न

कवि की पूजा

कंचन-डाली में न सजे हैं, जवा-कुसुम चंपा के फूल;
मेरी क्रोधभरी आंखों के, ज़हर अश्रु तुम करो कबूल।
अपने खप्पर में रह रह कर, गर्म खून मैं भरता हूं!
ज्वालामुखी समान फूट कर, अग्नि आरती करता हूं,
चिताभस्म गिर गई धूल में, पागल बना किशोर घमंड;
दो त्रिपुड तुम हृदयरक्त का, हे प्रलयंकर रौद्र प्रचंड।
हूल रहा हूं पापपुरी में, मैं त्रिशूल बनकर जल्लाद;
नरमुंडों की भीषण माला, पहन मुझे दो आशीर्वाद।
तांडव नृत्य करो हे शंकर, बन मम कविता के अक्षर;
बिजली बनकर चमक पड़ो तुम, श्याम घनों में प्रलयंकर।
फिर भुजंग से फुंफकारो तुम, दुनिया के भक्षक विकराल;
कोलाहल में क्रांति मचाओ, करुणाहीन अनोखे काल।
ले आऊं नैवेद्य कहां से, छूंछा है स्वार्थी संसार;
देख देख मैं ऊब रहा हूं, तव आलस्यभरा दरबार।
घड़ी घड़ी इन लघु चरणों में, मस्तक मैं न झुकाऊंगा;
उन्मादिनी सैन्य में तुमको, मैं निज नाथ बनाऊंगा।

आंधी

पगली विषम वायु, मैं हूं नगयंदिनी सी,
मैं हूं यमदूतिका, करालिका करालिनी;
मैं हूं फुफकारती भुजंगिनी प्रमत्त एक,
कालकट तुल्य शीघ्र मृत्युचक्रचालिनी।

विकट, पिशाचिनी, कुरूपा भी प्रपचभरी,
मैं हूं अभिमन्युयुद्ध–चाल–प्रण चालिनी;
चुनती नुकीले कुल–कंटक कठोर दृढ,
करू रखवाली विश्ववाटिका की मालिनी।

भीषण अनत साम, नायिका अधर्मभरी,
पी अति अप्रीति–मद–प्याले मग्त झूमती;
खून कर देती खून चूसने पडे जो नित्य,
घोट अभिमानी गले, ध्यानभरी घूमती।
उद्भट अपार, मैं न डूबती अचभे बीच,
कभी वरवरो के भी चरण न चूमती;
जाती दुतकारी, पर मार किलकारी, नगी,
नाचती कृपाण सी प्रचड मैं न ऊबती।

धाराधर कृष्णवर्ण पूर्व के अनेक उठे,
पश्चिम दिशा मे खींच दखिनी दिखाऊंगी;
गरज गिरेगी गाज, प्रलय मचेगा घोर,
शकरममान रण भीषण मचाऊंगी।
बन के अभागिनी न लूगी निज आंख मूद,
वासर उजाड तम अधम उठाऊंगी!
बरस पडेंगे मेघ लोचन बिलोक छवि,
तरणी अनोखी मझधार में डुबाऊंगी॥

कलम कवीश्वर के कर से पड़ेगी छूट,
दुर्जन दबेंगे, शानि शातिहीन पावेंगे;
मूम कासा सोना लाल लेगी छिपा गोद मे मा,
भूत वर्तमान त्यों भविष्य भूल जावेंगे।

मोद मुसकान में गिरेंगे गर्म आंसू टूट,
कंपित तरंग सातों सागर उठावेंगे,
दूंगी लगा आग, जल जायेंगे कलेजे कुल,
यंत्र, मंत्र, तंत्र काम एक भी न आयंगे ।।

विरही रहा जो मग पाकर विजन मौन,
ध्यान सजनी का धरे रजनी बिताता है,
कंटक सरीखा महा दुर्बल शरीर लिये,
बैठ–उठ जाता नहीं, चिंतित दिखाता है।
जीवन जलाना, शीष फोड़ता अभागी बन,
पागल पुराना बात बेतुकी उड़ाता है,
मार मार धक्के खोल दूंगी दृग अंतर के,
मूढ़ देख सामने कराल काल आता है ।।

खड़ी जो विनोद भरी सुंदरी समुद्र तीर;
बालिका समान क्या भरेंगी सिसकारियां,
नागिन लटें जो लहराती साथ अंचल के,
झपट उड़ेंगी ले कपोल चुमकारियां।
रोष में भरेंगी तान भौहें तलवार तुल्य,
फेंक लोचनों से अविराम चिनगारियां;
सबला बला सी बनी अबला करेंगी धूम,
खाक में मिलेंगी फली-फूली फुलवारियां ।।

यौवन सरीखे मस्त झूम जो रहे हैं द्रुम,
पटक पहाड़ों में हसूंगी यम–जाली मैं;
वल्लियां उखाड़, बेलिमंडप उजाड़ चट,
छिन्न भिन्न दूंगी कर पत्र बला काली मैं।

खिले जो प्रसून हैं जुही के तारों पी के तुल्य,
नोच असरों म उड़ा दूंगी, भय पाली मैं,
दीपक घरों के बुझा, देख दुनिया के दृश्य,
लौट ही पड़ूगी, ले कलंक मतवाली मैं ॥

अंधकार

हत्याकर प्रचंड रवि की, आंखे फोड़ किसी छवि की,
चिता भूमि पर नग्न नाच तू, लील रहा है किस की लाश ?
अरे भयंकर सत्यानाश ?
चक्र सुदर्शन ! विद्रोही, निपट निरंकुश ! निर्मोही,
क्षमाहीन दुर्वासा सा तू टहल रहा है क्यों उस पार ?
विश्व-शक्ति का कर संहार !
रत्नाकर समान वन में, लूट बटोही सुख छन में।
खून पी रहा गदगद तू, किस दुर्बल का उदर विदार ?
ओ प्रलयंकर भीम विकार !
फैल निकट बादल-दल सा, खेल खेल खूनी खलसा,
मूर्ख ! बना भकप भयानक, कपा रहा क्यों कलियुग-प्राण ?
अरे नीच निश्चर! पाषाण!
ओ पिशाच चुपके चुपके, विटप-ओट में छुप-छुपके,
किधर आ रहा तू बर्बर सा अभिसारिका वधू के साथ ?
अट्टहास कर अरे अनाथ !
वन भूखा भुजंग काला, जहर उगलता मतवाला,
फुफकारता रेंगता है क्यों, देश-देश मे ओ दिग्भ्रांत ?
कालरूप धारण कर क्लांत !

बीहड़ गुप्त गुफावासी, क्रूर जितेंद्रिय संन्यासी,
हवनकुंड में होम रहा है, किस विनाश का कर बलिदान ?
निशाकलंकिनिका कर ध्यान!
देख इधर दीपक-बाला, जला रही धक धक ज्वाला,
भाग शीघ्र सरपट, समेट तू, चिरकुट माया जाल-विशाल !
अरे शूद्र ! पागल सम्राट !

सुभद्राकुमारी चौहान

समर्पण

सूखी सी अधखिली कली है, परिमल नहीं पराग नहीं ।
किन्तु कुटिल भौंरों के चुम्बन का, है इस पर दाग नहीं ।।
तेरी अतुल कृपा का बदला, नहीं चुकाने आई हूं ।
केवल पूजा में ये कलियां, भक्तिभाव से लाई हूं ।।
प्रणयजल्पना चिंत्यकल्पना, मधुर वासनाएं प्यारी ।
मृदु अभिलाषा विजयी आशा, सजा रही थीं फुलवारी ।।
किन्तु गर्व का झोंका आया, यद्यपि गर्व था यह तेरा ।
उजड़ गई फुलवारी सारी, बिगड़ गया सब कुछ मेरा ।।
बची हुई स्मृति की कलियां, मैं बटोर कर लाई हूँ ।
तुझे सुझाने तुझे रिझाने, तुझे मनाने आई हूँ ।।
प्रेमभाव से हो अथवा हो, दयाभाव से ही स्वीकार ।
ठुकराना मत इसे जान कर, मेरा छोटा सा उपहार ।।

बालिका का परिचय

यह मेरी गोदी की शोभा, सुख सुहाग की है लाली,
शाही शान भिखारिन की है, मनोकामना मतवाली ।
दीपशिखा है अंधेरे की, घनी घटा की उजियाली,
ऊषा है यह कमलभृंग की, है पतझड़ की हरियाली ।
सुधाधार वह नीरस दिल की, मस्ती मगन तपस्वी की,
जीवित ज्योति नष्ट नयनों की, सच्ची लगन मनस्वी की ।
बीते हुए बालपन की यह, क्रीड़ापूर्ण वाटिका है,
वही मचलना वही किलकना, हंसती हुई नाटिका है ।

मेरा मंदिर मेरी मसजिद, करबट काशी यह मेरी,
पूजापाठ ध्यान जप तप है, घट घटवासी यह मेरी।
कृष्णचंद्र की क्रीडाओं को, अपने आंगन में देखो,
कौसल्या के मातृ मोद को अपने ही मन में देखो,
प्रभु ईसा की क्षमाशीलता, नबी मुहम्मद का विश्वास
जीवदया जिनवर गौतम की, आओ देखो इसके पास।
परिचय पूछ रहे हो मुझ से, कैसे परिचय दूं इसका
वही जान सकता है इसको, माता का दिल है जिसका॥

झांसी की रानी

सिंहासन हिल उठे राज-वंशों ने भृकुटि तानी थी,
बूढ़े भारत में आई फिर से नई जवानी थी।
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी के करने की सब ने मन में ठानी थी।
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

कानपूर के नाना की मुंहबोली बहिन छबीली थी,
लक्ष्मीबाई नाम पिता की वह संतान अकेली थी।
नाना के संग पढ़ती थी वह नाना के संग खेली थी,
बरछी, ढाल, कृपाण, कटारी उसकी यही सहेली थी।
वीर शिवाजी की गाथाएं उसको याद जबानी थीं,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वयं वीरता की अवतार,
देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारों के वार।
नकली युद्ध, व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,
सैन्य घेरना दुर्ग तोड़ना ये थे उसके प्रिय खिलवार।
महाराष्ट्र कुलदेवी उसकी भी आराध्य भवानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी।

हुई वीरता की, वैभव के साथ सगाई झांसी में,
ब्याह हुआ रानी बन आई लक्ष्मीबाई झांसी में।
राजमहल में बजी बधाई खुशियां छाई झांसी में,
सुभट बुंदेलों की विरुदावली-सी वह आई झांसी में।
चित्रा ने अर्जुन को पाया, शिव से मिली भवानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

उदित हुआ सौभाग्य मुदित महलों में उजियाली छाई,
किंतु कालगति चुपके चुपके काली घटा घेर लाई।
तीर चलाने वाले कर में उसे चूड़ियां कब भाईं,
रानी विधवा हुई हाय! विधि को भी दया नहीं आई।
निःसंतान मरे राजाजी, रानी शोकसमानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

बुझा दीप झांसी का तब डलहौजी मन में हरषाया,
राज्य हड़प करने का, उसने यह अवसर अच्छा पाया।

फौरन फौजें भेज दुर्ग पर अपना झंडा फहराया,
लावारिस का वारिस बन कर ब्रिटिश राज्य झांसी आया।
अश्रुपूर्ण रानी ने देखा, झांसी हुई बिरानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

अनुपम विनय न हा! सुनना है विकट शासकों की माया,
व्यापारी बन गया चाहता था यह जब भारत आया।
डलहौजी ने पैर पसारे, अब तो पलट गई काया,
राजाओं नव्वाबों को भी उसने पैरों ठुकराया।
रानी दासी बनी, बनी यह दासी अब महारानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

छिनी राजधानी देहली की, लखनऊ छीना बातों-बात,
कैद पेशवा था बिठूर में, हुआ नागपुर पर भी घात।
उदैपुर तंजौर सितारा करनाटक की कौन बिसात,
जब कि सिंध, पंजाब, ब्रह्म पर अभी हुआ था वज्रनिपात।
बंगाले मद्रास आदि की भी तो वही कहानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी॥

रानी रोईं रनवासों में, बेगम गम से थीं बेजार,
उनके गहने कपड़े बिकते थे कलकत्ते के बाजार।
सरे आम नीलाम छापते थे अंग्रेजों के अखबार,
नागपुर के जेवर ले लो, लखनऊ के लो नौलखहार।

थी परदे की इज्जत परदेशी के हाथ बिकानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी,
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी ॥

कुटियों में थी विषम वेदना, महलों में आहत अपमान,
वीर सैनिकों के मन में था अपने पुरखों का अभिमान।
नाना धुंदूपंत पेशवा जुटा रहा था सब सामान,
बहिन छबीली ने रणचंडी का कर दिया प्रकट आह्वान।
हुआ यज्ञ प्रारंभ, उन्हें तो सोई ज्योति जगानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुख हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी ॥

उत्तरार्ध

मुसलमान कवि

आदि युग

वीर गाथा शाखा

अमीर खुसरो

× × × ×

× × × ×

मध्ययुग

भानाश्रयी शाखा

कबीर

गुरुदेव

दंडवत गोबिंद करूं बंदूं अविजन सोय।
पहले भये प्रणाम तिन नमो जो आगे होय॥
गुरु कीजे दंडवत्, कोटि कोटि परनाम।
कीट न जानै भृंग को, गुरु करि आप समान॥
गुरु गोबिंद कर जानिये, रहिये शब्द समाय।
मिलै तो दंडवत् बंदगी, नहिं पल ध्यान लगाय॥
गुरु गोविंद दोनों खड़े, किसके लागों पाय।
बलि हारे गुरु आपने, गोविंद दियो बताय॥
दीपक दीना तेल भरि, बाती दई अघट्ट।
पूरा किया बिसाहना, बहुरि न आवै हट्ट॥

भली भई जो गुरु मिला, जाते पाया ज्ञान।
घर ही मांहि चबूतरा, घर ही मांहि दिवान॥
कबिरा ते नर अंध हैं, गुरु को कहते और।
हरि के रूठे ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर॥
गुरु सों ज्ञान जो लीजिये, सीस दीजिये दान।
बहुतक भोंदू बहि गये, राखि जीव अभिमान॥
चेतन चौकी बैठि के सतगुरु दीनी धीर।
निर्भय होय निशंक भजु, केवल कहैं कबीर॥
सतगुरु सांचा सूरमा, नखशिख मारा पूरि।
बाहर घाव न दीसई, भीतर चकनाचूरि॥

गुरु पारखी

गुरु मिला नहि शिष्य मिला, लालच खेला दाव।
दोनों बूड़े धार में, चढ़ि पाथर की नाव॥

जा गुरु तें भ्रम ना मिटै, भ्रांति न जीवकि जाय।
गुरु तो ऐसा चाहिये, देई ब्रह्म बनाय॥

कनफुक्का गुरु हद्द का, बेहद का गुरु और।
बेहद का गुरु जब मिले लहै ठिकाना ठौर॥

जाका गुरु है गिरही, गिरही चेला होय।
कीच कीच को धोवते, दाग न छूटे कोय॥

यति

सदा कृपालु दुख परहरन, बैर भाव नहि दोय।
क्षमा ज्ञान सत भाषिये, हिंसारहित जो सोय॥

दुख सुख एक समान है, हरष शोक नहि व्याप।
पर उपकारी भगत को, उपजै छोह न ताप॥

इंद्रियदमन निगरहकरन, हृदया कोमल होय।
सदा शुचि आचार सों, रहि विचार सों सोय॥

सदा रहै संतोष में, धरम आप दृढ़ धारि।
आश एक भगवान की, और न चित्त बिचारि॥

षट हि विकार शरीर के, तिन को चित्त न लाय।
शोक मोह प्यासहिं क्षुधा, जरा मृत्यु नशि जाय॥

मान अपमान न चित धरै, औरन को सनमान।
जो कोई आशा करै, उपदेशै तेहि ज्ञान॥

उपदेश

अंतर याहि विचारिया, साखी कहो कबीर।
भवसागर में जीव है, सुनि कै लागे तीर॥
हाड़ बड़ा हरि भजन कर, द्रव्य बड़ा कछु देह।
अकल बड़ी उपकार कर, जीवन का फल येह॥
इष्ट मिलै और मन मिलै, मिलै सकल रस रीति।
कहै कबीर तहं जाइये, यह संतन की प्रीति॥
हस्ती चढ़िये ज्ञान के, सहज दुलीचा डारि।
स्वान रूप संसार है, भूसन दे झक मारि॥
हरि भजनी हारा भला, जीतन दे संसार।
हारा तौ हरि सोंमन मिलै, जीता यम की लार॥
जेता घट तेता मता, घट घट और स्वभाव।
जा घट हार न जीत है, ना घट ब्रह्म समाव॥
उदर समाता अन्न लै, तनहि समाता चीर।
अधिकहिं संग्रह ना करै, तिसका नाम फकीर॥
कथा कीरतन कलि विषे, भवसागर की नाव।
कहै कबीर या जगत में, नाहीं और उपाव॥
काम-कथा सुनिये नहीं, सुनि के उपजे काम।
कहै कबीर बिचारि के, बिसरि जाय हरि नाम॥
बंदे तू कर बंदगी, जो पावै दीदार।
औसर मानुष जन्म का, बहुरि न बारंबार॥

सुमिरन

सुमिरन मारग सहज का, सत गुरु दिया बताय।
स्वासहि स्वांस जो सुमिरता, एक दिन मिलसी आय॥

माला स्वास उस्वांस की, फेरेंगे निज दास ।
चौरासी भरमे नहीं, कटै करम की फास ॥

कविरा सुमरन सार है, और सकल जंजाल ।
आदि अंत मधि सोधिया, दूजा देखा ख्याल ॥

निज सुख आतम राम है, दूजा दुख अपार ।
मनसा वाचा कर्मना, कबिरा सुमिरन सार ॥

कबिरा हरि के नाम में, सुरति रहै करतार ।
ता मुख तें मोती झरै, हीरा अनंत अपार ॥

भक्ति

भक्ती द्राविड़ ऊपजी लाये रामानंद ।
परगट करी कबीर ने, सात द्वीप नव खंड ॥

कबिरा हरि की भक्ति बिन, धिग जीवन संसार ।
धूआ का सा धौलहरा, जात न लागै बार ॥

भक्ति भाव भादौं नदी, सबै चली घहराय ।
सरिता सोई जानिये, जेठ मास ठहराय ॥

प्रेम

यह तो घर है प्रेम का, मारग अगम अगाद ।
सीश काटि पग तर धरै, निकसै प्रेम का स्वाद ॥

सीस काटि पासंग किया, जीव सेर भर लीन ।
जिहिं भावै सो आइ लै, प्रेम आगे हम कीन्ह ॥

प्रेम पियाला भरि पिया, राचि रह्या गुरु ज्ञान ।
दिया नगारा शब्द का, लाल खड़ा मैदान ॥

सागर उमड़ा प्रेम का, खेवटिया कोइ एक।
सब प्रेमे मिलि बूड़ता, यह नहिं होती टेक॥
प्रेम बनिज नहि कर सकै, चढ़ै न नाम के गैल।
मानुष केरी खालरी, ओढ़े फिरे ज्यों बैल॥
प्रेम भाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
भावे रहो जो गृह हि मे, भावे बन मे जाय॥
प्रेम पावरी पहरि के, धीरज कज्जल देय।
शील मदूर भराय कै, पुनि पिय का मुख लेय॥
योगी जंगम सेवरा, सयासी दरवेश।
बिना प्रेम पहुंचे नहीं, दुर्लभ हरि का देश॥

विरह

या तन जारूं मसि करूं, लिखु राम को नांव।
लेखन करूं करंक की, लिखि-लिखि राम पठाव॥
मांई सेवत जरि गई, मांस न रहिया देह।
मांई जब लग सेयही, या तन होइहै खेह॥
तन मन जोवन यो जला, विरह अग्नि मू लागि।
मृतक जो पीर न जानही, जानैगी वा आगि॥
विरह कमंडल भरि लिया, बैरागी दोउ नैन।
मांगे दरसमधूकरी, छके रहै दिन रैन॥
विरह बिथा बैराग की, कही न काहू जाय।
गूगा सपना देखिया, समझि समझि पछिताय॥
भेरै चढ़िया सरप कै, भवसागर के मांहि।
जो छांड़ौं तो बूड़िहौ, गहों तो डसिहै बांहि॥

परबत परबत मैं फिरूं, नैन गंवाऊं रोय।
सो बूटी पाऊं नहीं, जासों जीवन होय॥

रस

पिया पियाला प्रेम का, अंतर लिया लगाय।
रोम रोम में रमि रह्या, और अमल क्या खाय॥
राम रसायन प्रेम रस, पीवत अधिक रसाल।
कबिरा पीवन दुर्लभ है, मांगै सीस कलाल॥
सोह मता अविगत रता, आमा अकल अजीत।
नाम अमल माते रहै, जीवनमुक्त अतीत॥
राता माता नाम का, पिया प्रेम अघाय।
मतवाला दीदार का, मागै मुक्ति बलाय॥

कुसंगति

कबिरा कुसंग न कीजिये, जाका नाव न ठाव।
ते क्यों होसी बापरा, साधु नहीं जिहि गांव॥
गिरिये पर्वत शिखर ते, परिये धरनि मंझार।
मूरख मित्र न कीजिये, बडियो काली धार॥
कोयल भी होय ऊजला, जरिबरि होय जो श्वेत।
मूरख होय न ऊजला, ज्यों कालर का खेत॥
ऊंचे कुल कहा जनमिया, करनी ऊंच न सोय।
कनक कलस मद सों भरा, साधन निंदा होय॥
काचा सेती मति मिलै, पाका सेती बानि।
काचा सेती मिलत ही, होय भक्ति में हानि॥

सुसंगति

कबिरा संगति साधु की, नित प्रति कीजै जाय ।
दुर्मति दूरि बहावसी, देसी सुमति बताय ।।
कलह काल औ कल्पना, सत संगति सों जाय ।
दुख वासों भाजा फिरै, सुख मे रहा समाय ।।
मथुरा जाओ द्वारका, भावे जाओ जगन्नाथ ।
साधु संग हरि भजन बिन, कछू न आवै हाथ ।।
चंदन जैसा संत है, सरप जैसा संसार ।
वाके अंग लपटा रहै, भागै नही बिकार ।।
ऋद्धि सिद्धि मांगू नही, हरि सो मांगू एह ।
नित प्रति दर्शन साधु का, कहे कबीर मोहि देह ।।
कविरा मन पक्षी भया, मन माने तहां जाय ।
जो जैसी संगत करै, सो तैसा फल खाय ।।
कबिरा खाई कोटका, पानी पिये न कोय ।
जाय परे जब गंग मे, सब गंगोदक होय ।।
राम बुलाया भेजिया, दिया कबीरा रोय ।
जो सुख साधू संग मे, सो बैकुंठ न होय ।।

साधु

साधु हजारी कापड़ा, ता मे मल न समाय ।
साकट काली कामली, भावे तहां बिछाय ।।
सिंह साधु का एक मत, जीवत ही को खाय ।
भावहीन मृतक दशा, ताके निकट न जाय ।।

तीन लोक उनमान मे, चौथो अगम अगाध ।
पंचम दिशा अलक्ख की, जानेगा कोई साध ॥
रवि को तेज घटै नही, जो घन जुरै घमंड ।
साधु वचन पलटै नही, उलटि जाय ब्रह्मंड ॥
तन मे शीतल शब्द है, बोलै बचन रसाल ।
कहै कबीर ता साधु की, गंजि सकै ना काल ॥
बहता पानी निर्मला, बंधा गंधीला होय ।
साधु जन रमते भले, दाग न लागै कोय ॥
कौन साधु का खेल है, सुमति सुरति का दाव ।
कौन अमृत का कूप है, शब्द वज्र का घाव ॥
क्षमा साधु का खेल है, सुमति सुरनि का दाव ।
कर्ता अमृत कूप है, शब्द वज्र का घाव ॥
साधु आवत देखि कै, चरनू लागौ धाय ।
क्या जाने इस भेष में हरि ही जो मिलि जाय ॥
साधू आवत देखि कै, हंसी हमारी देह ।
माथा का ग्रह ऊतरा, नैना बढ़ा सनेह ॥
आवत साधु न हरषिया, जात न दीया रोय ।
कहै कबीर ता दास की, मुक्ति कबहू न होय ॥
साधू आया पाहुना, मांगे चार रतन्न ।
धनी पानी साथरा, शरधा सेती अन्न ॥
निराकार की आरसी, साधुन ही की देह ।
लखा जो चाहे अलख को, इन हीं मे लखि लेह ॥
संतो भाई आई ग्यान की आंधी रे ।

भ्रम की टाटी सबैं उड़ाणीं, माया रहै न बांधी।
हित चित की द्वै थूनी गिरानीं, मोह बलीडा टूटा।
तृस्ना छानि परी धर ऊपरि, कुबुधि का भांडा फूटा॥
जोग जुगति करि संतौ बांधी, निरचू चुवै न पाणी।
कूड़ कपट काया का निकस्या, हरि की गति जब जाणी॥
आंधी पीछै जो जल बूड़ा, प्रेम हरी जन भीना।
कहै कबीर भान के प्रगटे, उदित भया तम खीना॥

काहे री नलिनी तू कुमिलानी, तेरी ही नालि सरोवर पानी।
जल मैं उतपति जल मैं बास, जल मैं नलनी तोर निवास।
ना तलि तपनि न ऊपर आगि, तोर हेत कहु कासनि लागि॥
कहै कबीर जे उदिक समान, ते नही मूए हमरे जान॥

डब तू हमि प्रभू मैं कुछ नाहीं, पंडित पढ़ि अभिमान नमाही।
मैं मैं मै जब लग मै कीन्हा, तब लग मैं करता नही चीन्हा।
कहै कबीर सुनहु नरनाहा, ना हम जीवत न मूंवाले माहा॥

अब का डरौ डर डरहि समाना, जब तैं मोर तोर पहिचाना।
जब लग मोरतोर करि लीन्हा, मै मैं जनमि जनमि दुख दीन्हा।
आगम निगम एक करि जाना, ते मनवां मन मांहि समाना॥
जब लग ऊंच नीच करि जाना, ते पसुवा भूले भ्रम नाना।
कहै कबीर मैं मेरी खोइ, तब हि राम अवर नही कोई॥

हरि जननी मैं बालक तेरा, काहे न औगुण बकसहु मेरा।
सुत अपराध करै दिन केते, जननी कै चित रहैं न तेते।
कर गहि केस धरै जौ घाता, तऊ न हेत उतारै माता।
कहै कबीर एक बुधि विचारी, बालक दुखी दुखी महतारी॥

राम बिन तन की ताप न जाई, जल मैं अगनि उठी अधिकाई ।
तुम जलनिधि मै जलकर मीना, जल में रहौं जलहिं बिन खीना ।
तुम्ह पिंजरा मैं सुवना तोरा, दरसन देहु भाग बड़ मोरा ।।
तुम्ह सतगुर मैं नौतम चेला, कहै कबीर राम रमू अकेला ।।

मन रे हरि भजि हरि भजि हरि भजि भाई,
जा दिन तेरो कोई नाहीं ता दिन राम सहाई ।
तंत न जानू मंत न जानूं जानूं सुदर काया ।
मीर मलिक छत्रपति राजा, ते भी खाये माया ।।
वेद न जानू भेद न जानू, जानूं एक हि रामा ।
पंडित दिसि पछिवारा कीन्हा, मुख कीन्हौ जित नामा ।।
राजा अंबरीक कै करणी, चक्र सुदरसन जारै ।
दास कबीर कौ ठाकुर ऐसौ, भगत की सरन उबारै ।।

का सिधि साधि करौ कुछ नाही, राम रसाइन रसना माही ।
नही कुछ ग्यान ध्यान सिधि जोग, ताथै उपजै नाना रोग ।
का मन मै बसि भये उदास, मन नही छोड़े आसा पास ।।
सब कृत काच हरी हितसार, कहै कबीर तजि जग ब्यौहार ।।

ते हरि के आवैहि किहि कामा, जे नही चीन्हे आतमा रामा ।
थोरी भगति बहुत अहंकारी, ऐसे भगता मिलै अपारा ।
भाव न चीन्हें हरि गोपाला, जानि न अरहट कै गलि माला ।।
कहै कबीर जिनि गया अभिमाना, सो भगता भगवंत समाना ।।

वहुरि हम काहे कूं आवहिंगे, बिछुरे पंचतत की रचना-
तब हम रामहिं पावहिंगे ।
पिरथी का गुण पानी सोष्या, पानी तेज मिलावहिंगे ।

तेज पवन मिलि पवन सबद मिलि, सहज समाधि लगावहिंगे ।।
जैसे बहु कंचन के भूषण, ये कहि गालि तवावहिंगे ।
ऐसे हम लोक वेद के बिछुरे, सुनिहि मांहि समावहिंगे ।।
जैसे जलहि तरंग तरंगनी, ऐसे हम दिखलावहिंगे ।
कहै कबीर स्वामी सुख सागर, हंसहि हंस मिलावहिंगे ।।

यही घड़ी यह बेला साधो ।

लाख खरच फिर हाथ न आवै, मानुष जनम सुहेला ।
ना कोई संगी ना कोई साथी, जाता हंस अकेला ।
क्यों सोया, उठि जागु सवेरे, काल मरेंदा मेला ।
कहत कबीर गुरू गुन गाओ, झूठा है सब मेला ।

करम गति टारे नाहिं टरी ।।

मुनि बसिस्ट से पंडित ज्ञानी, सोधि के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दशरथ को बन में विपति परी ।।
कहं वह फंद कहां वह पारधि, कहं वह मिरग चरी ।
सीता को हरि लेग्यो रावन, सोने की लंक जरी ।।
नीच हाथ हरिचंद बिकाने, बलि पाताल धरी ।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृग, गिरगिट जोनि परी ।।
पांडव जिनके आपु सारथी, तिन पर बिपति परी ।
दुर्योधन को गर्व घटायो, जदुकुल नास करी ।।
राहु केतु और भानु चंद्रमा, विधि से जाग परी ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, होनी होके रही ।।

मन लागो मेरो यार फकीरी में ।

जो सुख पावो नाम भजन में, जो सुख नाहिं अमीरी में ।

भला बुरा सब को सुनि लीजै, कर गुजरान गरीबी में ॥
प्रेम नगर में रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरी में ।
हाथ में कूंडी बगल में सोटा, चारों दिसा जगीरी में ॥
आखिर यह तन खाक मिलेगा, कहां फिरत मगरूरी में ।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिलै सबूरी में ।

घूंघट का पट खोल रे, तो कूं पीव मिलेंगे ।
घर घर में वहि सांई रमता, कटुक वचन मत बोल रे ।
धन जोबन का गर्व न कीजै, झूठा पचरंग चोल रे ।
सुन्न महल में दियना बारि ले, आसा से मत डोल रे ।
जोग जुगत से रंग महल में, पिय आये अनमोल रे ।
कह कबीर आनंद भयो है, बजत अनहद ढोल रे ।

मध्ययुग

प्रेममार्गी सूफी भक्तिशाखा

मलिक मोहम्मद जायसी पदमावति

॥ अथ असतुति खंड ॥

सवंरउं आदि एक करतारू । जेइ जिउ दीन्ह कीन्ह संसारू ॥
कीन्हेसि प्रथम जोति परगासू । कीन्हेसि तेहि परबत कबिलासू ॥
कीन्हेसि अगिनि पवन जल खेहा । कीन्हेसि बहुतइ रंग उरेहा ॥
कीन्हेसि धरती सरग पतारू । कीन्हेसि बरन बरन अउतारू ॥
कीन्हेसि सपत दीप ब्रहमंडा । कीन्हेसि भुअन चउदहउखंडा ॥
कीन्हेसि दिन दिनिअर ससि राती । कीन्हेसि नखत तराएन पांती ॥
कीन्हेसि सीउ धूप अउ छांहा । कीन्हेसि मेघ बीजु तेहि मांहा ॥
कीन्ह सबइ अस जा कर, दोसर छाज न काहि ।
पहिलइ तेइ कर नाउं लेइ, कथा करउं अउगाहि ॥
कीन्हेसि सात-उ समुद अपारा । कीन्हेसि मेरु खिखिंद पहारा ॥
कीन्हेसि नदी नार अउ झरना । कीन्हेसि मगरमच्छ बहु बरना ॥
कीन्हेसि सीप मोति तेहि भरे । कीन्हेसि बहुतइ नग निरमरे ॥
कीन्हेसि बन-खंड अउ जरि मूरी । कीन्हेसि तरिवर तार खजूरी ॥
कीन्हेसि साउज आरन रहहीं । कीन्हेसि पंखि उड़हिं जहं चहहीं ॥
कीन्हेसि बरन सेत अउ सामा । कीन्हेसि नींद भूख बिसरामा ॥
कीन्हेसि पान फूल रस भोगू । कीन्हेसि बहु ओखद बहु रोगू ॥
निमिख न लाग करत ओहिं, सबहि कीन्ह पल एक ।
गगन अंतरिख राखा, बाजु खंभ बिनु टेक ॥
कीन्हेसि मानुस दीन्ह बड़ाई । कीन्हेसि अन्न भुगुति तेइ पाई ॥
कीन्हेसि राजा भूंजई राजू । कीन्हेसि हसति घोर तेइ साजू ॥
कीन्हेसि तेहि कहं बहुत बिरासू । कीन्हेसि कोइ ठाकुर कोइ दासू ॥

कीन्हेसि दरब गरब जेहि होई। कीन्हेसि लोभ अघाइ न कोई ।।
कीन्हेसि जिअन सदा सब चहा। कीन्हेसि मीचु न कोई रहा ।।
कीन्हेसि सुख अउ क्रोड अनंदू। कीन्हेसि दुखचिंता अउ दंदू ।।
कीन्हेसि कोइ भिखारी कोई धनी। कीन्हेसि सपति बिपति बहु घनी ।।
कीन्हेसि कोई निभरोसी, कीन्हेसि कोइ बरिआर।
छारहि तइं सब कीन्हेसि, पुनि कीन्हेसि सब छार ।।
कीन्हेसि अगर कसतुरी बेना। कीन्हेसि भीमसेनि अउ चेना ।।
कीन्हेसि नाग मुखइ विख बसा। कीन्हेसि मत्र हरहि जो डसा ।।
कीन्हेसि अमीं जिअइ जेहि पाई। कीन्हेसि बिक्ख मीचु जेहि खाई ।।
कीन्हेसि ऊख मीठ रस भरी। कीन्हेसि करुइ बेलि बहु फरी ।।
कीन्हेसि मधु लावइ लेइ मांखी। कीन्हेसि भवंर पंखि अउ पांखी ।।
कीन्हेसि लोवा उंदुर चांटी। कीन्हेसि बहुत रहहि खनि मांटी ।।
कीन्हेसि राकस भूत परेता। कीन्हेसि भोकस देव दएता ।।
कीन्हेसि सहस अठारह, बरन बरन उपराजि।
भुगुति दीन्ह पुनि सब कहं सकल साजना साजि ।।
धनपति उहइ जेहि क संसारू। सबहि देइ निति घट न भंडारू ।।
जावंत जगत हसति अउ चांटा। सब कहं भुगुति राति दिन बांटा ।।
ता करि दिसिटि सबहि उपराहीं। मितर सतरु कोई बिसरइ नाहीं ।।
पंखी पतंग न बिसरइ कोई। परगट गुपुत जहां लगि होई ।।
भोग भुगुति बहु भांति उपाई। सबहि खिआवइ आपु न खाई ।।
ता कर इहइ जो खाना पिअना। सब कहं देइ भुगुति अउ जिअना ।।
सबहि आस ता करि हर सांसा। ओहि न काहुक आस निरासा ।।
जुग जुग देत घटा नहीं उभइ हाथ तस कीन्ह।
अउरु जो दीन्ह जगत मंह सो सब ता कर दीन्ह ।।

आदि सोइ बरनउं बड राजा। आदिहु अंत राज जेहि छाजा॥
सदा सरबदा राज करेई। अउ जेहि चहहि राज तेहि देई॥
छतरि अछतरि निछतरहि छावा। दोसर नाहिं जो सरबरि पावा॥
परबत ढाहि देखु सब लोगू। चांटहि करइ हसति सरि जोगू॥
बजरहि तिन कइ मारि उडाई। तिनहि बजर कइ देइ बडाई॥
काहुहि भोग भुगुति सुख सारा। काहुहि भीख भवन-दुख मारा॥
ता कर कीन्ह न जानइ कोई। करइ सोइ मन चित्त न होई॥
सबइ नास्ति वह असथिर, अइस साज जेहि केरि।
एक साजइ अउ भांजइ, चहइ सवांरइ फेरि॥
अलख अरूप अबरन सो करता। वह सब सउं सब ओहि सउं बरता॥
परगट गुपुत सो सरबविआपी। धरमी चीन्ह ची ह नहि पापी॥
ना ओहि पूत न पिता न माता। ना ओहि कुटुब्र न कोइ संग नाता॥
जना न काहु न कोइ ओहि जना। जहं लगि सब ता कर सिरजना॥
वेइ सब कीन्ह जहां लगि कोई। वह न कीन्ह काहू कर होई॥
हुत पहिलइ अउ अब हर सोई। पुनि सो रहइ रहइ नहि कोई॥
अउरु जो होइ सो बाउर अंधा। दिन दुइ चारि मरइ कइ धंधा॥
जो वेइ चहा सो कीन्हेसि करइ जो चाहइ कीन्ह।
बरजन-हार न कोई, सबहि चाहि जिउ दीन्ह॥
एहि विधि चीन्हहु करहु गिआनू। जस पुरान महं लिखा बखानू॥
जीउ नाहिं पइ जिअइ गोसाई। कर नाही पइ करइ सबाई॥
जीभ नाहि पइ सब किछु बोला। तन नाहीं जो डोलाउसो डोला॥
सुवन नाहिं पइ सब किछु देखा। कवन भांति अस जाई बिसेखा॥
ना कोइ होइ हइ ओहि के रूपा। ना ओहि अस कोइ आहि अनूपा॥
ना ओहि ठाउं न ओहि बिनु ठाऊं। रूप रेख बिनु निरमर नाऊं॥

ना वह मिला न बेहरा अइस रहा भरि पूरि।
दिसिटिवंत कहं नीअरे अंध मुरुख कहं दूरि॥
अउरु जो दीन्हेसि रतन अमोला। ता कर मरम न जानइ भोला॥
दीन्हेसि रसना अउ रस भोगू। दीन्हेसि दसन जो बिहंसइ जोगू॥
दीन्हेसि जग देखइ कहं नयना। दीन्हेसि स्रवन सुनइ कहं बयना॥
दीन्हेसि कंठ बोलि जेहि मांहा। दीन्हेसि कर-पल्लउ बर बांहा॥
दीन्हेसि चरन अनूप चलाहीं। सो पइ मरम जानु जेहि नाहीं॥
जोबन मरम जानु पइ बूढ़ा। मिला न तरुनापा जग ढूढ़ा।
दुख कर मरम न जानइ राजा। दुखी जानु जा कहं दुख बाजा।
कथा क मरम जानु पइ रोगी, भोगी रहर निचिंत।
सब कर मरम गोसांई, जाबइ जो घट घट में नित्त॥
अति अपार करता कर करना। बरनि न पारइ काहू बरना॥
सात सरग जउं कागद करई। धरती सात समुद मसि भरई॥
जावंत जगत साख बन-ढांखा। जावॅत केस रोवँ पँखि पांखा॥
जावॅत खेह रेह दुनिआई। मेघ बूद अउ गगन तराईं॥
सब लिखनी कइ लिखु संसारू। लिखि न जाइ गति समुद अपारू॥
अइस कीन्ह सब गुन परगटा। अबहूं समुद बूद नहिं घटा॥
अइस जानि मन गरब न होई। गरब करइ मन बाउर सोई॥
बउ गुनवंत गोसांई चहइ सो होइ तेहि बेगि।
अउ असगुनी संवारइ जो गुन करइ अनेग॥
कीन्हेसि पुरुख एक निरमरा। नाउं मुहम्मद पूनिउं करा।
प्रथम जोति विधि तेहि कइ साजी। अउ तेहि प्रीति सिसिह उपराजी॥
दीपक लेसि जगत कहं दीन्हा। भा निरमर जग मारग चीन्हा॥
जउं नहिं होत पुरुख उंजिआरा। सूझि न परत पंथ अधियारा॥

दोसरे ठाउं दई बेइ लिखे। भए धरमी जेइ पाढत सिखे ॥
जेइ नहिं लीन्ह जनम भरि नाऊं। ता कहं कीन्ह नरक महं ठाऊं ॥
जगत बसीठ दई ओहि कीन्हा। दुहुं जग तरा नाउंजेइ लीन्हा ॥

गुन अउगुन विधि पूछब होइहि लेख अउ जोख।
वह बिनउब आगइ होइ करब जगत कर मोख ॥

चारि मीत जो मुहमद ठाऊं। चहूंक दुहुं जग निरमर नाऊं ॥
अबा बकर सिद्दीक सयाने। पहिलइ सिदिक दीन बेइ आने ॥
पुनि सो उमर खिताब सोहाए। भा जग अदल दीन जो आए ॥
पुनि उसमान पंडित बड़ गुनी। लिखा पुरान जो आयत सुनी ॥
चउथइ अली सिघ वरिआरू। चढ़इ तो कांपइ सरग पतारू ॥
चारिउ एक मतइ एक बाता। एक पंथ अउ एक संघाता ॥
वचन एक जो सुनावहिं सांचा। भा परवांन दुहूं जग बाँचा ॥

जो पुरान विधि पठबा सोई पढ़त गरंथ।
अउरु जो भूले आवतहि तेहि सुनि लागहि पंथ ॥

सेरसाहि देहिली सुलतानू। चारिउखंड तपइ जस भानू ॥
ओही छाज राज अउ पाटू। सब राजइ भुइं धरा लिलाटू ॥
जाति सूर अउ खांडइ सूरा। अउ बुधिवंत सवइ गुन पूरा ॥
सूर-नवाँई नवो खंड भई। सातउ दीप दुनी सब नई ॥
तहं लगि राज खरग वर लीन्हा। इसकंदर जुलकरन जो कीन्हा ॥
हाथ सुलेमां केरि अंगूठी। जग कहं जिअन दीन्ह तेहि मूठी ॥
अउ अति गरू पुहुमि-पति भारी। टेकि पुहुमि सब सिसिरि संभारी ॥

दीन्ह असीस मुहम्मद करहु जुगहि जुगराज।
पातिसाहि तुम जगत के जग तुम्हार मुहताज ॥

वरनउ सूर पुहुमि-पति राजा। पुहुमि न भार सहइ जेहि साजा ॥

हम मय सेन चलइ जग पूरी। परबत टूटि उड़हिं होइ धूरी ॥
रइनि रेनु होइ रबिहि गरासा। मानुस पंखि लेहिं फिरि बासा ॥
भुइं उड़ि अंतरि खगइ म्रित मंडा। खंडखंड धरति सिसिटि ब्रहमंडा ॥
दोलइ गगन इंदर डरि कांपा। बासुकि जाइ पतारहि चांपा ॥
मेरु धसमसइ समुद सुखाही। बन खंड टूटि खेह मिलि जाहीं ॥
अगिलहि काहू पानि खर बांटा। पछिलहि काहु न कादउ आँटा ॥
जो गढ़ नएउ नहि काहुही चलत होहिं सब चूर।
जबहि चढ़हि पुहुमी-पति सेरसाहि जग सूर ॥
अदल कहउं पुहुमी जस होई। चांटहि चलत न दुखवइ कोई ॥
नउसेरवां जो आदिल कहा। साहि अदल सरि सोउ न अहा ॥
अदल कीन्ह उम्मर कइ नाईं। भई आहा सगरी दुनिआई ॥
परी नाथ कोइ छुअइ न पारा। मारग मानुस सोन उछारा ॥
गोरु सिंघ रेंगहि एक बाटा। दूनउ पानि पिअहिं एक घाटा ॥
नीर खीर छानइ दरबारा। दूध पानि सब करइ निरारा ॥
धरम निआउ चलइ सत भाखा। दूबर बरी एक सम राखा ॥
पुहुमी सबइ असीमई जोरि जोरि कर हाथ।
गांग जउंन जल जब लगि तब लगि अमर सो माथ ॥
पुनि रुपवंत बखानउं काहा। जावंत जगत सबइ सुख चाहा ॥
ससि चउदसि जो दई संवारा। तेहू चाहि रूप उजिआरा ॥
पाप जाइ जउं दरसन दीसा। जग जुहारी कइ देइ असीसा ॥
जइस भानु जग ऊपर तपा। सबइ रूप ओहि आगइ छपा ॥
असभा सूर पुरुख निरमरा। सूर चाहि दस आगरि करा ॥
सउंह दिसटि कइ हेरि न जाई। जेइ देखा सो रहा सिर नाई ॥
रूप सवाई दिन दिन चढ़ा। बिधि सरूप जग ऊपर गढ़ा ॥

रूपवत मनि मांथइ चाँद घाट ओहि बाढ़ि।
मेदिनि दरस लोभानी असतुति बिनवइ ठाढ़ि ॥

पुनि दातार दई बड़ कीन्हा। अस जग दान न काहू दीना ॥
बलि बिकरम दानी बड़ अहे। हातिम करन तिआगी कहे ॥
सेरसाहि सरि पूज कोऊ। समुद सुमेरु घटहिं नित दोऊ ॥
दान डांक बाजइ दरबारा। कीरति गई समुदर पारा ॥
कचन परसि सूर जग भएऊ। दारिद भागि दिसंतर गएऊ ॥
जउं कोइ जाइ एक बेरि मागा। जनमहु भएऊ न भूखा नांगा ॥
दस असमेध जग जेहि कीन्हा। दान पुन्न सरि सोउ न दीन्हा ॥

अइस दानि जग उपजा सेर-साहि सुलतान।
ना अस भएउ न होइही ना कोइ देइ अस दान ॥

सइअद असरफ पीर पिआरा। तेइ मोहि पंथ दीन्ह उंजिआरा ॥
लेसा हिअइ पेम कर दीआ। उठी जोति भा निरमर हीआ ॥
मारग हुता अंधेर असूझा। भा अंजोर सब जाना बूझा ॥
खार समुदर पाप मोर मेला। बोहित धरम लीन्ह कइ चेला ॥
उन्ह मोर करिअ पोढ़ि कइ गहा। पाएउं तीर घाट जो अहा ॥
जा कहं होइ अइस कनहारा। ता कहं गहि लेइ लावइ पारा ॥
दस्तगीर गाढ कइ साथी। जहं अउगाह देहित है हाथी ॥

जहांगीर वेइ चिसती निहकलंक जस चांद।
वेइ मखदूम जगत के हउं उन्ह के घर बांद ॥

तेहि घर रतन एक निरमरा। राजो सेख सुभागइ भरा ॥
तेहि घर दुइ दीपक उंजिआरे। पंथ देइ कहं दई संवारे ॥
सेख मुबारक पूनिउं करा। सेख कमाल जगत निरमरा ॥
दुअउ अचल धुब डोलहिं नाहीं। मेरु खिखिंद तिन्हहुं उपराहीं ॥

दीन्ह रूप अउ जोति गोसाईं । कीन्ह खंभ दुहुं जग कइ ताईं ।।
दुहुं खंभ टेकी सब मही । दुहुं के भार सिसिटि थिर रही ।।
जो दरसइ अउ परसइ पापा । पाप हटा निरमर भई कापा ।।

मुहमद तेइ निचिंत पंथ जेहि संग मुरसिद पीर ।
जेहि रे नाउ अउ खेवक बेगि पाउ सो तीर ।।

गुरु मोहिदी खेवक मइं सेवा । चलइ उताइल जेहिकर खेवा ।।
अगुआ भएउ सेख बुरहानू । पंथ लाई जेहि दीन्ह गिआनू ।।
अलहदाद भल तेहि कर गुरू । दीन दुनी रोसन सुरुखुरू ।।
सइअद मुहमद के वेइ चेला । सिद्ध पुरुख संगम जेइ खेला ।।
दानिआल गुरु पंथ लखाए । हजरत ख्वाज खिजिर तेइ पाए ।।
भए परसन ओहि हजरत ख्वाजे । लेइ मेरए जह सइअद राजे ।।
ओहि सउं महं पाई जब करनी । उघरी जीभ कथा कबि बरनी ।।

वेइ सु-गुरु हउं चेला नीति बिनवउं भा चेर ।
ओहि हुत देखइ पाएउं दिरिस गोसाईं केर ।।

एक नयन कबि मुहमद गुनी । सोइ बिमोहा जेइ कबि सुनी ।।
चांद जइस जग विधि अउतारा । दीन्ह कलंक कीन्ह उंजिआरा ।।
जग सूझा इकइ नयनांहा । उआ सूक जस नखतन्ह मांहा ।।
जउ लहि आंबहि डाभ न होई । तउ लहि सुगंध बसाइ न सोई ।।
कीन्ह समुदर पानि जउ खारा । तउ अति भएउ असूझ अपारा ।।
जउ सुमेरु तिरसूल बिनासा । भा कंचन गिरि लागु अकासा ।।
जउ लहि घरी कलंक न परा । कांचु होइ नहिं कंचन करा ।।

एक नयन जस दरपन अउ तेहि निरमर भाउ ।
सब रूपवंतइ पाउं गहि मुख जोहहिं कइ चाउ ।।

चारि मीत कबि मुहमद पाए । जोरि मिताई सरि पहुंचाए ।।

ऽ्फ मलिक पडित अउ ग्यानी। पहिलइ भेद बात वेइ जानी ॥
ुनि सलार कादिम मति माहा। खाडइ दान उभय निति बाहा ॥
मिआ सलोने सिघ अपारू। वीर खेत रन खरग जुझारू ॥
सेख वडे वड सिद्ध वखाना। कइ अदेस सिद्धन्ह वड़ माना ॥
चारिउ चतुरदसउ गुन पढे। अउ सयोग गोसाईं गढे ॥
ििरिख जो आछहि चदन पासा। चदन होहि बेधि तेहि वासा ॥

मुहमद चारिउ मीत मिलि भए जो एकइ चित्त।
एहि जग साथ जो निवहा ओहि जग बिछुरहि कित्त ॥

जाएस नगर धरम अस्थानू। तहा आइ कवि कीन्ह बखानू ॥
कह बिनती पडितन्ह सउ भजा। टूट सवारहु मेरवहु सजा ॥
हउ सब कविनन्ह कर पछलगा। किछु कहि चला तवल देहि डगा ॥
हिअ भडार नग अहइ जो पूजी। खोली जीभ तारु कह कुजी ॥
रतन पदारथ बोली बोला। सुरस पेम मधु भरी अमोला ॥
जेहि कइ बोलि बिरह कइ घाया। कह तेहि भूख नींद कह छाया ॥
फेरइ भेस रहइ भा तपा। धूरि लपेटा मानिक छपा ॥

मुहमद कथा जो पेम कइ ना तेहि रकत न मासु।
जेहि मुह देखा तेइ हसा सुनि तेहि आएउ आसु ॥

सन नउ सइ सइतालिस अहै। कथा अरभ वयन कवि कहै ॥
सिघलदीप पदुमिनी रानी। रतन सेन चित उर गढ आनी ॥
अलाउदीन देहिली सुलतानू। राघउ चेतन कीन्ह उखानू ॥
सुना सहि गढ छेका आई। हिदू तुरकन्ह भई लराई ॥
आदि अत जस गाथा अही। लिखि भाखा चउपाई कही ॥
कवि बिआस रस कवला पूरी। दूरि सो निअर निअर सो दूरी ॥
निअरहि दूरि फूल जस काटा। दूरि जो निअरहि जस गुर चाटा ॥

भंवर आइ वनखंड सउ लेइ कवल रस बास।
दादुर बास न पावई भलहि जो आछइ पास॥

इति असतुति खण्ड॥

अथ सिंघल दीप बरनन खंड

सिंघलदीप कथा अब गावउं। अउ सो पदुमिनी बरनि सुनावउं॥
बरनक दरपन भांति बिसेखा। जो जेहि रूप सो तइसइ देखा।
धनि सो दीप जहं दीपक नारी। अउ सो पदुमिनि दइ अउतारी॥
सात दीप बरनइ सब लोगू। एकउ दीप न ओहि सरि जोगू॥
दिया-दीप नहिं तस उजिआरा। सरन-दीप सरि होइ न पारा॥
जंबू-दीप कहउ तस नाहीं। लंक-दीप नहिं ओहि परिछाहीं॥
दीप-कुंभसथल आरन परा। दीप - महुमथल मानुसहरा॥
सब संसार पिरिथुमीं आए सातउ दीप।
एकउ दीप न उतिम सिंघल दीप समीप॥
गन्धरब सेन सुगंध नरेसू। सो राजा वह ता कर देसू॥
लंका सुना जो रावन राजू। तेहु चाहि बड ता कर साजू॥
छप्पन कोड कटक दर साजा। सबइ छतरपति अउ गढ राजा॥
सोरह सहस घोर घोर-सारा। सावं-करन अउ बांक तुखारा॥
सात सहस हसती सिंघली। जनु कविलास इरावति बली॥
असु-पती क सिर-मउर कहावइ। गज-पती क आंकुस गज नावइ॥
नर-पती क अउ कहउ नरिन्दू। भू-पती क जग दोसर इन्दू॥
अइस चक्कवइ राजा चहूं खंड भय होइ।
सबइ आइ सिर नावहीं सरिबर करइ न कोइ॥
जबहि दीप निअरावा जाई। जनु कविलास निअर भा आई॥

घन अवराउं लाग चहुं पासा । उठा पुहुमि हुति लाग अकासा ॥
तरिवर सबइ मलयगिरि लाई । भइ जग छांह रइनि होइ छाई ॥
मलय समीर सोहाई छाहा । जेठ जाउ लागइ तेहि माहा ॥
ओही छाह रइनि होइ आवइ । हरिअर सबइ अकास देखावइ ॥
पथिक जउं पहुचइ सहि घामू । दुख बिसरइ सुख होइ बिसरामू ॥
जेइ वह पाई छांह अनूपा । बहुरि न आइ सहहि यह धूपा ॥

अस अंबराउ सघन घन बरनि न पारउ अन ।
फूलइ फरइ छयउ रितु जानउं सदा बसन ॥

फरे आव अति सघन सोहाए । अउ जस फरे अधिक सिरनाए ॥
कटहर डार पींड सउं पाके । बडहर सो अनूप अति ताके ॥
खिरनी पाकि खाड असि मीठी । जाउनि पाकि भवर अस डीठी ॥
नरिअर फरे फरी फरहुरी । फरी जान इंदरासन पूरी ॥
पुनि महुआ चुअ अधिक मिठासू । मधु जस मीठ पुहुप जस बासू ॥
अउर खलहजा आउ न नाऊ । देखा सब राउन अबराऊं ॥
लाग सबइ जस अम्रित साखा । रहइ लोभाइ सोइ जो चाखा ॥

गुआ सुपारी जाइफर सब फरफरे अपूरि ।
आस पास धनि इंबिली अउ घन तार खजूरि ॥

बसहि पखि बोलहि बहु भाखा । करहि हुलास देखि कइ साखा ॥
भोर होत बासहि चुहि चूही । बोलहि पांडुकि 'एकइ तूही' ॥
सारउ सुआ जो रहचह करहीं । कुरहि परेवा अउ करबरहीं ॥
पिउ पिउ लागइ करइ पपीहा । तुहीं तुहीं करि गुडुरू खीहा ॥
कुहू कुहू करि कोइलि राखा । अउ भगराज बोल बहु भाखा ॥
दही दही कइ महरि पुकारा । हारिल बिनवइ आपनि हारा ।
कुहकहि मोर सोहावन लागा । होइ कोराहर बोलहि कागा ॥

जावत पखि कही सब बइठे भरि अवराउ।
आपनि आपनि भाखा लेहि दई कर नाउ॥
पइग पइग कूआँ बाउरी। साजे बइठक अउ पाउरी॥
अउरु कुड सब ठाउँहि ठाउ। सब तीरथ अउ तिन्हके नाऊ॥
मठ मडप चहु पास सवारे। तपा जपा सब आसन मारे॥
कोइ सु-रिखेसुर कोइ सनिआसी। कोइ सु-राम-जति कोइ ममवासी॥
कोइ सु-महेसुर जगम जती। कोइ एक परखइ देबी सती॥
कोई ब्रहमचरज पथ लागे। कोइ सु-दिगबर आछहि नागे॥
कोई सत सिद्ध कोइ जोगी। कोइ निरास पथ बइठ बिओगी॥
सेवरा खेवरा बान पर सिधि-साधक अउधूत।
आसन मारे बइठ सब जारहि आतम-भूत॥
मान-सरोदक देखे काहा। भरा समुद अस अति अवगाहा॥
पानि मोति अस निरमर तासू। अंब्रित आनि कपूर सु-बासू॥
लक-दीप कइ सिला अनाई। बाधा सरवर घाट बनाई॥
खड खड सीढ़ी भई गरेरी। उतरहि चढ़हि लोग चहू फेरी॥
फूले कवल रहे होइ राते। सहस सहस पखुरिन्ह कर छाते॥
उलथहि सीप मोति उतराही। चुगहि हस अउ केलि कराही॥
कनक पख पहरहि अतिलोने। जानउ चितर कीन्ह गढि सोने॥
ऊपर पाल चहू दिसा अंब्रित फर सब रूख।
देखि रूप सरवर कर गइ पियास अउ भूख॥
पानि भरइ आवहि पनिहारी। रूप सरूप पदुमिनी नारी॥
पदुम गध तिन्ह अग बसाही। भवर लागि तिन्ह सग फिराही॥
लक-सिंघिनी सारग-नयनी। हंस-गाविनी कोकिल-बयनी॥
आवहि झुड सु पांतिहि पांती। गवंन सोहाइ सुभांतिहि भांती॥

ताल तलाउ सो बरनि न जाही । सूझइ वार पार तेहि नाही ॥
फूले कुमुद केति उजिआरे । जानउ गए गगन महं तारे ॥
उतरहि मेघ चढहि लेइ पानी । चमकहि मछ बीजु कइ बानी ॥
पइरहि पंखि सो संगहि संगा । सेत पीत राते सब रंगा ॥
चकई चकवा केलि कराही । निसि क बिछोहा दिनहि मिलाही ॥
कुरलहि सारस भरे हुलासा । जिअन हमार मुअहि एक पासा ॥
केवा सोन ढेक बग लेदी । रहे अपूरि मीन जल-भेदी ॥

नग अमोल तिन्ह तालहि दिनहि बरहि जस दीप ।
जो मरजीआ होइ तहं सो पावइ वह सीप ॥

पुनि जो लागु बहु अंब्रित बारी । फरी अनूप होई रखवारी ॥
नउ-रंग नीउं सुरंग जंभीरी । अउ बदाम बहु भेद अजीरी ॥
गलगल तुरज सदा-फर फरे । नारंग अति राते रस भरे ॥
किसमिसि सेउ फरे नउ पाना । दारिउ दाख देखि मन राता ॥
लागु सोहाई हरिफा-रेउरी । उनइ रही केलाकइ घउरी ॥
फरे तूत कमरख अउ नउंजी । राइ-करउंदा बेरी चिरउंजी ॥
संख-दराउ छोहारा डीठे । अउरु खजहजा खाटे मीठे ॥

पानि देहि खडवानी कुअहि खाड बहु मेलि ।
लागी घरी रहटु कइ सीचहि अंब्रित बेलि ॥

पुनि फुलवारि लागु चहुं पासा । ब्रिरिख बेधि चंदन भइ बासा ॥
बहुत फूल फूली घन-बेइली । केवरा चंपा कुंद चमेइली ॥
सुरंग गुलाल कदम अउ कूजा । सुगंध-बकाउरि गंधरब पूजा ॥
नागेसर सतिबरग नेवारी । अउ सिंगार-हार फुलवारी ॥
सोनिजरद फूली सेवती । रूप-मंजरी अउरु मालती ॥
जाही जूही बकुचन्ह लावा । पुहुप सुदरसन लागू सोहावा ॥

मउलसिरी बेइलि अउ करना। सब फूल फूले बहु बरना ॥
तेहि सिर फूल चढ़हि वेइ जेहि मांथहि मनि भागु।
आछहि सदा सुगंध भइ जनु बसंत अउ फागु ॥
सिंघल नगर देखु पुनि बसा। धनि राजा असि जा करि दसा ॥
ऊंची पवरी ऊंच अवासा। जनु कविलास इंदर कर बासा ॥
राउ रांक सब घर घर सुखी। जो दीखइ सो हँसता-मुखी ॥
रचि रचि साजे चंदन चउरा। पोते अगर मेद अउ गउरा ॥
सब चउपारिन्ह चंदन खंभा। ओठंघि सभा-पति बइठे सभा ॥
जनउ सभा देओतन्हि कइ जूरी। परइ दिसिहि इंदरासन पूरी ॥
सबइ गुनी पंडित अउ ग्याता। ससकिरित सबके मुख बाता ॥
आहक पंथ सवारई जनु सिव-लोक अनूप।
घर घर नारी पदुमिनी मोहहि दरसन रूप ॥
पुनि देखी सिंघल कइ हाटा। नउ-उनिद्धि लछिमी सब बाटा ॥
कनक हाट सब कुकुंहि लीपी। बइठ महाजन सिंघल-दीपी ॥
रचहिं हतउडा रूपहि ढारी। चितर कटाउ अनेक संवारी ॥
सोन रूप भल भएउ पसारा। धवर सिरीपोतहि घर-बारा ॥
रतन पदारथ मानिक मोती। हीरा पवरि सो अनवन जोती ॥
अउ कपूर बेना कसतूरी। चंदन अगर रहा भरि पूरी ॥
जेइ न हाट एहि लीन्ह बेसाहा। ता कहं आन हाट कित लाहा ॥
कोई करइ बेसाहना काहू केर बिकाइ।
कोई चलइ लाभ सउं कोई मूर गवांइ ॥
लेइ लेइ फूल बइठि फुलबारी। पान अपूरब धरे सवारी ॥
सोंधा सबइ बइठु लेइ गांधी। बहुल कपूर खिरउरी बाधी ॥
कतहूं पंडित पढ़हि पुरानू। धरम पंथ कर करहिं बखानू ॥

कतहूं कथा कहइ किछु कोई। कतहू नाँच कोइ भल होई॥
कतहूं छरहटा पेखन लावा। कतहु पखंडी काठ नचावा॥
कतहूं नाद सबद होइ भला। कतहूं नाटक चेटक कला॥
कतहुं काहु ठग बिदिआ लाई। कतहुं लेहिं मानुस बउराई॥
चरपट चोर गंठि—छोरा मिले रहहिं तेहि नाच।
जो तेहि हाट सजग रहइ गंठि ता करि पइ बाच॥
पुनि आए सिंघल—गढ़ पासा। का बरनउं जनु लाग अकासा॥
तरहि कुरुम बासुकि कइ पीठी। ऊपर इंदर लोक पर डीठी॥
परा खोह चहुं दिसि अस बाँका। कापइ जांघ जाइ नहिं झाका॥
अगम—असूझ देखि डर खाई। परइ सो सपत पतारहि जाई॥
नउ पउरी बांकी नउ खंडा। नउ—उ जो चढ़इ जाइ ब्रहमंडा॥
कंचन कोट जरे कउ सीसा। नखतन्ह भरी बीजु जनु दीसा॥
लंका चाहि ऊंच गढ़ ताका। निरखि न जाइ दिसिटि मन थाका॥
हिअ न समाइ दिसिटि नहि जानउं ठाढ़ सुमेरु।
कहं लगि-कहउं उचाई कहं लगि बरनउं फेरु॥
निति गढ बाँचि चलइ ससि सूरा। नाहिं त होइ बाजि रथ चूरा।
पउरी नउ-उ बजर कर साजी। सहस सहस तहं बइठे पाजी॥
फिरहिं पाँच कोटवार सो भवंरी। काँपइ पाउं चंपत वेइ पंउरी॥
पउरिहि पउरि सिंह गढ़ि काढे। डरपहिं राइ देखि तिन्ह ठाढे॥
बहु बिधान वेइ नाहर गढे। जनु गाजहिं चाहहिं सिर चढे॥
टारहिं पूछि पसारहिं जीहा। कुंजर डरहिं कि गुंजरि लीहा॥
कनक—सिला गढ़ि सीढ़ी लाई। जगमगाहिं गढ ऊपर ताई॥
नउ—उ खंड नउ पउरी अउ तेहि बजर के बार।
चारि बसेरे सउं चढ़इ सत सउं चढ़इ जो पार॥

नवउं पउरि पर दसउं दुआरा। तेहि पर बाजु राज-घरिआरा॥
घरी मो बइठि गनइ घरिआरी। पहर पहर मो आपनि वारी॥
जबहि घरी पूजइ वह मारा। घरी घरी घरिआर पुकारा॥
परा जो डांड जगत सब डांडा। का निचिन्त मांटी के भाडा॥
तुम तेहि चाक चढे होइ कांचे। आएउ फिर इन थिर होइ बाचे॥
घरी जो भरइ घटइ तुम्ह आऊ। का निचित सोअहु रे बटाऊ॥
पहरहि पहर गजर निति होई। हिआ निसोगा जागु न सोई॥

मुहमद जीअन जल भरन रहंट घरी कइ रीति।
घरी जो आई जीअन भरी जनमगा बीति॥

गढ़ पर नीर खीर दुइ नदी। पानि भरहि जइसे दुरुपदी॥
अउरु कुंड एक मोती चूरू। पानी अंम्रित कीचु कपूरू॥
ओहिक पानि राजा पइ पीआ। बिरिधि होइ नहिं जउ लहि जीआ॥
कंचन बिरिख एक तेहि पासा। जस कलप-तरु इंदर कबिलासा॥
मूल पतार सरग ओहि साखा। अमर बेलि को पाउ को चाखा॥
चांद पात अउ फूल तराईं। होइ उंजिआर नगर जहं ताईं॥
वह फर पावइ तपि कइ कोई। बिरिधि खाइ नउ जोवन होई॥

राजा भए भिखारी सुनि ओहि अंम्रित भोग।
जइ पावा सो अमर भा न किछु बिआधि न रोग॥

गढ पर बर्साहि झारि गढ़-पती। असु-पति गज-पति भू-नर-पती॥
सबक धउरहर सोनइ साजा। अउ अपने अपने घर राजा॥
रूपवन्त धनवन्त सभागे। परस-पखान पउरि तिन्ह लागे॥
भोग बिरास सदा सब माना। दुख चिन्ता कोइ जनम न जाना॥
मंदिर मंदिर सब के चउपारी। बइठि कुंअर सब खेलहि सारी॥
पासा ढरइ खेलि भलि होई। खरग दान सरि पूजन कोई॥

भाँट बरनि कहि कीरति भली। पावहिं घोर हस्ति सिंघली॥
मँदिर मँदिर फुलवारी चोआ चंदन बास।
निसिदिन रहइ तहँ छवो रितु बरहो मास॥
पुनि चलि देखा राज-दुआरू। महि घूँबिअ पाउअ नहिं बारू॥
हस्ति सिंघली बाँधे बारा। जनु सजीउ सब ठाढ़ पहारा॥
कवन-उ सेत पीत रतनारे। कवन-उ हरे धूम अउकारे॥
बरनहिं बरन गगन जनु मेघा। अउ तेहि गगन पीठि जस ठेघा॥
सिंघल के बरनउँ सिंघली। एक एक चाहि एक एक बली॥
गिरि पहार वेइ पइगहि पेलहिं। बिरिख उचारि फारि मुख मेलहि॥
माते तिमते गरजहिं बाँधे। निसि दिन रहहिं महाउत काँधे॥
धरती भार अंगवई पाउँ धरत उठ हालि।
कुरुम टूट फन फाटई तिन्ह हस्तिन्ह के चालि॥
पुनि बाँधे रजबार तुरंगा। का बरनउँ जस उन्ह के रंगा॥
लीले समुँद चाल जग जाने। हाँसुल भवँर किआह बखाने॥
हरे कुरंग महुअ बहु भाँती। गरर कोकाह बुलाह सो पाँती॥
तीख तुखार चाँडि-अउ बाँके। तरपहिं तबहिं नाचि बिनु हाँके॥
मन तह अगमन डोलहिं बागा। देत उसास गगन सिर लागा॥
पावहिं साँस समुद पर धावहिं। बूड न पाउँ पार होइ आवहिं॥
थिर न रहहिं रिसलोहि चबाहीं। भाजहिं पूँछि सीस उपराहीं॥
अस तुखार सब देखे जनु मन के रथ-बाह।
नयन पलक पहुँचावहीं जहँ पहुँचइ कोइ चाह॥
राज-सभा पुनि देख बईठी। इंदर-सभा जनु परि गइ डीठी॥
धनि राजा असि सभा सवारी। जानउ फूलि रही फुलवारी॥
मुकुट बाधि सब बइठे राजा। दर निसान सब जिन्ह के बाजा॥

रूपवन्त मनि दिपइ लिलाटा । माँथर छात बइठ सब बाटा ॥
मानउं कवल सरोवर फूले । सभाक रूप देखि मन भूले ॥
पान कपूर मेद कसतूरी । सुगंध बास सब रही अपूरी ॥
माझ ऊंच इंदरासन साजा । गँधरब-सेन बइठ तह राजा ॥
छतर गगन लगता कर सूर तवइ जस आपु ।
सभा कवल अस बिगसई मांथर बड परतापु ॥
साजा राज-मंदिर कबिलासू । सोनइ कर सब पुहुमि अकासू ॥
सात खंड धउराहर साजा । उहइ संवारि सकइ अस राजा ॥
हीरा ईंटि कपूर गिलावा । अउ नग लाइ सरग लेइ लावा ॥
जावत सबइ उरेह उरेहे । भाँति भाँति नग लाग उबेहे ॥
भाकटाउ सब अनवन भाँती । चितर होतगा पाँतिह पाँती ॥
लाग खंभ मनि मानिक जरे । जनु दीआ दिन रइनि बरे ॥
देखि धउरहर कइ उजिआरा । छपि गा चाँद सुरुज अउ तारा ॥
सुने सात बइकुंठ जस तस साजे खंड सात ।
बीहर बीहर भाउ तस खंड खंड ऊपर जात ॥
बरनउ राज मंदिर रनि बासू । अछरिन्ह भरा जानु कबिलासू ॥
सोरह सहस पदुमिनी रानी । एक एक तइ रूप बखानी ॥
अति सु-रूप अउ अति सु-कुंवारी । पान फूल के रहहि अधारी ॥
तिह ऊपर चंपावति रानी । महा सुरूप पाट परधानी ॥
पाट बइठि रह किए सिंगारू । सब रानी ओहि करहि जोहारू ॥
निति नउ रंग सु-रंग से सोई । परथम बयस न सरवरि कोई ॥
सकल दीप मह चुनि चुनि आनी । तिह मह दीपक बारह बानी ॥
कुंवरि बतीस-उ लखिनी अस सब माह अनूप ।
जावत सिंघल-दीप महं सबइ बखानहि रूप ॥

अथ जनम खंड

चंपावति जो रूप संवारी । पदुमावति चाहइ अउतारी ॥
भइ चाहइ असि कथा सलोनी । मेटि न जाइ लिखी जसि होनी ॥
सिंघल-दीप भएउ तब नाऊँ । जो अस दिआ बरा तेहि ठाऊँ ॥
प्रथम सो जोति गगन निरमई । पुनि सो पिता माथइ मनि भई ॥
पुनि वह जोति मातु घट-आई । तेहि ओदर आदर बहु पाई ॥
जस अउधानु पूर भा मासू । दिन दिन हिअइ होइ परगासू ॥
जस अंचल झीइन महँ दीआ । तस उँजिआर देखावइ हीआ ॥

सोनइ मंदिर संवारही अउ चंदन सब लीप ।
दिआ जो मनि सिउलोक महँ उपना सिंघल-दीप ॥

भए दस मास पूरि भइ घरी । पदुमावति कनिआ अउतरी ॥
जानउ सुरुज किरिनि हुत काढी । सुरुज करा घाटि वह बाढी ॥
भा निसि महँ दिन कर परगासू । सब उँजिआर भएउ कबिलासू ॥
इते रूप मूरति परगटी । पूनिउ ससि सो खीन होइ घटी ॥
घटत ही घटत अमावस भई । दुइ दिन लाज गाडि भुइँ गई ॥
पुनि जो उठी दुइज होइ नई । निह कलंक ससि बिधि निरमई ॥
पदुम-गंध बेधा जग बासा । भवँर पतंग भए चहुँ पासा ॥

इते रूप भइ कनिआ जेहि सरि पूज न कोइ ।
धनि सो देस रुपवंता जहाँ जनम अस होई ॥

भई छठि राति छठी सुख मानी । रहसि कूद सउँ रहनि बिहानी ॥
भा बिहान पंडित सब आए । काढि पुरान जनम अरथाए ॥
उतिम घरी जनम भा तासू । चाँद उआ भुइँ दिया अकासू ॥
कनिआ रासि उदय जग किआ । पदुमावती नाउँ भा दिआ ॥

सूर परस मंड भण्ड गुरीरा । किटिनि जामि उपना नग हीरा ॥
तेहि नई अधिक पदारथ करा । रतन जोग उपना निरमरा ॥
सिघल-दीप भण्ड अउतारा । जबू-दीप जाइ जाइ जमुआरा ॥

रामा आए अजुधिआ लखन बतीस-उ सग ।
रावन रूप सो भलेहि दीपक जइस पतग ॥

अहा जनम-पतरी सो लिखी । देह असीस बहुरे जोतिखी ॥
पाँच बरिस महँ भई सो बारी । दीन्ह पुरान पढइ बइसारी ॥
भइ पदुमावती पंडित गुनी । चहूँ खड के राजन्ह सुनी ॥
सिघल-दीप राज घरबारी । महा सुरूप दई अउतारी ॥
एक पदुमिनि अउ पडित पढी । दहु केइ जोग दई असि गढी ॥
जा कह लिखी लच्छि घर होनी । सो असि पाउ पढी अउ लोनी ।
सपत दीप के बर जो ओनाही । उतर न पावहि फिरि फिरि जाही ॥

राज कहइ गरब सउ हउ रे इदर सिउ-लोक ।
को सरि मो सउ पावई का सउ करउं बरोक ॥

बारह बरिस माह भइ रानी । राजइ सुना सजोग सयानी ।
सात खड धउराहर तासू । सो पदुमिनी कह दीन्ह निवासू ॥
अउ दीन्ही सग सखी सहेली । जो सग करहि रहसि रसकेली ॥
सबइ नउलि पिउ सगन सोई । कवल पास जनु बिगसी कोई ॥
सुआ एक पदुमावति ठाऊं । महा-पंडित हीरामनि नाऊ ॥
दई दीन्ह पखिहि असि जोती । नयन रतन मुख मानिक मोती ।
कचन बरन सुआ अति लोना । मानहुं मिला सोहागहि सोना ॥

रहहि एक संग दुअऊ पढहि सासतर बेद ।
बरम्हा सीस डोलावई सुनत लाग तस भेद ॥

जग कोइ दिसिटिन आवहि अछरी नयन अकास ।
जोगि जती सनिआसी तप साधहि तेहि आस ।।

एक दिवस पदुमावति रानी । हीरामनि तइ कहा सयानी ।
पिता हमार न चालइ बाता । त्रासहि बोलि सकइ नहि माता ।।
देस देस के बर मोहि आवहि । पिता हमार न आंखि लगावहि ।।
हीरामनि तब कहा बुझाई । विधि कर लिखा मेटि नहि जाई ।।
अगिआ देउ देखउ फिरि देसा । तोहि लायक बर मिलइ नरेसा ।।

जउ लगि मइ फिरि आऊ मन चित धरहु निवारि ।
सुनत रहा कोइ दुरजन राजहि कहा बिचारि ।।

राजइ सुना दिसिटि भइ आना । बुधि जो देइ सग सुआ सयाना ।
भएउ रजाएसु मारहु सुआ । सूर सुनाउ चांद जह ऊआ ।
सतुर सुआ के नाऊ बारी । सुनि धाए जस धाउ मजारी ।
तब लगि रानी सुआ छपावा । जब लगि आऊ मजारि न पावा ।।
पिता कि आएसु माथइ मोरे । कहहु जाइ बिनवइ कर जोरे ।।
पंखि न कोई होइ सुजानू । जानइ भुगुति कि जानु उडानू ।।
सुआ जो पढइ पढाए बयना । तेहि कित बुधि जेहि हिअइ न नयना ।।

मानिक मोती देखि वह हिए न गिआन करेइ ।
दारिउ दाख जानि कइ तब-हि ठोर भरि लेइ ।।

वेइ तो फिरे उतर अस पावा । बिनवा सुअइ हिअइ डरु खावा ।।
रानी तुम्ह जुग जुग सुख आऊ । हउ अब बनोवास कह जाऊ ।।
मोतिहि जो मलीन होइ करा । पुनि सो पानि कहाँ निरमरा ।।
ठाकुर अंत चहइ जेहि मारा । तेहि सेवक कह कहाँ उबारा ।।
जेहि घर काल मजारी नाचा । पखी नाउ जीउ नहि बांचा ।।
मइं तुम्ह राज बहुत सुख देखा । जउं पछहु देइ जाइ न लेखा ।।

जो हींछा मन कीन्ह सो जेंवा। यह पछिताउ चलउ बिनु सेवा॥
मांगइ सोई निमोगा डरइ न अपने दोस।
केला केलि करइ का जो भा बेगि परोस॥
रानी उतर दीन्ह कइ मया। जउं जिउ जाइ रहइ किमि कया॥
हीरामनि तूं परान परेवा। धोख न लागु करत तोहि सेवा॥
तोहि सेवा बिछुरन नहि आखउं। पींजर हिअइ घालि कइ राखिउ॥
हउ मानुस तूं पंखि पिआरा। धरम पिरीति तहां को मारा॥
का पिरीति तन माह बिलाई। सो पिरीति जिउ साथ जो जाई॥
पिरिति भार लेइ हिअइ न सोचू। ओहि पंथ भल होइ कि पोचू॥
पिरिति पहार भार जो कांधा। सेहि किन छूट लाइ जिउ बांधा॥
सुआ न रहइ खुरुकि जिउइ अब-हि काल सो आउ।
सतुर अहइ जो करिया कब-हु सो बोरइ नाउ॥

इति जनम खंड॥ ३॥

अथ मानसरोदक-खंड ॥४॥

एक दिवस पूनिउ तिथि आई। मानसरोदक चली अन्हाई॥
पदुमावति सब सखी बोलाई। जनु फुलवारि सबइ चलि आई॥
कोइ चंपा कोइ कुंद सहेली। कोइ सो केत करना रस-बेली॥
कोइ सो गुलाल सुदरसन राती। कोइ बकउरि बकुचन बिहसाती॥
कोइ सो मउल सिरि पुहुपावती। कोइ जाही जूही सेवती॥
कोई सोनिजरद कोइ केसर। कोइ सिंगार-हार नागेसर॥
कोई कूजा सनिबरग चबेइली। कोइ कदम सुरस रस-बेइली॥
चली सबइ मालति संग फूली कवल कुमोद।
बेधि रहे गन गंध्रब बास परिमला मोद॥६०॥

खेलत मानसरोदक गई । जाइ पालि पर ठाढ़ी भई ॥
अइ रानी मनु देखु बिचारी । एहि नइ हर रहना दिन चारि ॥
जउ लहि अहहि पिता कर राजू । खेलि लेहु जो खेलहु आजू ॥
पुनि सासुर हम गवनब काली । कित हम कित यह सरवर पाली ॥
कित आउन पुनि अपने हाथा । कित मिलि कइ खेलब एक-साथा ॥
सासु ननद बोलिन जिउ लीन्हा । दारुन ससुर न निसरइ दीन्हा ॥

पिउ पिआर सब ऊपर पुनि सो करइ दहु काह ।
दहु सुख राखइ की दुख दहु कस जनम निबाह ॥६१॥

मिलहि रहसि सब चढहि हिंडोरी । झूलि लेहि सुख बारी भोरी ॥
झूलि लेहु नइहर जब ताईं । फिरि नहि झूलन दीन्हि साईं ॥
पुनि सासुर लेइ राखिहि तहा । नइहर चाह न पाउबि जहा ॥
कित यह धूप कहा यह छाहा । रहबि सखी बिनु मंदिर माहा ॥
गुनि पूछिहि अउ लाइहि दोखू । कउनु उतर पाउबि कित मोखू ॥
सासु ननद कित भउंह सकोरे । रहबि सकोचि दुअउ कर जोरे ॥
कित यह रहसि जो आउबि करना । ससुरइ अंत जनम दुख भरना ॥

कित नइहर पुनि आउबि कित सासुर यह खेलि ।
आपु आपु कह होइहि परबि पंखि जस डेलि ॥६२॥

सरवर तीर पदुमिनि आई । खोपा छोरि केस मुख लाई ॥
ससि मुख अंग मलय-गिरि रानी । नागिनि झांपि लीन्ह अरघानी ॥
ओनए मेघ परी जग छाहा । ससि कइ सरन लीन्ह जनु राहा ॥
छपि गइ दिन-हि भानु कइ दसा । लेइ निसि नखत चांद परगसा ॥
भूलि चकोर दिसिटि तह लावा । मेघ घटा मह चंद देखावा ॥
दसन दामिनी कोकिल भाखी । भउंह धनुख गगन लेइ राखी ॥

सरवर रूप विमोहा पिअइ हिलोर करेइ ।
पाउ छुअइ मकु पावऊ एहि मिस लहरइ देइ ।।
धरी तीर सब कंचुकि सारी । सरवर मह पइठी सब बारी ।।
करिल केस बिसहर बिसभरे । लहरइ लेहिं कवल मुखधरे ।।
उठी कोंपि जस दारिउ दाखा । भई उनत पेम कइ साखा ।।
नवल बसन सवारइ करी । होइ परगट जानउ रस भरी ।।
सरवर नहि समाइ संसारा । चांद नहाइ पइठि लेइ तारा ।।
धनि सो नीर ससि तरई अई । अब कित दिसिटि कवल अउ कुई ।।
चकई बिछुरि पुकारई कहा कहा मिलन हो नाह ।
एक चाद निसि सरग पर दिन दोसर जल माह ।।
लागी केलि करइ मझ नीरा । हस लजाइ बइठु नेहि तीरा ।।
पदुमावति कउतक कह राखी । तुम्ह ससि होहु तरायन साखी ।।
बाद मेलि कइ खेलि पसारा । हार देइ जउ खेलत हारा ।।
सवरिहि सावरि गोरिहि गोरी । आपनि आपनि लीन्ह सो जोरी ।।
बूझि खेलि खेलहु एक साथा । हार न होइ पराए हाथा ।।
आजु-हि खेलि बहुरि कित होई । खेलि गए किन खेलइ कोई ।।
धनि सो खेलि खेलहि रस पेमा । रउताई अउ कूसर खेमा ।।
मुहमद बाजि परेम कइ जउ भावइ तउ खेल ।
तेल्हि फूलहि संग जउ होइ फुला एल तेल ।।
सखी एक तेइ खेलि न जाना । भइ अचेत मनि-हार गवाना ।।
कवल डार गहि भइ बिकरारा । का स पुकारउ आपन हारा ।।
किन खेलइ आइऊ एहि साथा । हार गवाइ चली सइ हाथा ।।
घर पइठत पूछब एहि हारू । कउनु उतर पाउबि पइसारू ।।
नयन सीप आसुन्ह तस भरे । जानउ मोति गिरहि सब ढरे ।।

सखिन्ह कहा भोरी कोकिला । कउनुं पानि जेहि पवनन मिला ॥
हार गवांइ सो अइसइ रोआ । हेरि हेराइ लेहु जनं खोआ ॥
लागी सब मिलिहेरई बूडि बूडि एक साथ ।
कोई उठी मोती लेइ काहू घोंघी हाथ ॥
कहा मानसर चहा सो पाई । पारस-रूप इहां लगि आई ॥
भा निरमर तिन्ह पाएन्ह परसे । पावा रूप-रूप के दरसे ॥
मलय-समीर बास तन आई । भासीतल गइ तपन बुझाई ॥
न जनउँ कउनु पवन लेइ आवा । पून दसा भइ पाप गवाँवा ॥
ततखन हार बेग उतराना । पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना ॥
बिगसी कुमुद देखि ससि-रेखा । भइ तहँ ओप जहाँ जो देखा ॥
पावा रूप-रूप जस चहा । ससि-मुख सब दरपन होइ रहा ॥
नयन जो देखी कँवल भइ निरमर नीर सरीर ।
हँसति जो देखी हंस भइ दसन जोति नग हीर ॥
इति मानसरोदक खंड ॥ ४ ॥

अथ—सुआ खंड ॥ ५ ॥

पदुमावति तहँ खेल दुलारी । सुआ मन्दिर महँ देख मँजारी ॥
कहेसि चलउँ जउ लहि तन पांखा । जिउ लेइ उड़ा ताकि बन-ढांखा ॥
जाइ परा बन-खंड जिउ लीन्हे । मिले पंखि बहु आदर कीन्हे ॥
आनिधरे आगइ सब साखा । भुगुति न मेटइ जउ लहि राखा ॥
पाई भुगुति सुख मन भएऊ । अहा जो दुख बिसरि सब गएऊ ॥
अइ गोसाइं तू अहस विधाता । जावंत जिउ सब कर भक-दाता ॥
पाहन महं न पतंग बिसारा । जहं तोहिं सवंर देहि तू चारा ॥
तउ लहि सोग विछोह कर भोजन परा न पेट ।
पुनि बिसरा या सवंरना जनु सपने भइ भेंट ॥

१९

पदुमावति पहं आइ भंडारी । कहेसि मंदिर महं परी मंजारी ॥
सुआ जो उतर देत इहा पूछा । उडिगा पिंजर न बोलइ छूछा ॥
रानी सुना सूखि जिउ गएऊ । जनु निसिपरी असत दिन भएऊ ॥
गहनहि गही चाँद कइ करा । आँसु गगन जनू नखतन्ह भरा ॥
टूट पालि सरवर बहि लागे । कवंल बूड मधुकर उडि भागे ॥
एहि बिधि आँसु नखत होइ चुए । गगन छाँडि सरवर भरिउए ॥
छिहुरि चुई मोतिन्ह कइ माला । अब संकेत बांधा चहुं पाला ॥

उडि यह सुअटा कहं वसा खोजहु सखि सो बासु ।
दहुं हइ धरती की सरग पवन न पावइ तासु ॥

चहूँ पास समुझावहि सखी । कहाँ सो अब पाइअगा पंखी ॥
जउ लहि पिंजर अहा पेखा । रहा बाँद कीन्हेसि निति सेवा ॥
तेहु बंद हुति छूटइ पावा । पुनि फिर बंद होइ कित आवा ॥
वह उड़ान-फर तहिअइ खाए । जब मा पंखि पाँख तन पाए ॥
पिजर जेहिक सउंपि तेहि गएऊ । जो जाकर सो ताकर भएऊ ॥
दस बाटइं जेहि पिंजर माहाँ । कइसइ बाँच मंजारी पाहाँ ॥
एहि धरती अस केतन लीले । तस पेट गाढ बहुरि नहिं ढीले ॥

जहाँ न राति न दिवस हइ जहाँ न पवन न पानि ।
तेहि बन होइ सुअटा बसा को रे मिलावइ आनि ॥

सुअइ तहाँ दिन दस कलि काटी । आई बिआध ढुका लेइ टाटी ॥
पइग पइग भुइँ चाँपत आवा । पंखिन्ह देखि हिअइ डर खावा ॥
देखहु किछु अचरज अनभला । तरिवर एक आवत हइ चला ॥
एहि वन महत गई हम आऊ । तरिव चलत न देखा काऊ ॥
आजु जो तरिवर चलभल नाही । आवहु एहि बन छाँडि पराही ॥
वेइ तउ उडे अउरु बन ताका । पंडित सुआ भूलि मन थाका ॥

माखा देखि राजु जनु पावा । बइठ निचिंत चला वह आवा ॥
पाँच बानकर खोंचा लासा भरे सो पांच ।
पांख भरे तन अरुझा कित मारइ बिनु बांच ॥
बद भा मुआ करत सुखकेली । चूरि पांख धरि मेलेसि डेली ॥
तहवां पंखि बहुत खरभ रहीं । आपु आपु महं रोदन करही ॥
बिख-दाना कित देइ अंगूरा । जेहि मा मरन डहन धर चूरा ॥
जउं न होत चारा कइ आसा । कित चिरि-हार ढुकत लेइ लासा ॥
एहि बिख-चारइ सब बुधि ठगी । अउ भा काल हाथ लेइ लगी ॥
एहि झूठी माया मन भूला । चूरइ पांख जइस तन फूला ॥
यह मन कठिन मरइ नहिं मारा । जार न देखु देखु पइचारा ॥
हम तउ बुद्धि गवांई बिख-चारा अस खाइ ।
तू सुअटा पंडित हता तू किन फांदा आइ ॥
मुअइ कहा हम-हूं असभूले । टूट हिंडोल गरब जेहि झूले ॥
केला के बन लीन्ह बसेरा । परा साथ तहं बइरिन्ह केरा ॥
मुख कुरआर फरहुरी खाना । बिख भा जवहिं बिआध तुलाना ॥
काहे क भोग-बिरिख असफरा । आड लाई पंखिन्ह कहँ धरा ॥
होइ निचिंत बइठे तेहि आडा । तब जाना खों चाहिए गाडा ॥
सुख निचित जोरत धन करना । यह न चित आगइ हइ मरना ॥
भूले हम-हुँ गरब तेहि माहाँ । सो बिसरा पावा जेहि पाहाँ ॥
चरन न खुरुक कीन्ह जब तब रे चरा सुख सोइ ।
अब जो फाँद परा गिउ तब रोए का होइ ॥
सुनि कइ उतर आंसु सब पोंछे । कउनु पंख बांधे बुधि ओछे ॥
पखिन्ह जउँ बुधि होइ उंजिआरी । पढा सुआ कित धरइ मंजारी ॥
कित तीतर बन जीभ उघेला । सो किन हँकारि फांद गिउ मेला ॥

ता दिन व्याध भएउ जिउ लेवा । उठे पांख भा नाउँ परेवा ॥
भइ बिआधि तिसिना सँग खाधू । सूझइ भुगुतिन सूझ बिआधू ॥
हमहिं लोभ वह मेला चारा । हमहिं गरब वह चाहर मारा ॥
हम निंचित वह आड छपाना । कअनु बिआधहि दोस अपाना ॥
सो अउगुन कित कीजिए जिउ दीजिअ जेहि काज ।
अब कहना किछु नाहीं मसटि भली पँखि-राज ॥

अथ राजा-रतन-सेन-जनम खंड ॥६॥

चितर-सेन चितउर गढ राजा । कइ गढ कोट चितर जेइ साजा ॥
तेहि कुल रतन-सेन उँजिआरा । धनि जननी जनमा अस बारा ॥
पंडित गुनि सामुदरिक देखहिं । देखि रूप अउ लगन बिसेखहिं ॥
रतन-सेन बहु नग अउतरा । रतन जोति मनि माँथइ बरा ॥
पदिक-पदारथ लिखी सो जोरी । चांद सुरुज जस होइ अँजोरी ॥
जस मालति कहँ भँवर बिओगी । तस ओहि लागि होइ यह जोगी ॥
सिंघल-दीप जाइ वह पावइ । सिद्ध होइ चित-उर लेइ आवइ ॥
भोज भोग जस माना बिकरम साका कीन्ह ।
परखि सो रतन पारखी सबइ लगन लिखि दीन्ह ॥

इति राजा-रतन-सेन-जनम खंड ॥६॥

मध्य युग

सगुन भक्ति धारा

कृष्ण भक्ति शाखा

रसखान

रसखान

प्रेम

प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोय ।
जो जन जानै प्रेम तो, मिटै जगत क्यों रोय ॥
प्रेम अगम अनुपम अमित, सागर सरिस बखान ।
जो आवत यहि ढिग बहुरि, जात नाहिं रसखान ॥
प्रेम बारुनी छान कै, वरुन भये जलधीस ।
प्रेमहि ते विषपान करि, पूजे जात गिरीस ॥
दंपतिसुख अरु विषय रस पूजा निष्ठा ध्यान ।
इनते परे बखानिये, शुद्ध प्रेम रसखान ॥
मित्र कलत्र सुबंधु सुत, इनमें सहज सनेह ।
शुद्ध प्रेम इनमें नहीं, अकथ कथा सबिसेह ॥
जेहि बिनु जाने कछुहि नहीं, जान्यो जात विसेस ।
सोई प्रेम जेहि जानि कै, रहि न जात कुछ सेस ॥
इक अंगी बिनु कारन ही, इक रस सदा समान ।
गनै प्रियहिं सरबस्व जो, सोई प्रेम परधान ॥
डरै सदा चाहै न कछ, सहै सबै जो होय ।
रहै एक रस चाहि कै, प्रेम बखानौ सोय ॥

× × × × ×

मानुष हौं तो वही रसखान,
बसौं संग गोकुल गांव के ग्वारन ।
जौ पसु हों तो कहा बसु मेरो,
चरौं नित नंद की धेनु मंझारन ॥

पाहन हौं तो वही गिरि को,
जो कियो ब्रज छत्र पुरंदर कारन ।
जौ खग हों तो बसेरो करौं वही,
कालिंदी कूल कदंब की डारन ॥
या लकुटी अरु कामरिया पर,
राज तिहूं पुर को तजि डारौं ।
आठहुं सिद्धि नवो निधि के,
सुख नंद की गाय चराय बिसारौं ॥
नैनन सो रसखान जबै,
ब्रज के बन बाग तडाग निहारौं ।
केतिक हूं कलधौत के धाम,
करील के कुंजन ऊपर वारौं ॥
मोर पखा सिर ऊपर राखि हों,
गुंज की माल परे पहिरौंगी ।
ओढ़ि पितांबर लै लकुटी बन,
गोधन ग्वालन संग फिरौंगी ॥
भावतो सोई मेरो रसखान,
सो तेरे कहे सब स्वांग करौंगी ।
या मुरली मुरलीधर की,
अधरान-धरी अधरा न धरौंगी ॥

× × × × ×

बाल्य वर्णन

धूर भरे अति सोहित स्याम जू, तैसी बनी सिर सुंदर चोटी ।
खेलत खात फिरैं अंगना पग, पैंजनी बाजतीं पीरी कछोटी ॥

वा छवि को रसखान बिलोकत, वारत काम कला निज कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि, हाथ सों ले गयो माखन रोटी॥
दोउ कानन कुंडल मोर पखा, सिर सोहै दुकूल नयो चटको।
मनिहार गरे सुकुमार धरे, नर भेस करे पिय को टटको॥
मुम काछनि बैजनि पैजनी पांयन, आमन में न लगो झटको।
वह सुंदर को रसखान अली, जो गलीन में आय अबै अटको॥
सोहत हैं चंदवा सिर मौर के, जैसिये सुन्दर पाग कसी है।
तैसिये गोरज भाल बिराजति, जैसी हिये बनमाल लसी है॥
रसखान बिलोकत बौरी सोह्वै, दृग मूदि के ग्वालि पुकार हंसी है।
खोलरी घूघट, खोलौं कहा, वह मूरति नैनन मांझ बसी है॥

कान्हा की बंसी

कौन ठगोरी भरी हरि आज, बजाई है बांसुरिया रस भीनी।
तान सुनी जिनहीं जितहीं, तिनही तित लाज विदा कर दीनी॥
घूमैं घरी घरी नंद के बार, नवीनी कहा अरु बाल प्रवीनी।
या व्रजमंडल में रसखान, सु कौन भटू जु लटू नहि कीनी॥

भागीरथी स्तवन

वैद की औषधि खाइ कछू, न करैं वह संजम री सुन मोंसे।
तो जल पानि किये रसखानि, सजीवन जानि लियो सुख तोंसे॥
ये री सुधामयी भागीरथी, निपतत्थि बनै न सनै तुहि पोसे।
आक धतूर चवात फिरैं, विष खान फिरैं शिव तेरे भरोसे॥

उद्भट

सेस महेस गनेस दिनेस सुरेसहु जाहि निरंतर गावैं।
जाहि अनादि अनंत अखंड अछेद अभेद सुवेद बतावैं॥

नारद से सुक व्यास रहैं पचि हारे तऊ पुनि पार न पावें।
ताहि अहीर की छोहरियां छछिया भरि छाछ पै नाच नचावें॥
आयो हुतो नियरो रसखान कहा कहूं तू न गई वहि ठैयां।
या ब्रज में सिगरी बनिता सब वारति प्राननि लेत बलैयां॥
कोऊ न काहु कि कानि करै कछु चेटक सोजु करयो जदुरैया।
गाइगो तान जमाइगो नेह रिझाइगो प्रान चराइगो गैया॥

द्रौपदि औ गनिका गज गीध, अजामिल जो कियो सो न निहारो।
गौतम गेहिनि कैसे तरी, प्रहलाद को कैसे हरयो दुख भारो॥
काहे को सोच करै रसखान, कहा करि हैं रवि नंद बिचारो।
ताखन जाखन राखिये माखन, चाखन हारो सो राखन हारो॥

ब्रह्म मैं ढूंढयो पुरानन वेदन, मंद सुने चित चौगुने चायन।
देख्यो सुन्यो न कबौं कितहूं, वह कैसो स्वरूप है कैसो सुभायन॥
हेरत हेरत हारि फिरयो, रसखान बतायो न लोग लुगायन।
देख्यो कहां वह कुंज कुटीर, कुटीतट, बैठो पलोटत राधिका पायन॥

कहा रसखान सुख संपति सुमार कहा,
कहा तन जोगी ह्वै लगाये तन छार को।
कहा साधे पंचानल कहा सोये बीचानल,
कहा जीति लाये राज सिंधु आरपार को॥
जप बार बार तप संयम बयार ब्रत,
तीरथ हजार अरे बूझत लबार को।
कीन्हों नहीं प्यार नहीं सेयो दरबार चित,
चाह्यो न निहार जो पै नंद के कुमार को॥

——

अकबर के युग की
स्फुट रचनाएँ

रहीम

रहीम के दोहे

सर सूखे पंछी उड़ें औ: सरन समाहिं ।
दीन मीन बिन पच्छ के कहु रहीम केही काज ॥१॥
धूर धरत निज सीस पर कहु रहीम केहि काज ।
जेहि रज मुनिपत्नी तरी सो ढूंढत गजराज ॥२॥
दीन सबन को लखत हैं दीनहिं लखै न कोइ ।
जो रहीम दीनहि लखै दीनबन्धु सम होइ ॥३॥
राम न जाते हिरन संग सीय न रावन साथ ।
जो रहीम भावी कहूँ होत आपने हाथ ॥४॥
कहु रहीम कैसे बने केरि बेरि को संग ।
वे डोलत रस आपने उनको फाटत अंग ॥५॥
जो रहीम ओछो बढै तो नित ही इतराइ ।
प्यादे से फरजी भयो टेढो टेढो जाइ ॥६॥
नैन सलोने अधर मधु कहु रहीम घटि कौन ।
मीठो भावै लौन पर अरु मीठे पर लौन ॥७॥
जो रहिमन दीपक दशा किय राखति पट ओट ।
समय परे ते होत है वाही पट की चोट ॥८॥
रहिमन राज सराहिये शशि सम सुखद जो होइ ।
कहा बापुरो भानु है तप्यौ तरैयन खोइ ॥९॥
कमला थिर न रहीम कहि यह जानत सब कोइ ।
पुरुष पुरातन की बधू क्यों न चंचला होइ ॥१०॥
जो गरीब सों हित करैं धनि रहीम वे लोग ।
कहा सुदामा बापुरो कृष्णमिताई जोग ॥११॥

यह रहीम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसंग ।
चदन विष व्यापत नहीं लिपटे रहत भुजंग ॥१२॥
आप न काहू काम के डार पात फल फूल ।
औरन को रोकत फिरैं रहिमन पेड बबूल ॥१३॥
यों रहीम सुख होत है बढत देखि निज गोत ।
ज्यौं बड़री अंखिया निरखि आंखिन को सुख होत ॥१४॥
शशि संकोच साहस सलिल मान सनेह रहीम ।
बढत बढत बढि जात है घटत घटत घट सीम ॥१५॥
यह रहीम निज संग लै जनमत जगत न कोइ ।
बैर प्रीति अभ्यास जस होत होत ही होइ ॥१६॥
दुरदिन परे रहीम कहि दुरथल जैयत भागि ।
ठाढे हूजत घूर पै जब घर लागत आगि ॥१७॥
प्रीतम छबि नैनन बसी पर छबि कहां समाय ।
भरी सराय रहीम लखि पथिक आप फिरि जाय ॥१८॥
कौन बड़ाई जलधि मिली गंग नाम भयो धीम ।
केहि की प्रभुता नहि घटी पर घर गए रहीम ॥१९॥
रहिमन नही सराहिए लेन देन की प्रीति ।
प्राणनि को बाजी लगी हार होय कै जीति ॥२०॥
रहिमन रिस सहि तजत नही बड़े प्रीति की पौरि ।
मूकनि मारत आवही नीद बिचारी दौरि ॥२१॥
जिहि रहीम तन मन दियो कियो हिये बिच मौन ।
तासों सुख दुख कहन की रही कथा अब कौन ॥२२॥
जो पुरुषारथ ते कहूँ संपति मिलत रहीम ।
पेट लागि बैराट घर तपत रसोई भीम ॥२३॥

ज्यों रहीम गति दीप की कुल कपूत गति सोइ ।
बारे उजियारो लगै बढै अधेरो होइ ॥२४॥
संपति भरम गँवाइ कै रहत हाथ कछु नाहि ।
ज्यों रहीम ससि रहत है दिवस अकासहि माहि ॥२५॥
अनुचित उचित रहीम लघु करहि बडन के जोर ।
ज्यो ससि के संयोग ते पचवत आगि चकोर ॥२६॥
धनि रहीम जल पंक को लघु निज पियत अघाइ ।
उदधि बडाई कोन है जगत पियासो जाइ ॥२७॥
मागे घटत रहीम पद कितौ करो बड काम ।
तीन पैड बसुधा करी तऊ बामने नाम ॥२८॥
नाद रीझि तन देत मृग नर धन हेत समेत ।
ते रहीम पसु ते अधिक रीझेहु नाही देत ॥२९॥
रहिमन अब वे तरु कहां जिनकी छहां गम्भीर ।
अब बागिन बिच देखियत सेंहुड कंज कबीर ॥३०॥
बिगरी बात बनै नही लाख करो किन कोय ।
रहिमन बिगरे दूध को मथे न माखन होइ ॥३१॥
मथन मथत माखन रहै दही मही बिलगाइ ।
रहिमन सोई मीत है भीर परे ठहराइ ॥३२॥
रहिमन निज मन की व्यथा मन ही राखो गोइ ।
सुनि अठिलैहैं लोग सब बाटि न लैहे कोइ ॥३३॥
रहिमन चुप ह्वै बैठिये देखि दिनन को फेर ।
जब नीके दिन आइ है बनत न लागै बेर ॥३४॥
गहि शरणागत राम की भवसागर की नाव ।
रहिमन जग उद्धार करि और न कछू उपाव ॥३५॥

रहिमन वे नर मरि चुके जे कछु मांगन जाहि ।
उन ते पहले वे मुए जिन मुख निकसत नाहि ॥३६॥
जाल परे जल जात बहि तजि मीमन को मोह ।
रहिमन मछरी नीर को तऊ न छांडत छोह ॥३७॥
धन दारा अरु सुतन मे रहत लगाए चित्त ।
क्यों रहीम खोजत नही गाढे दिन को मित्त ॥३८॥
ससि की सीतल चांदनी सुन्दर सबहि सुहाय ।
लगे चोर चित मे लगी घटि रहीम मन आय ॥३९॥
अमृत ऐसे बचन में रहिमन रिस की गांस ।
जैसे मिसिरिहु में मिली निरस बांस को फांस ॥४०॥
रहिमन मर्नाह लगाइ के देखि लेहु किन कोय ।
नर को बस करिबो कहा नारायन बस होइ ॥४१॥
रहिमन अँसुआ नयन ढरि जिय दुख प्रगट करेइ ।
जाहि निकारो गेह ते कस न भेद कहि देइ ॥४२॥
गुन ते लेत रहीम जन सलिल कूप ते काढि ।
कूपहु ते कहुँ होत है मन काहू को बाढि ॥४३॥
रहिमन मन महाराज के दृग सों नही दिवान ।
जाहि देखि रीझे नयन मन तेहि हाथ बिकान ॥४४॥
शीत हरत तम हरत नित भुवन भरत नहि चूक ।
रहिमन तिहि रवि को कहा जो घटि लखै उलूक ॥४५॥
नहि रहीम कछु रूप गुन नहि मृगया अनुराग ।
देसी स्वान जु राखिए भ्रमत भूख ही लाग ॥४६॥
कागज का सों पूतरा सहजहि में घुर जाइ ।
रहिमन यह अचरज लखो सोऊ खैचत बाइ ॥४७॥

रहिमन कहि इक दीप ते प्रगट सबै दुति होइ ।
तनु सनेह कैसे दुरै दृग दीपक जरु दोइ ॥४८॥
जिहि रहीम चित आपनो कीन्हो चतुर चकोर ।
निशि बासर लागो रहै कृष्णचन्द्र की ओर ॥४९॥
कहि रहीम धन बढ़ घटै जात धनिन की बात ।
घटै बढ़ै उनको कहा घास बेचि जे खात ॥५०॥
जो रहीम होती कहूं प्रभुगति अपने हाथ ।
तो को धौं केहि मान तो आप बड़ाई साथ ॥५१॥
तिहि प्रमान चलिबो भलो जो सब दिन ठहराइ ।
उमड़ि चलै जल पार ते जो रहीम बढ़ि जाइ ॥५२॥
यो रहीम सुख दुख सहत बड़े लोग सह सांति ।
उवत चन्द्र जेहि भांति सो अथवत ताही भांति ॥५३॥
कहि रहीम सम्पति सगे बनत बहुत बहु रीत ।
बिपत कसौटी जे कसे तेई सांचे मीत ॥५४॥
तब ही लग जीबो भलो दीबो परै न धीम ।
बिन दीबो जीबो जग हमहिं न रुचै रहीम ॥५५॥
बड़ माया को दोस यह जो कबहूं घटि जाय ।
तो रहीम मरिबो भलो दुख सहि जियै बलाय ॥५६॥
धनि रहीम गति मीन की जल बिछुरत जिय जाय ।
जियत कज तजि अन्त बसि कहा भौर को भाय ॥५७॥
दादुर मोर किसान मन लग्यो रहै घन माहिं ।
पै रहीम चातक रटनि सरवर को कोउ नाहिं ॥५८॥
अमरबेलि बिन मूल की प्रतिपालत है ताहि ।
रहिमन ऐसे प्रभुहि तजि खोजत फिरिये काहि ॥५९॥

सरवर के खग एक से बाढ़त प्रीति न धीम ।
पै मराल को मानसर एकै ठौर रहीम ॥६०॥
कहि रहीम केती रही केती गई बिलाय ।
माया ममता मोह परि अन्त चले पछिताय ॥६१॥
जे रहीम करिबो हुतो ब्रज को यही हवाल ।
तौ नाहक कर पर धरयो गोवर्धन गोपाल ॥६२॥
दीरघ दोहा अरथ के आखर थोरे आंहि ।
ज्यौं रहीम नट कुण्डली सिमिट कूदि कढि जांहि ॥६३॥
जे रहीम बिधि बड किये को कहि दूषन काढि ।
चन्द्र दूबरो कूबरो तऊ नखत ते बाढि ॥६४॥
अब रहीम घर घर फिरै मागि मधूकरि खांहि ।
यारो यारी छोड़ दो अब रहीम वे नांहि ॥६५॥
एकै साधे सब सधे सब साधे सब जाय ।
रहिमन मूलहि सींचिबो फूलै फलै अघाय ॥६६॥
पात पात को सींचिबो बरी बरी को लौन ।
रहिमन ऐसी बुद्धि से कहो बरैगो कौन ॥ ६७॥
रहिमन धोखे भाव से मुख से निकसै राम ।
पावत पूरन परम गति कामादिक को धाम ॥६८॥
रहिमन छमा बडेन को छोटनि को उतपात ।
कहा विष्णु को घटि गयो भृगु जू मारी लात ॥६९॥
रहिमन कठिन चितान ते चिन्ता को चित चेत ।
चिता दहति निर्जीव को चिन्ता जीवसमेत ॥७०॥
पावस देखि रहीम मन कोइल साधे मौन ।
अब दादुर बक्ता भयो हमको पूछत कौन ॥७१॥
समय लाभ सम लाभ नही समय चूक सम चूक ॥
चतुरन चित रहिमन लगी समय चूक की हूक ॥७२॥

मध्ययुग
रीतिमार्गी शाखा

आलम

बाल-लीला

जसुदा के अजिर बिराजै मन मोहन जू,

अंग रज लागे छबि छाजै सुरपाल की।

छोटे छोटे आछे पग घूंघुरू घूमत घने,

जासों चित हित लागै सोहबा दयाल की॥

आछी बतियां सुनावै छिनु छाड़िबोन भावै,

छाती सों छपावै लागे छोहवा दयाल की।

हेरि ब्रजनारी हारी वारी फेरि डारी सब,

आलम बलैया लीजे ऐसे नन्दलाल की॥

झीनी सी झँगुली बीच झीनो आंगु झलकत,

झुमरि झुमरि झुकि ज्यौं ज्यों झूलै पलना।

घूंघरू घूमत बने घुंघुरा के छोर घने,

कारे घुंघुरारे मानो घन कारे नलना॥

आलम रसाल जुग लोचन बिसाल लोल,

ऐसे नन्दलाल अन देखे कहूं कलना।

बेर बेर फेरि फेरि गोद लें लें घेरि घेरि,

टेरि टेरि गावें गुन गोकुल की ललना॥

पालन खेलत नन्दललन छलन बलि,

गोद लै लै ललना करनि मोद गान है।

आलम सुकवि पल पल मैया पावै सुख॥

पोपनि पियूष सुकरत पयपान है।

नन्द सों कहत नन्द रानी हो महर! सुत,

चंद की सी कलनि बढ़त मेरे जान है।

आइ देख आनन्द सो प्यारे कान्ह आनन मे,
आन दिन आन घरी आन छवि आन है ॥
दैहौ दधि मधुर धरनि धर्यो छोरि खै है,
काम मे निकसि धौरी धेनु धाइ खोलि है ।
धौरि लोटि ऐ है लपटै है लटकन ऐ है,
सुखद सुनै है बैन बतिया अमोलि है ॥
आलम सुकवि मेरे लालन चलन सीखे,
बलन की बाह ब्रज गलिनि मे डोलि है,
सुदिन सुदिन सा दिन गिनैगी माई,
जा दिन कन्हैया मो सो मैया कहि बोलि है ।

यमुना निकुंज वर्णन

अरविद पुज गुज डोर भौर ही बनी,
हलोर ओर थोर ज्यो निसा चलन चदनी ।
निकुज फूल मौलि बेलि छत्र छाह मे धरे,
नटी कलोल लोन पुज सोक सक ददनी ॥
आलम कवित्त चित्र राम के विलासने,
प्रकास वदना करी विलोक बिस्व वदनी ।
समीर मद मद केलि कद दोष दद यो,
आनंद नन्द नन्दक विराजे हस नदनी ॥

लता प्रसून डोल बोल कोकिला अलाप के कि
बोल कोक कठ त्यो प्रचड भृगगुज की ।
समीर वास रास रंग रास के बिलास बास,
पास हस नदिनी हिलोर केलिपज की ॥

आलम रसाल बन गान ताल काल सो,
विहंग बिय बेगि चालि चित्त लाज लुंज की ।।
सदा बसंत हंसमोक ओक देवलोक ते,
बिलोकि रीझि रही पांति भांति सो निकुंज की ।।

शेख़

ईशस्तुति

जथा गुन नाम स्याम तथा न सकति मोहि,
सुमिरि तथापि कछु कृष्ण कथा कहिए।
गोकुल की गोपी कि वे गाइ कि वे ग्वारी की वे,
वन की गुलीला यहै चरचारि वहिए॥
कुंजन के कीट वैजु जमुना के भीट तिनै,
पूजिये कपिल ह्वै कविलास लहिए।
सेख इस रोप रुख दोपनि को मोप है,
जो एकौ घरी जनम में घोष मांझ रहिए॥

मिटि गये मौन पौन साधन की सुधि गई,
भूली जोग जुगति बिसारचो तप बन को।
सेख प्यारे मनको उजारो भयो प्रेम नेम,
तिमिर अज्ञान गुन नास्यो बालपन को॥
चरन कमल ही की लोचन में लोच धरी,
रोचन ह्वै राच्यो सोच मिटचो धाम-धन को।
सोक लेस नेक हूं कलेस को न लेस रह्यो,
सुमिरि श्री गोकलेस गो कलेस मन को॥

सीता सत रखवारे तारा हूं के गुन तारे,
तेरे हित गौतम को तिरियाऊ तरी है।
हौं हूं दीनानाथ हौं अनाथ पति साथ बिनु,
सुनत अनाथिनि के नाथ सुधिकरी है॥

डोले सुर आसन दुसासन की ओर देखि,

अंचल के ऐंचन उघारी और धरी है।

एक तें अनेक अंग धाई सेन सारी संग,

तरल तरंग भरी गगं सी ह्वै ढरी है॥

गंगावर्णन

नीके न्हाइ धोइ धुरि पैठो नेकु बैठो आनि,

धुरी जटि गई धूरिजटी लौं भवन में।

पैन्हि पैठ्यो अम्बर सु निकस्यो दिगंवर है,

दृग देखौ भाल में अचंभो लाग्यो मन में॥

जैसो हर हिमकर धरे हैं गरे गरल,

भारी घर डर बर छाड्यो एक छन में।

देखे दुनि ना परत पाप रेते पा परत

साप रंगे सुरसरि सांप रंग तन में॥

ताज

कृष्ण-प्रेम

छैल जो छबीला सब रंग में रंगीला,
बड़ा चित्त का अड़ीला कहूं देवतों से न्यारा है।
माल गले सोहै नाक मोती सेत सो है कान,
कुंडल मन मोहै लाल मुकुट सिर धारा है॥
दुष्ट जन मारे संत जन रखवारे ताज,
चित हित वारे प्रेम प्रीति नरवारा है।
नंद जू का प्यारा जिन कंस को पछारा,
वह वृंदावनवारा कृष्ण साहेब हमारा है॥

ध्रुव से प्रह्लाद गज ग्राह से अहिल्या देख,
सेवरी और गीध औ बिभीषन जिन तारे हैं।
पापी अजामिल सूर तुलसी रैदास कहूं,
नानक मलूक ताज हरि ही ने प्यारे हैं॥
धनी नामदेव दादू सदना कसाई जानि,
गनिका कबीर मीरा सेन उर धारे हैं।
जगत को जीवन जहान बीच नाम सुन्यों
राधा के बल्लभ कृष्ण वल्लभ हमारे हैं॥

काहू को भरोसो बेद चारहू जो पढ़ै हौन,
काहू को भरोसो गंगा न्हाए सहस्रधार को।
काहू को भरोसो सब देवन को पूजे ताज,
काहू को भरोसो विधि शंकर उदार को॥

काहू को भरोसो मनि पाये मिले पारस को,
काहू को भरोसो सूरवीरन के लार को।
तारन तरन कृष्ण सुने जो जहान बीच,
मो कों तो भरोसो एक नन्द के कुमार को ॥

काहू को भरोसो बद्रीनाथ जाय पांव परे,
काहू को भरोसो जगन्नाथ जू के भात को।
काहू को भरोसो काशी गया में ही पिंड भरे,
काहू को भरोसो प्राग देखे वट-पात को ॥
काहू को भरोसो सेतबन्ध जाय पूजा करे,
काहू को भरोसो द्वारावती गये जान को।
काहू को भरोसो "ताज" पुष्कर में दान दिये,
मों को तो भरोसो एक नन्द जू के तात को ॥

यारी साहिब

निर्गुण स्तुति

जोत सरूपी आतमा, घटघट रह्यौ समाय।
परमतत्व मन भावनो, नेक न इतउत जाय।।
रूप रेख बरनौ कहा, कोटि सूर परगास।
अगम अगोचर रूप है, पावे हरिको दास।।
नैनन आगे देखिये तेज पुंज जगदीस।
बाहर भीतर रमि रह्यो सो धरि राखो सीस।।
बाजत अनहद बांसुरी, तिरबेनी के तीर।
राग छतीसौ ह्वै रहे, गरजत गगन गंभीर।।
आठ पहर निरखत रहो, सनमुख सदा हजूर।
कह यारी घर ही मिलै काहे जाते दूर।।
धरति अकास के बाहर "यारी" पिय दीदार।
सेत छत्र तहं जगमगै, सेत फटिक उजियार।।
तारनहार समर्थ है, और न दूजा कोय।
कह "यारी" सतगुरु मिलै, अचल अमर सो होय।।

झूलना

गुरु के चरन की रज लै के, दौड़ नैन के बीच अंजन दिया,
तिमिर मेटि उंजियार हुआ, निरंकार पिया को देख लिया।।
कोटि सूरज तहं छिपे घने, तीनि लोक धनी धन पाइ पिया।
सतगुरु ने जो करी कृपा, मरि के यारी जुग जुग जिया।।
दोउ मूंदि के नैन अंदर देखा, नहिं चांद सूरज दिन राति है रे,
रोसन समा बिनु तेल बाती, उस जोति सो सबै सिफाति है रे।।

गोन मारि देखो आदम, कोउ अवर नाहि संग साथि है रे,
यारी कहै तहकीक किया, तू मलकूल मौत की जानि है रे ॥

उपदेश

गहने के गढ़े तें कहीं सोनो भी जातु है।
सोनो बीच गहनो और गहनो बीच सोन है।
भीतर भी सोनो और बाहर भी सोन दीसै।
सोनो तो अचल अंत गहनो को मीच है।
सोन को तो जानि लीजै गहनो बरबाद कीजै।
यारी एक सोना ता में ऊंच कवन नीच है ॥

कवित्त

आंधरे को हाथी हरि हाथ जाको जैसे आयो।
बूझो जिन जैसो तिन तैसोई बनाया है ॥
टका टोरी दिन रैन हिये हू के फूटे नैन।
आंधरे को आरसी में कहा दरसायो है ॥
मूल की खबरि नाहि जा सों यह भयो मुलुक।
वा को बिसारि भोंदू डोरे अरुझायो है ॥
आपनो सरूप रूप आपु मांहि देखै नाहि।
कहै यारी आंधरे ने हाथी कैसो पायो है ॥

नज़ीर

कृष्ण की बाल लीला

यारो सुनो यह ऊधो कन्हैया का बालपन ।
और मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन ।।
मोहनस्वरूप कृत्य करैया का बालपन ।
बन बन के ग्वाल गऊ चरैया का बालपन ।।
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन ।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन ।।

जाहिर में गोकल नन्द यशोदा के आप थे
वरना वह आपी माई थे औ आप बाप थे ।
परदा में बालपन के यह उनके मिलाप थे ।
ज्योतिस्वरूप कहते जिसे सो वह आप थे ।।
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन ।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन ।।

होता है यों तो बालपन हर निफल का भला ।
पर उनके बालपन में तो कुछ औरी भेद था ।।
इस भेद की भला जी किसी को खबर है क्या ।
क्या जाने अपने खेलने आये थे क्या कला ।।
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन ।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन ।।

बालक हो बिरजराज जो दुनिया में आ गये ।
लीला के लाख रंग तमाशे दिखा गए ।।

इस बालपन के रूप में कितनों को भा गए।
इक यह भी लहर थी कि जहां को जता गए॥
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

परदा न बालपन का वह करते अगर जरा।
क्या ताब थी जो कोई नजर भर के देखता।
झाड़ और पहाड़ देते सभी अपना सिर झुका।
पर कौन जानता था जो कुछ उनका भेद था॥
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

मोहन मदन गोपाल करै व्यसन मन हरन।
बलिहारी उनके नाम पर मेरा यह तन बदन॥
गिरिधारी नंदलाल हरीनाथ गोवरधन।
लाखों किये बनाव हजारों किये जतन॥
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

अब घुटनियों का उनके मैं चलना बयां करूं।
या मीठी बातें मुंह से निकलना बयां करूं॥
या बालकों में इस तरह पलना बयां करूं।
या गोदियों में उनका मचलना बयां करूं।
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

पाटी पकड़ के चलने लगे जब मदन गोपाल ।
धरती तमाम हो गई एक आन मे निहाल ॥
बासुकि चरन छुवन को चले छोड़ कर पताल ।
आकास पर भी धूम मची देख उनकी चाल ॥
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन ।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन ॥

जब पाओं पै चलने लगे बिहारी नवलकिशोर ।
माखन उचक्के ठहरे मलाई दधी के चोर ॥
मुह हाथ दूध मे भरे कपड़े भी सराबोर ।
डाला तमाम बिरज की गलियों मे अपना शोर ॥
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन ।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन ॥

करने लगे यह धूम जो गिरिधारी नन्दलाला ।
इक आप और दूसरे साथ उनके ग्वालबाला ॥
माखन दधी चुराने लगे घर मे जा बजा ।
जिस घर को खाली देखा उसी घर मे जा छिपा ॥
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन ।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन ॥

कोठी मे होवे फिर तो उसीको ढंढोरना ।
मटका हो तो उसीमे भी जा मुख को बोरना ॥
ऊचा हो तो भी कांधे पै चढ़ कै न छोड़ना ।
पहुंचा न हाथ तो उसे मुरली मे फोड़ना ॥

ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

गर चोरी करते आगई ग्वालन कोई वहां।
और उसने आ पकड़ लिया तो उससे बोले वां॥
मैं तो तेरे दधी की उड़ाता था मक्खियां।
खाता नही मैं उसको निकाले था चींटियां॥
ऐसा था बांसुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहू मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

इक रोज मुह मे कान्ह ने माखन छिपा लिया।
पूछा जसोदा ने तो वही मुह बना दिया॥
मुह खोल तीन लोक का आलम दिखा दिया।
इक आन में दिखा दिया और फिर भुला दिया।
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मै कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

सब मिल के यारो कृष्ण मुरारी की बोलो जय।
गोविंद छैल कुंजबिहारी की बोलो जय॥
दधि चोर गोपीनाथ बिहारी की बोलो जय।
तुम भी नजीर कृष्णबिहारी की बोलो जय॥
ऐसा था बासुरी के बजैया का बालपन।
क्या क्या कहूं मैं कृष्ण कन्हैया का बालपन॥

दीन दरवेश

बंदा जान मैं करौं, करनहार करतार ।
तेरा किया न होयगा, होगा होवनहार ।।
होगा होवनहार बोझ नर यौंहि उठावे ।
ज्यों विधि लिख्यो ललाट प्रतक्ष फल तैसा पावे ।।
कहै 'दीन दरवेश' हुकम से पाल हलन्दा ।
करनहार करतार क्या तू करिहै ऐ बन्दा ।।

माया माया करत है, खरच्या खाया नांहि ।
सो नर ऐसे जांहिगे, ज्यों बादल की छांहि ।।
ज्यों बादल की छांहि जायगा आया ऐसा ।
जाना नहिं जगदीश प्रीति कर जोड़ा पैसा ।।
कहैं 'दीन दरवेश' नांहि वोइ अम्मर काया ।
खरच्या खाया नांहिं करत नर माया माया ।।

गड़े नगारे कूच के, छिन भर छाना नांहि ।
को है आज को काल को पाव पलक के मांहि ।।
पाव पलक के मांहि समय ले मनवा मेरा ।
धरा रहे धनमाल होयगा जंगल डेरा ।।
कहै 'दीन दरवेश' गर्व मत करे गुमारे ।
छिन भर रहना नांहि कूच के गड़े नगारे ।।

हिंदू कहें सो हम बड़े, मुसलमान कहें हम्म ।
एक मुंग की दो फाड़ हैं, कुण जादा कुण कम्म ।।

कुण जादा कुण कम्म कबी करना नहीं कजिया।
एक भगत हो राम दुजो रहमान से रजिया॥
कहै 'दीन दरवेश' भाव क्या भावइयों का।
सब का साहब एक एक ही मुसलिम हिंदू॥

आधुनिक काल
बहुमुखी अनेक शाखाएँ

सैयद अमीर अली मीर

उलाहनापंचक

हिमगिरि

गर कहीं जीने के काबिल हम रहे,
तो ढहाकर शृंग हिमगिरि दे दबा।
शत्रु अथवा जो हमारे हों यहां,
पेट में अपने उन्हें तू ले दबा॥

गङ्गा

तारीफ सुनते हैं तुम्हारी हम बहुत,
सारथक करती नहीं क्यों नाम को।
मात गंगे पाप अरि को दो बहा,
शुद्ध कर दो हिंद के हुक्काम को॥

हिंद सागर

हिंद सागर तुम हमारे गार्ड थे,
हाय! की तुमने मगर कैसी दगा।
जब घुसा था शत्रु छाती चीर कर,
टांग धर पाताल को देते भगा॥

भारत भूमि

वीरप्रसवा तू भरत की भूमि है,
नाम को कैसा दबा तू ने दिया?
सुत दुखी पर हैं विरोधी सब सुखी,
देख कर खुद खोल आंखें क्या दिया ?

विश्वरक्षक

विश्वरक्षक क्या नही हम विश्व में।
क्यों नहीं देते हमें हो तुम स्वराज?
गैर हैं आजाद घर में हम गुलाम,
क्या यही इंसाफ है बन्दे नवाज।

दशहरा

आ गया प्यारा दशहरा छा गया उत्साह बल
मातृपूजा शक्तिपूजा वीरपूजा है विमल॥
हिंद में वह हिंदुओं का विजय उत्सव है लला।
शरद की इस सुऋतु में है खड्ग पूजा धाम धाम॥
यह दशहरा क्षत्रियों का प्राण जीवन पर्व है।
हिद के इतिहास में इस पर्व का अति गर्व है।
वीर पुरुषों को यही संजीवनी का काम दे।
जीत दे फिर कीर्ति दे फिर मान दे धनधाम दे।
थी विजय दशमी यही जब राम ने दल साज कर
गिरि प्रवर्षण से चढ़ाई की थी लंकाराज पर॥
मार रावण को वहां उद्धार सीता का किया।
और लंका का विभी पण को तिलक माथे किया॥
उस समय से इस दशहरे का बड़ा सम्मान है।
यान गुण का पद प्रवर्तक क्षत्रियों का प्राण है।
आज करते है विजय की कामना सब वीरवर।
जांचते हैं दृष्टि कर गज अश्व दल हथियार पर
श्रेय विजया से भरे इतिहास के बहु पत्र है।
आज भी प्रतिबिंब उसका देखते हम अन्य है।

जो सबक लेना हमें उससे उचित लेते नहीं ।
स्वार्थ पशु बलि त्याग की तलवार से देते नहीं ।।
इंद्रियों की वासना ही है असुर शंका नहीं ।
ज्ञानशर से जीतते हैं लोभ की लंका नहीं ।।
हंत जो कुविचार रावण है उसे तजते नहीं ।
क्या कहें सुविचार श्रीवर राम को भजते नहीं ।
नाशकर कुविचार का सद्बुद्धि सीता लाइये ।
नृप विभीषण की तरह संतोष को अपनाइये ।।
शांत हो प्यारी अवध फिर राज्य उसका कीजिये ।
'मीर' विजया की विजय का इस तरह यश लीजिये ।।

अमीरअली

अन्योक्ति-सुमन

मैना तू बनवासिनी परी पींजरे आन ।
जान दैवगति ताहि में रहे शान्त सुख मान ।।
रहे शान्त सुख मानि बान कोमल तें अपनी ।
सब पक्षिन सरदार तोहि, कविकोबिद बरनी ।।
कहै "मीर" कवि नित्य बोलती मधुरै बैना ।
तो भी तुझ को धन्य बनी तू अजहूँ मैना ।।

तोता तू पकड़ा गया जब था निपट नदान ।।
बड़ा हुआ कुछ पढ लिया तौ भी रहा अजान ।।
तौ भी रहा अजान ज्ञान का मर्म नहीं पाया ।
जीवन पर के हाथ सौंप निज घर बिसराया ।।
कहै 'मीर' समुझाय हाय तू अब लौं सोता ।
चेता जो नहिं आप किया क्या पढ के तोता ।।

बगला बैठा ध्यान में प्रातः जल के तीर ।
मानों तपसी तप करै मल कर भस्म शरीर ।।
मल कर भस्म शरीर तीर जब देखो मछली ।
कहैं मीर ग्रसि चोंच समूची फौरन निगली ।।
फिर भी आव शरण बैर जो तज के अगला ।
उसके भी तू प्राण हरे रे छी ! छी! बगला ।।

कैदी होने के प्रथम था अलि मीर स्वतन्त्र ।
उसे पवन ने छल लिया कह के मोहन मन्त्र ।।

कह के मोहन मन्त्र तन्त्र सा फिर कुछ करके ।
उसे गई ले खींच पास में गहरे सर के ॥
पड़ा प्रेम में अचल वहां लकड़ी का भेदी ।
था जो कोमल कमल बनाया उसने कैदी ॥

जाने कीन्हों शमन है सतमतंगगनमान ।
हाय ! दैववश सिंह सो परचौ पींजरे आन ॥
परचौ पींजरे आन स्वान के गन ढिग भूकैं ।
बिहँसैं ससा सियार कान पै आके कूकैं ॥
मीर बात है सत्य लोक में कहिगे स्याने ।
कापै कैसो समय कबै परिहै को जाने ॥

कोयल तू मन मोह के गई कौन से देस ।
तो अभाव में काग मुख लखनी परो भदेस ॥
लखनी परो भदेस बेस तो ही सो कारो ।
पै बोलत है बोल महा कर्कस कटु न्यारो ॥
कहें 'मीर' हे दैव काग को दूर करो दल ।
लाओ फर वसन्त मनोहर बोलें कोयल ॥

मौलवी लतीफ हुसेन नटवर

स्मृति या विस्मृति

सदियां बीतीं, किन्तु न बतियां उन दिन रनियां की भूलीं।
जिनमें प्रकृति, प्रिया रसिमानी रंगरलियों पर थी फूलीं॥

कली कली विकसित हो, जिस पर करती थी यौवन का दान।
उस नटखटी माधुरी मुरली पर, उत्सुक हैं अब भी कान॥

सखी सखाओं की वह क्रीड़ा, गैया, मैया का आव्हान।
करते हैं हियपर पर मेरे, आंख मिचौनी के अनुमान॥

व्रज वनिता की विरह व्यथा से, गूंज रहा अब भी आकाश।
किस छलिया की मधुर मूर्ति का, आता है अभिनव आभास॥

जड़ चेतन वृक्षों पत्तों में, रज-रज में इक गुप्त प्रकाश।
प्रगटित करता है यह किसका, छिपा हुआ उज्ज्वल इतिहास॥

री वृन्दा! तू सत्य बतादे, क्या है– यह सब माया है?
या स्मृति है? अथवा वह कवि की कल्पित विस्मृत छाया है?

दाराब खां अभिलाषी

फूलों का हार

निशे मधुमय है तेरा प्यार ॥
सहन नहीं कर सकता दिन जब पीडाओं का मारा,
स्वर्ण वर्ण से हार लिखाकर कहता बारम्बार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

उज्ज्वल खिलता हुआ चन्द्र है तेरा ही मुखचन्द्र ।
और तारिकाओं से अंकित है अंचल सुकुमार ॥
लेते हैं गोदी में तेरी जीव जन्तु विश्राम,
इस से बढ़ कर देवि और क्या किसे चाहिये प्यार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

रंगती है पाटल प्रसून से नित ऊषा के गाल ।
तेरी कृपा कोक से बनता है मादक संसार ॥
भग्न हृदय के लिये एक है स्वप्नों की मधु माल ॥
मिलती तू ! तममें प्रियतम से और लुटाती प्यार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

पल पल में रंगती है जग की आशाओं का रूप ।
उसी रूप पर लाती है तू अमल ओसका हार ॥
मैं भी लाया हूं पहिनाने मधु फूलों का हार ।
हंसी न रोक सकी हैं कलियां तेरी ओर निहार ॥
निशे ! मधुमय है तेरा प्यार ॥

संध्या का आगमन

प्राची दिशि से दिनकर का, इकले रथ पर चढ़ आना ।
धीरे-धीरे पश्चिम में, उस लाली में लुट जाना ॥
संध्या की स्वर्ण किरण का, फिर बदला रूप निराला ।
छबि सिमिट गई सूरज की, सरकाया घूंघट काला ॥

——

सैयद् कासिम अली

पथिक से

अरे पथिक ! क्यों पूछ रहा है मेरी करुण कहानी ?
क्यों मैंने निर्जन कानन में, है रहने की ठानी ॥
ग्रीष्म, शीत, वर्षा के दिन औ यह अंधियारी रातें ।
आंधी लपटें क्यों सहता हूं, सारे जग की घातें ॥

निर्जन बन में घर क्यों है मेरा गम खा भूख भगाता ।
क्यों नयनों के सारे जल को पीकर प्यास बुझाता ॥
पूछोगे ही पथिक हमारी सारी करुण कथाएं ।
सहीं आज तक क्यों हैं मैंने भारी विरह व्यथाएं ॥

अरे इसी निर्जन कानन में वह मन मोहन मेरा ।
छिपा हुआ है खोज थका मैं हाय जिसे बहुतेरा ॥
खोज रहा हूं उसे आज भी करता हुआ तपस्या ।
देख रहा हूं कब सुलझेगी मेरी भाग्य समस्या ॥

टिप्पणी

जगनिक

पृष्ठ १

हरकारा—चिट्ठी ले जाने वाला

हकीकति—वास्तविक बात

रारि—राड, झगड़ा

धावन—हरकारा, दूत

अरगाय—चुप्पी के साथ अलग हो कर

समुहा—संमुख, सामने

साइति—साइत, शुभ घड़ी

साढ़े साती—शनिग्रह की साढ़े सात वर्ष साढ़े सात मास या साढ़े सात दिन आदि की दशा

पृष्ठ २

सिगरे—सकल, सब

पृष्ठ ३

भहराय—डोलकर

खांडा—तलवार

पृष्ठ ४

गुर्ज—गदा, सोटा

बराय—बचकर

खाले—नाले

पृष्ठ ५

सांगि—एक प्रकार की बरछी

सिरोही—तलवार

औझड़—लगातार

चंद बरदाई

पृष्ठ ६

मंस—मांस

अरधंग-अर्धांग

करवत—आरा

ध्रम—धर्म

लषिय—लक्षित

पृष्ठ ७

सुषंडिय—सुखंडिय, खंडित कर के

जुज्झ—युद्ध

नद्द—नर्द, बजे

निसान—नगाड़ा, धौंसा

अमागह—अमार्ग से

लष्ष—लक्ख, लाख

मद्द—मद

भद्द—भाद्र मास

रुद्द—रुद्र

पष्षर—पाखर, लोहे की वह झूल जो लड़ाई में हाथी या घोड़े पर डाली जाती है

सनाह—कवच

मइमान—मदमत्त

मीर—प्रधान, सेनापति

धरम—धर्म
सांइय—स्वामी, ईश्वर
वषत्त—वक्त, समय
सबद्दय—शब्द कर के
पंषि—पक्षी
ब्रंन—वर्ण
क्रंन—कर्ण

पृष्ठ ८

सुसद्धिय—अच्छी प्रकार साफ कर
सुअ—सुत
सुसथ—सुस्थ, स्वस्थ

तुलसीदास

पृष्ठ ११

भृगुपतंगा—भृगुवंशरूपी कमल के सूर्य।
बाज-लुकाने—जैसे बाज की झपट देख कर बटेर छिपे हों।
रिसराते—क्रोध से रक्त (लाल)
जेहि-खुटानी—जिस की ओर वे सहज स्वभाव से हित समझ कर भी देख लेते हैं वह समझता है कि मानों मेरी आयु पूरी हो गई है।
ढोटा—पुत्र
मारमदमोचन—कामदेव के मद को नष्ट करने वाला।
अनत—अन्यत्र

पृष्ठ १२

बिलगाउ—अलग हो जाय
त्रिपुरारि—शिव जी
कोही—क्रोधी

पृष्ठ १३

महिदेव—ब्राह्मण
गरभन-घोर—मेरा परशु गर्भ के बालको को भी मार डालने वाला बडा भयंकर है।
इहा-नाही—यहा कोई कुम्हडे (कूष्माण्डनिहर) की बतिया। नही है जो तर्जनी अंगुली देख कर मर जाती है। नन्हे-निहर को अंगुली दिखाते ही वह मर जाता है।
पा—चरण
भानु-कलंकु—सूर्यवंशरूपी पूर्ण चंद्रमा का कलंक है।
खोरि—दोष
हटकहु—मना कर दो
तुम्ह बोलावा—आप तो मानो काल को साथ ही लेते आए है और उसे बारंबार मेरे लिए बुला रहे है।

पृष्ठ १४

मुनि-सूझ—परशुराम को हरी हर सूझती है। अथवा यहां हरि विष्णु आई अड़े है। सामान्य

शत्रु नही स्वय विष्णु है। अथवा हरि अरई हरा ही हरा दीखता है। नहीं जानते कि अब सूखने का मौका आ गया। अथवा स्वय हरि शत्रु के रूप में दीख पड़ते है।

अजगव--महादेव का धनुष

अब-खोली—अब किसी व्यवहारी (साहूकार) को बुला लाइए।

सैन—इशारा

लखन उतर भानु—लक्ष्मण की उत्तर रूपी आहुति पाकर परशुराम की क्रोधरूपी अग्नि को बढ़ते देख रघुवंश के सूर्य रामचंद्र जल के समान ठंडे बन कर बोले।

अयाना—अज्ञान

अचगरि—नटखटी

समसील—समस्वभाव

पृष्ठ १५

जुडाने—ठंडे हुए।

काल-नही—यह दुधमुहाँ नही, इसके मुह मे कालकूट विष है।

बैठिये-पिराने—खडे खड़े पांव दुखने लगे होंगे।

मष्टकरहु—बस चुप करो

नयन तरेरे—आंखों से डाटा

अनैसे—टेटेय

पृष्ठ १६

बहइ न हाथू—हाथ नही चलता

गर्भ-स्रोर—इस कुठार की भयंकर गति को सुनते ही राजाओं की स्त्रियों के गर्भ गिर जाते है।

बाइ-कृपा—वाह री कृपा। जैसी कृपा वैसी ही आपकी मूर्ति है।

करहु किन—क्यों नहीं करते।

गुनहु-लषनकर—अपराध तो लक्ष्मण का और क्रोध हम पर। क्या कही सीधेपने से भी बड़ा कोई दोष है।

पृष्ठ १७

सरवर—बराबरी

देव एक तुम्हारे—देव! हमारा धनुष ही एक गुण है पर आपके परम पवित्र नौ गुण हैं। (नौ गुण शम, दम, तप, शौच, संतोष ऋजुता, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिकता), अथवा हमें तो एक चाप वाले धनुष मात्र का बल है, पर आपको ९ तार वाले यज्ञोपवीत का बल है। अथवा हमारा धनुष तो एक गुण है (शत्रुवध) आपका यज्ञोपवीत नौ गुण वाला है। नौ का गुण ऐसा है कि १ से

गुणें तो ९, २ मे गुणं तो १८। ९ के गुण मे ९ ही बने रहते हैं। मारांश यह है कि आप कुछ भी करें, ब्रह्म तेज के आगे सब ज्यों का त्यों है।

चतुरंग—चतुरंगिणी, रथ, हाथी, घोड़े और प्यादे।

समरजग्य—युद्ध रूपी यज्ञ।

विप्र के भोरे—ब्राह्मण के भरोसे

अहमिति—मानो सारे जगत को जीत लिया, ऐसा अहंकार करके खड़ा है।

प्रचारई—नौते।

सकाना—शंका करना (डरना)

विप्रवंस—ब्राह्मणवंश का यह स्वभाव है कि जो आप से डरे, वह और सब जगह से निडर हो जाता है।

पृष्ठ १८

रघुवंस-भानू—रघुवंशरूपी कमल-वन के सूर्य।

गहन कृसानू—गहरे राक्षस कुल को जलाने के लिए अग्निस्वरूप।

वचन-नागर—वचनों की रचना में अति निपुण आपकी जय हो।

महेस'हंसा—महादेव के मनरूपी मानसरोवर के हंस

पृष्ठ १९

सुनी'राती—देवताओं की प्रार्थना मुनकर सरस्वती खड़े खड़े पछताने लगी कि हाय! मैं कमल के वन के लिए पाले की रात बनती हूं।

खारी—बदनामी

विबुध-पोची—देवों की बुद्धि पोच है।

गई फेरी—सरस्वती उसकी बुद्धि को फेर गई।

देखि-भांति—जिस प्रकार कुटिल भीलनी शहद के छत्ते को लगा देख कर मौका ताकती है कि इसको किस प्रकार लूं।

उसासू—लम्बे सांस

गालु बड़ तोरे—तेरे बड़े गाल हैं, तू बड़ी बढ़कर बोला करती है।

गालु करब—मुंहजोरी करूं

पृष्ठ २०

भयउ-दाहिन—कौसल्या के लिये विधाता बहुत दाहिना (अनुकूल) है।

नींद-तुराई—तुम्हें नीद और तोशक तकिये से सजी सेज प्यारी लगती हैं।

रहु अरगानी—चुप रहो

रउरेहिं—आपको

पृष्ठ २१

रहसी-काबी—दासी मथरा अपना दॉव लगा समझ कर प्रसन्न हो गई।

सजि-बोली—बहुत प्रकार की बात बना (छील छाल) किसी तरह अपने ऊपर भरोसा जमवा कर मंथरा आगे ऐसे वचन बोली कि मानो उन वचनों से उस समय अयोध्या के लिये साढ़साती (साढ़े सात वर्ष की शनि की दशा) आ गई है।

भानु-सुभाऊ—जैसे सूर्य कमल के समूह को पालने वाला है, पर बिना पानी वही सूर्य उन्ही कमलों को जला डालता है वैसे ही कोसल्या तुम्हारी जड़ को उखाड़ना चाहती है। उपाय रूपी श्रेष्ठ जल से इसे रोको।

सवति—सौंते

मोह सुठि नीका—मुझे और भी अच्छी लगती है।

सुठि—सुष्ठु

पृष्ठ २२

कुबरी चापी—तब कूबरी मंथरा ने अपनी जीभ दांतों के नीचे दबा ली।

जिमि-कुकाठू—जिस प्रकार गठीला टेढ़ा लक्कड़ नमता नहीं इसी तरह कैकेयी अपने हठ से नहीं हटी।

कुबरी-टेई—कबरी ने कैकेयी को कुबलि का पशु बना कर अपनी कपट रूपी छुरी को हृदयरूपी पत्थर पर टेया (शान दी)।

पृष्ठ २३

माहुर—विष

याती—धरोहर

चषपूतरी—आंख की पुतली

पृष्ठ २४

दलकि-तोरु—यह सुनते ही उसका कठोर हृदय दहल उठा मानों किसी पके हुए बालतोड़ को ठेस पहुंची हो।

ऐसउ-गोई—ऐसी पीडा को भी कैकेयी ने हंस कर छिपाया

पृष्ठ २६

आगे-बनाई—राजा ने अपने समक्ष क्रोध से जलती हुई कैकेयी को देखा। मानों यह क्रोधरूपी तलवार को म्यान से बाहर निकाल कर खड़ी है, जिस तलवार पर कुबुद्धिरूपी मूठ है और निष्ठुरता धार है और कूबरी मंथरा मानों उसकी

धार धरी गई है।

पृष्ठ २७

छूछे—निष्फल

पाप जोई—वह नदी पापरूपी पहाडी से पैदा हुई है, उसमें क्रोधरूपी जल भरा है, वह देखी नहीं जाती।

दोउ-प्रचार—दोनों वर इस नदी के किनारे है, कठिन हठ ही इसकी धारा है, मथरा के वचनों का प्रचार ही भंवर है।

हसब ठठाई—खिलखिलाकर हसना और गाल फुलाना दोनों काम एक साथ कैसे हो सकते है।

पृष्ठ २८

होइ-ताई—शूरता भी चाहते हो और कुशलक्षेम भी चाहते हो।

गोइ—छिपा कर

मारसि-जामी—तू बाज के लिये गौ को मारना चाहती है। अथवा सिह के बच्चे (नहारुह) के लिये गौ को मारना चाहती है।

भिनुसारा—प्रातःकाल

पृष्ठ २६

मतिभाऊ—सद्भाव

पृष्ठ ३३

खभारु—चिन्ता

प्रतीत—भरोसा

कोटि-कुटिलाई—करोड़ों प्रकार की कुटिलताओं की कल्पना करके अथवा करोडों प्रकार की कुटिलताएं करके (कल्प—करना)

गजाली—हाथियों की पंक्ति

ससि-समान—चद्र ने देवों के गुरु बृहस्पति की स्त्री तारा के साथ प्रेम किया था। नहुष ने अपनी पालकी ब्राह्मणों से उठवाई थी। राजा बेन जन्म से ही पतित तथा अभिमानी था। पिता के दुखी होकर वन चले जाने पर, गद्दी पा उसने प्रजा पर अत्याचार किये। अत मे ब्राह्मणों ने उसे शाप देकर भस्म कर दिया।

पृष्ठ ३४

रिपु-काऊ—कभी किसी को शत्रु और ऋण नाम के लिए भी शेष नही रखने चाहिए।

पृष्ठ ३५

जौ-सेई—जिन्होंने साधुसभा का सेवन नहीं किया वे राजमद का आचमन लेते ही मतवाले हो जाते है।

तिमिर—चाहे अंधेरा तरुण (मध्यान्ह के) सूर्य को निगल

जाय, आकाश मार्ग बादलों में मिल जाय, अगस्त्य चुल्लू भर पानी में डूब जाय और पृथ्वी अपनी स्वाभाविक क्षमा को छोड़ दे।

सगुनषीर—सद्गुणरूपी दूध और अवगुणरूपी जल को मिला कर ब्रह्मा सृष्टि की रचना करता है।

अंगद-रावण-संवाद

बिरंचि—ब्रह्मा

पृष्ठ ३६

किवा—अथवा

जगदंबा—जगत की माता

दसन—दशन, दांत

आरत—आर्त, दुखी

कपिपोत—बंदर का बच्चा

अनल—अग्नि, देखो अनिल

बोरा—डुबाया

बिसरना—फटना।

त्रिय—स्त्री

नल—नट

पृष्ठ ३७

समरारूढ़ा—लड़ाई के लिये चढ़ने वाला (समर+आरूढ़)

जारा—जलाया

कीस—बंदर

पुर दाहा—नगर का जलाना

धावन—दूत

कोह—क्रोध

पृष्ठ ३८

माखा—क्रोध

हयमाला—घुड़माल

पृष्ठ ३९

मुराई—शूरता

साला—शल्य, बाण

अलीक—सत्य

खर्व—छोटा, तुच्छ

उपल—पत्थर

रूखा—वृक्ष

बयर—बैर

पृष्ठ ४०

चौगान—पोलो का खेल

परजरा—प्रज्वलित हुआ

बसीठ—दूत

पृष्ठ ४१

इद्रजालि—माया दिखाने वाला

बतबढ़ाव—बात बढ़ाना

गजारि—शेर

बरजोरा—जबरदस्ती

मीजत—दबाना है, मसलना है

पृष्ठ ४२

कपिंद्र—कपींद्र

पबारे—भेज दिए

लूक—लपट

पृष्ठ ४३

लबारा—गप्पी,लप्फाड़िया

मुरअराती—देवों के शत्रु

उरगारी—गरुड़

परचारे—चैलेंज करने पर

पृष्ठ ४४

निअराना—पास आया हुआ

तुलसी-सतसई

सुरतरु—पारिजात

पृष्ठ ४५

निरबान—निर्वाण, मोक्ष

जोय—स्त्री

गाडर—भेड

पृष्ठ ४६

सांसति—घोर कष्ट

वारिधर-धार—बादल का पानी

करिया—मल्लाह

अव्यय—अक्षय

पृष्ठ ४७

सात्विक—सत्व गुण (प्रकाश) वाला

राजस—रजोगुण (कर्म) वाला

तामस—तमोगुण (अंधकार)वाला

सोग—शोक

असथूल—अस्थूल

अंब—आम

रज—पृथ्वी

अप—पानी

अनल—अग्नि

अनिल—वायु

नभ—आकाश

अयन—घर, आश्रम (चाल)

अध्यैन—अध्ययन

पृष्ठ ४८

बरनात्मक—वर्णात्मक, अक्षरमय

अकल—कलारहित

बिबुध—बुद्धिमान

मृगजल—मृग तृष्णा

वाजी—घोड़ा

अधवर—आधा रास्ता

नरनिसुता—यमुना

न्यग्रोध—वट

पृष्ठ ४९

उरध...ऊर्ध्व, ऊपर

जातरूप—सोना

रजनीस—चंद्रमा

धरा—पृथ्वी

दुरत—दूर होता है, छिपता है

सीता-रमन—राम

मृनमय—मट्टीका

पृष्ठ ५०

स्वरनकार—सुनार

पृष्ठ ५१

अनुहार—अनुकाम. उसकी इच्छा से

अघ—पाप

निसेनी—पीढी, निश्रेणी

क्रुसानु—अग्नि

पृष्ठ ५८

मधूकरी—वह भिक्षा, जिसमें केवल पका अन्न लिया जाता है

चारु—सुंदर

मोहमहोदधिमीन—मोह रूपी समुद्र की मछली

गोंड—एक असभ्य जाति

पलीता—तोप की बत्ती

पहुमीपाल—भूमिपाल

सूरदास

पृष्ठ ५९

पेखत—देखता है, प्रेक्षते

भाल—मस्तक

कुलहि—टोपी, कुल्ला

मघवा—इंद्र

चिकुर—केश

बगराइ—फैलाकर

पृष्ठ ६०

कंज—कमल

भौम—मंगल ग्रह, भूमि-संबंधी

विज्जु—विद्युत्

जलपाइ—बोलना

सुवन—सुत

अरबराय—घबड़ाकर, डोलकर

था—स्थान

महिरि—मालकिन, मुखिया की स्त्री यशोदा

गुहत—गूथते हुए

पृष्ठ ६१

बल की बेनी—बांट वाली चोटी

कजरी—काली गौ

अचवन—आचमन

कच—बाल

टटोवे—टटोलना

हलधर—बलराम

पृष्ठ ६२

अंकोरे—गोद, अंक

पृष्ठ ६३

सीके—छींके

ढोटा—लड़का

हाऊ—हव्वा

पृष्ठ ६४

झाऊ—वृक्ष विशेष

व्याल—सर्प

खसाऊ—खसना, रगड़ना

कमठ—कछुआ

शखासुर—नागराज

सुरराऊ—सुरराज

गरबाऊ—अभिमान करना

अगाऊ—अग्रभाग

परग—पड्ग, पग

परसाऊ—स्पर्श किया

पृष्ठ ६५

क्षार—धूल, राख

डरपाऊ—डरी

निगम—वेद
वज्रघातनि—वज्र की चोट में
भहराय—जोर से
कादर—कदर्य, डरपोक

पृष्ठ ६६

छगन मगन—काका (छागल—बकरी का बच्चा)
मधुपुरी—मथुरा
कमलनयन—कृष्ण
मथानी—मंथन, रई
बहुरेउ—फिर
हिलगाऊं—हिलोरे दू
धर—धरा, पृथिवी
अधर बदन—ओठ और मुह
फेंट—कमर बंद
कृत—कर्म

पृष्ठ ६७

भौन—भवन
छोह—ममता
विषान—सींग का बाजा
अबेर सबेरो—देर और जल्दी; थोड़ा बहुत ठहर कर
कलेऊ—कल्यवर्त, प्रातराश
धैया—गौ का दूध

पृष्ठ ६८

अठान—सताना
पहुनईसूतर—मेहमानी की रीति
प्रतिपार—प्रतिपालन, पोषण
अंबर—आकाश
वारे—बाल्य, बचपन
टेव—आदत
छलछेव—धोखे की मार

पृष्ठ ६९

कानि—लज्जा, सकोच
पजरे—प्रज्वलित, जला
अधार—आधार
आराधन मौन—मौन साधन (अथवा पौव-पवन प्राणायाम आदि)
पोत—काचकी गुड़िया
पोहन—पिरोना

पृष्ठ ७०

स्यदन—रथ
सुरसरिसुवन—गांगेय, भीष्म
औसान—होश
भीर—आपत्ति
अवनि—पृथ्वी
स्वेद—पसीना

पृष्ठ ७१

अंबुज—कमल
भटराऊ—भाटों के सरदार
गजयूथ—हाथियों के समूह
शारंग—धनुष
निषग—तूणीर
पंग—पंगु

पृष्ठ ७२

शिरत्रान—छत्र

पान—पर्ण, पत्ता

हुताशन—अग्नि

दुरि जाई—छिप जाय (दूर)

पृष्ठ ७३

भिल्डी—भीलन

अघाये—तुष्ट

चोलना—चोला

रसाल—रसीला, मधुर

पखावज—मृदंग

घट—अन्तःकरण

काछि—लांग, धोती का अंतिम छोर

अनत—अन्यत्र

अकृती—दुष्कर्मी

विरद—उपाधि

पृष्ठ ७४

मेन्थो—बिना मोल

बूड़त—डूब

अजामील—अजामिल; यह ब्राह्मण प्रथम अवस्था में सच्चरित्र था किंतु पीछे में कुसंगति में दुराचारी हो गया। दासी के पेट में इसके दस पुत्र थे। इनमें से ज्येष्ठ का नाम नारायण था। मरते समय उसने अपने पुत्र नारायण को पुकारा: इसी कारण विष्णु दूत इसे विष्णुलोक में ले गए।

गारो—गर्व, क्रोध

भुवग—भुजंग, साप

खर—गधा

अरगजा—सुगंधित द्रव्य विशेष

पाहन—पाषाण

अरसान—अलसान

पृष्ठ ७६

सिरानी—शीर्ण होगई

शारंगपानी—विष्णु, कृष्ण

नरोत्तमदास

पृष्ठ ७७

वैजयती माला—पंचरंगी माला, भगवान का हार

सिगरे—सकल

तिय—स्त्री

कन—कण, दाना

पृष्ठ ७८

कोदौ—अन्नविशेष

सवां—सावक

हठौती—हठ करती

सिमिआनहि—सिमियाते हुए

पठौती—भेजती

कठौती—कनाला, लकड़ी की परात

ठक—ठोक-पीट, रट

लढ़ा—छकड़ा

अटा—बुर्ज

छानी—छान, छप्पर
अगत्रई—आगे ही, पहले से
सरसाइये—सरस बनाइये

पृष्ठ ७९

चटसार—पाठशाला, मकतब
झक—रट
छड़िया—द्वारपाल, दंड हाथ में लिए हुए
हुलास—उल्लास, उमंग
वारवधू—वारांगना, वेश्या

पृष्ठ ८०

कीर—शुक
केकी—मोर
पत्ति—पदाती
भौन—भवन
गौन—गमन
पाग—पगड़ी
झगा—चोला
उपानह—जूता
सामा—सामान
खखेट्यो—दबा

पृष्ठ ८१

बिवाई—पैरों का फटना
जांये—देखे
तंदुल—चावल
त्रिय—स्त्री
चांपि—रखकर
भीने—मिश्रित
गोपि—छिपाकर

पृष्ठ ८२

धौंको—कपा, (जैसे धौंकनी की हवा से)
हियरा—हृदय
थरहरै—थरथरावै, कांपे
नाकलोक—स्वर्ग
ओक—घर
थोक—समूह, कुल
सुखमा—सुषमा, सौंदर्य

पृष्ठ ८४

सकेलि—एकत्रकर
गयंद—हाथी
सामुहे—सम्मुख

पृष्ठ ८५

हेम—सुवर्ण
गिलन—निगरण
कंथारी—कंथा, गुदड़ी
पथरौटा—सिल पत्थर

गुरु नानक

पृष्ठ ८६

दारा—स्त्री
बिरिया—वेला, समय
सिरायो—गंवायो

पृष्ठ ९०

बर्त—वृत
मनुवा—मन
प्रब—प्रभु

नियारी—पृथक्

परसैं—छुए

बौरा—बाला, वातूल

पृष्ठ ९१

पत—लाज

मुकुर—दर्पण

छाई—प्रतिबिंब

द्याल—दयालु

रिदे—हृदय मे

सरनाई—शरण मे

पृष्ठ ९२

बंसदर—वैश्वानर, अग्नि

रैन—रजनी रात्रि

दादू

पृष्ठ ९३

मिरगला—मृग

अहेडी—अहेरी, शिकारी

मसाण—श्मशान

बिहाइ—विहान हो गया (प्रात:)

पृष्ठ ९४

नेह—स्नेह

संवाहणहार—संभालने वाला

मरजीवा—मरजिया, मरकर जीने वाला

मद्धिभाई—मध्यभाव

पृष्ठ ९५

दिसंतरा—दिगंतर, दिगांतर

अमली—नशा करनेवाला

पृष्ठ ९६

गिलैं—हड़पें

परस—स्पर्श

गुड़ी—गुड्डी, पतग

पृष्ठ ९७

कादर—काहिल, सुस्त

पृष्ठ ९८

डब—अब

मलूकदास

पृष्ठ ९९

महत्तव—महत्त्व

भेव—भेद

ऊपट—कठिन मार्ग

सुंदरदास

पृष्ठ १०१

अहि—सर्प

डरा—डेला, ढेला

पृष्ठ १०२

जुझाऊ—युद्ध में काम आनेवाल

सहनाई—नफीरी नामक बाजा

परबोधिये—समझाइये

धीजिये—तुष्ट कीजिये

पृष्ठ १०३

अन्यारहि—अधिक

म्हारु—हम

पेंडो—रास्ता

पृष्ठ १०४

रंच—अल्प

दारु—द्रु, लकड़ी

पृष्ठ १०५

डामन—बिस्तर, बिछावन

गेहरा—गह

धरणीदास

पृष्ठ १०७

परबल— प्रबल

निरबेरे—निर्वैर

जुग—युग, जुआ

भीखा साहिब

पृष्ठ १०६

अजायब—अजीब

तूर—तुरही, नगाड़ा

उरध—ऊर्ध्व

पलान्यां—भागी

नौबत—सहनाई, नगाड़ा

माबिक—पहले का

पलटू साहब

पृष्ठ ११०

कमठ—कछुआ

पृष्ठ १११

दिहा—दहा, जलाया

तारू—तालु

गरीबदास

पृष्ठ ११७

तीन गुन—सत्त्व, रज, तम

सबत्तर—सर्वत्र

इला—नाड़ी विशेष

पिंगला— ,,

सुखमन—सुषुम्ना नाड़ी

पेंग—झूल

धर्मदास

पृष्ठ ११६

चौरासी लख—चौरासी योनियां

केशवदास

पृष्ठ १२३

रदन—दांत

ओप—कांति

पृष्ठ १२४

चमू—सैन्य

हय—हाथी,

गय—गज

पयदर—पैदल

सुनिज्जिय—सुनिये

पैंज—प्रतिज्ञा, प्रण

अच्छरिय—अक्षर, नित्य

संगर—संग्राम

पति—पत, लाज

पृष्ठ १२५

सजन—सज्जन

घरनी—गृहिणी

पृष्ठ १२६

दिष्षित—दर्शित

पृष्ठ १२७

तूण—तूणीर

तन त्राण—कवच

अंतक—मृत्युदेव

पृष्ठ १२८

शरावलि—बाणों की पंक्ति

सिकता—रेत

खते—क्षत

नैकृत्यन—निशाचर

पुरंदर—विष्णु, पुरको भेदने वाला

अक्षरिपु—सर्पारि, विष्णु

दुखदावन—दुःखदायक

वर्म—कवच

मर्म—नरम स्थल

पट्टिश—शिला

परिध—भाला, बरछी

तोमर—अस्त्रविशेष

कुंत—बरछी

पृष्ठ १२६

द्वैभुज—द्विभुज (दो भुजाओं वाला) संबन्धी

निकदन—नाशक

वपु—शरीर

बिहारी

पृष्ठ १३१

नागरि—नागरिक स्त्री, सुसभ्य

झाई—छाया

छाके—छके हुए

लाव—रस्सा

गुहारि—दोहाई, रक्षा के लिये पुकार

दई—दैव

दई—दत्त

आहि—आह, है

मूरु—मूल्य

पीनस—नाक का एक रोग, जिसमें घ्राणशक्ति नष्ट हो जाती है।

तूठे—तुष्ट

पृष्ठ १३२

बानि—बान, आदत

जग-बाइ—जगत् की हवा

ओप—कान्ति

उजास—प्रकाश

रतिरंग—प्रेम रस

ताते—तप्त

सवादिलु—स्वादिष्ट

पृष्ठ १३३

कनक—धतूरा, सुवर्ण

धंध—जंजाल

जोन्ह—ज्योत्स्ना, चांदनी

मोषु—मोक्ष

पगार—तगार, कीचड़

करौट—करवट

गुन—गुण, रस्सी

पृष्ठ १३४

बानक—वेश

काछनी—काछी
बिससियहि—विश्वाम करिये
आंटे—दांव
मतीर—तरबूज
मरुधर—मारवाड़
मारू—निर्जल प्रदेश
उदोतु—शोभा
लिलार—ललाट

पृष्ठ १३५

नाव—नौका
रज-राजसु—क्रोध रूपी धूल
बरिया—बल्ली ?
औथरो—कम गहरा
मरु—तालाब
अकम—अदावन

पृष्ठ १३६

चंग—गुड्डी
निर्गुन—गुणरहित, रस्सी रहित
नियछविछायाग्राहिणी—स्त्री सौंदर्य रूपी छायाग्राहिणी मछली।
पखु—पक्ष
बाइसु—काक
आलवाल—थांवला

पृष्ठ १३७

काकगोलक—कौएकी आंख का गोला
चहलैं—कीचड़ में
बैनै—आयुरूपी नौका
कहलाने—क्लांत
पोत—चाल
गिरिधर—कृष्ण, पहाड़ उठाकर

पृष्ठ १३८

मयंक—चंद्रमा
गैन—गमन
मतग—सीधा
परेवा—पारावत

मतिराम

पृष्ठ १३९

मन-तम-तोम—मन के अंधकार का समूह
मजु—मनोहर
तिमिर—अंधकार
मनरौंही—कुपित

पृष्ठ १४०

चखनि—चक्षु
इंदीबर—नीलकमल
अरविंद—कमल
अरुन—लाल
गोप-इंद्र—गोपेंद्र, कृष्ण
इंद्रगोप—बीरबहूटी, तीजो
जीवन-मूरि—जीवन-मूल

पृष्ठ १४१

सांकरे—श्रृंखला
हौं—मैं

पृष्ठ १४२

सकु—कील, बरछी
लकुटिया—छड़ी

रसनिधि

पृष्ठ १४३

पोहनबारो—पिरोने वाला

जं.हनिहारो—देखने वाला

पृष्ठ १४४

दाना—काबुली अनार, बिदाना

ऐन—ठीक, पूरा-पूरा

अरे—आड़े, आरा

पृष्ठ १४५

पाइ—पैर

दुज—द्विज, विप्र

रस—पानी

छीर—दूध

पृष्ठ १४६

औघट—दुर्गम

गर—गला

पखेरुआ—पक्षी

दाव—आग

अघ—पाप

पृष्ठ १४८

भूषणहू—मं.चों की, जिसकी आड में बैठकर लड़ाई की जाती है।

भट-जोट—योद्धाओं का समूह

किम्मति—कीमत

कंगूरन—बुर्ज, किले की दीवार में वह स्थान जहां से सिपाही लडते हैं

कोट—किला

पुरुहूत—इंद्र

पृष्ठ १४९

कुंभभव—अगस्त्य

सचीपति—इंद्र

पच्छिराज—गरुड

पन्नग—सर्प

गाजी—गर्जने वाला

दाडिम—अनार

दरके—फटे

पृष्ठ १५०

देवल—मंदिर

गयंद—हाथी

करबाल—तलवार

कलेऊ—प्रातराश

भुजगेस—सांपों का राजा

दीह—दीर्घ

पाखरिन—पाखर, लोहे की झूल

परछीने—पंख रहित

पृष्ठ १५१

जोम—आवेश

अगार—घर

पगार—कीचड़

तुरा—घुड़सवार

पद्माकर

पृष्ठ १५२

बमंके—अभिमानी

करखा—बढ़ावा

सेलैं—शिलाएं

अशनि—अस्त्र

पनारी—पतनाला

पृष्ठ १५३

जुग्गिननि—योगिनियों को

पृथुरित—विस्तृत, अधिक

कित्ति—कीर्ति

सबलसिंह चौहान

पृष्ठ १५४

अनी—फौज

पृष्ठ १५५

खंग—तलवार

पृष्ठ १५६

फणिक—सर्प

वृंद

पृष्ठ १५८

मलयज—चंदन

अयान—अज्ञानी

पृष्ठ १५६

मधु—शहद

भेख—भेक, मंडूक

पृष्ठ १६०

खर—खल

कामरी—कंबल

पृष्ठ १६१

नग—पर्वत

भुवाल—राजा

पृष्ठ १६२

बिहान—विभान, प्रातः

मकरालय—समुद्र

पृष्ठ १६३

जोह—जीभ

लबार—गप्पी

सियरात—शीतल होती है

पृष्ठ १६४

तोय—पानी

आफू—अफीम

सूदन

पृष्ठ १६६

गाजी—गरजी

भुसंडी—तोप

जलद्दा—बादल

नैजाब—भाला

पृष्ठ १६७

श्रोनरंगी—रक्त में रंगी

ब्याल—सर्प

छवा—पशु का बच्चा

हरिश्चंद्र

पृष्ठ १७१

छहरना—छितराना, बिखरना

पोहति—पिरोती है

सरिस—सदृश

मंज्जन—स्नान

त्रिविधमय—आध्यात्मिक, आधि-भौतिक और आधिदैविक क्लेश

हरि-रस—हरि के चरणनखरूप जो चंद्रकांत मणि उस से बहने

वाला अमृत रस
ऐरावत—इंद्र का हाथी
गिरि-कल—हिमालय के गले का सुंदर हार
अंकम-राई—बगलगीर होकर मिली
जोहत—देखत
मढ़ी—मंडप
साका—शंका, धाक
नौबत—नगाड़ा

पृष्ठ १७२

सुच्छ—स्वच्छ,
करन—हाथ
बारिधि—समुद्र
नवल—नवीन
दीठि—दृष्टि
कालिंदी—यमुना
तरनि-तनूजा—सूर्य की कन्या, यमुना
किधौं—या
उझकि—आगे को झुक कर
नै रहे—झुक रहे
सैवाऊन—सिवार
गोभा—गोभ, कली

पृष्ठ १७३

व्रज-कमल—व्रज की स्त्रियों के समूह के मुखरूपी कमल
राका—रात्रि
जुड़ात—प्रसन्न होते हैं
पारावत—कपोत
कारंडव—हंस विशेष

पृष्ठ १७४

रजतसिढी—चांदी की सीढी
पांवड़े—पांर पोश
बगराए—फैलाए
शाक्य—बुद्ध

पृष्ठ १७५

ख्वारी—खराबी
टिक्कस—टैक्स

पृष्ठ १७८

निशानाथ—चंद्र
उडुगन—तारे

पृष्ठ १७६

घनपटली—बदली
बिट—खल

बदरीनारायण

पृष्ठ १८०

धर्मसूर—धर्म रूपी सूर्य

नाथूराम शंकर

पृष्ठ १८२

उबरें—ऊपर उठें
छिके—जाति से पृथक कर दिये जांय
कुलबोर—कुल को डुबोने वाले
खर्व—हेच
संगर—संग्राम
सुरभी—गौ

कमला—लक्ष्मी
अघदंभ—पाप और छल

पृष्ठ १८३

शंबुक—सीप
रेणु—रेत
खर—गधा

पृष्ठ १८४

कर्पूर न होगा—दूर न होगा
पाग—पगड़ी
होड़—स्पर्धा

पृष्ठ १८५

बिरद—उपाधि

पृष्ठ १८७

रंक—दरिद्र

पृष्ठ १८८

मनोज—काम, प्रेम

श्रीधर पाठक

पृष्ठ १८९

नाऊ—नापित, नाई

पृष्ठ १९०

ओक—घर
बाानक—वेश

पृष्ठ १९१

जग-हार—जगत् के सार
बकतीय-हार—बगुलियों को उड़ाने वाले
रवि-प्रहार—सूर्यकिरणों के प्रचंड प्रताप

पृष्ठ १९२

धुरवान—धुरा वाले
विज्जुपतन—बिजली गिरना
तिय-तान—स्त्रियों के समूहों का गान
पागहु—अनुरक्त होओ

अयोध्य सिंह उपाध्याय

पृष्ठ १९३

मयंक—चंद्र
लोक-काल—संसार के अंधकार को नष्ट करनेवाला
अवनीप—राजा
राका-रजनीश—रात्रि का चंद्रमा
उत्ताल—ऊंची
पवि—वज्र
अनल रत—अग्नि फेंकने में संलग्न

पृष्ठ १९४

तोम—समूह
तमी-तामस—रात्रि अंधकार
कलानिधि—चंद्र
अविकच भाव—न खिलना
कृमि—कीट

पृष्ठ १९६

वारिधि-प्रवाह—समुद्र की धारा का वेग

पृष्ठ १९७

कुसुमाकर—वसंत
काकली—मधुर ध्वनि

पृष्ठ १९८

अबीर—रंगीन कडनी

तमोरि—सूर्य=तमस्+अरि

पृष्ठ १९९

रवजड़ता—चुप्पी

नभनिधि—आकाश

रामचंद्र शुक्ल

पृष्ठ २०४

अप्रमेय—अज्ञेय, जो प्रमाणों से न जाना जा सके

थहाइये—थाह लीजिये, जानिये

प्रसंग—प्रकरण

महा-अखंड—सृष्टि के आदि का अखंड अंधकार

अगम्य—जो न जाना जा सके

उछाह—उत्साह

तार लगाय—लगातार

सिंधु दिशि—समुद्र की ओर

पृष्ठ २०५

सत्वोन्मुख—तत्त्व गुण की ओर ले जाने वाली, सत्ता की ओर ले जाने वाली।

सगंगति—ससार की गति

घनपुंज—बादल समूह

कला—अश

दुति—द्युति

दामिनि—बिजली

उरोज—स्तन

छीर रसाल—मधुर दुग्ध

व्याल दशनन—सांप के दांत

गरल कराल—तीव्र विष

जयशंकर प्रसाद

पृष्ठ २११

स्वर्ण-किंजल्क—सोने के कमल का

विकल-दूती—कलपाने वाली पीड़ा को बताने वाली

अरुण—लाल

सम—ठीक समय पर

कोक-धारा—लाल कमलके मिठास की धारा

पृष्ठ २१२

विरज—निष्काम

वियोगि हरि

पृष्ठ २१३

मधुरिपु—मधुराक्षस का शत्रु

कलियमदमर्दन—कालिय की मस्ती को झाड़ने वाला

लोकोत्तर—उत्तम

उछाह—उत्साह

आन—अन्य

मजु—स्निग्ध, मधुर

ओज—वीरता (वीर रस)

नैन सरोज—नयनकमल

पेंड—डिग

घालक—घातक

प्रकृतिसूर—प्रकृत्या शूर, स्वभाव

से ही वीर
बलि—बलि नामक राजा
अनूप—अनुपम
मरमी—ज्ञाता
विगस्यौ—विकसित हुआ है
सुरभित—सुगंधित हो रहा है

पृष्ठ २१४

समर—भिड़ना, युद्ध
कादर—कायर
भभरि—भभराकर, डर कर
समर धार—युद्ध की नदी
मंझधार—मध्य धार
नाखि—लंघन करके, पार करके
करबाल—तलवार
कल—सुंदर

पृष्ठ २१५

अंजुरिन—अंजलि
शोणितु—रुधिर
कंदुक—गेंद
ओजमद—वीरता का मद
जूझिबे—लड़ने
अवगाहि—उतारना, नींद में होकर चलना
सुरसरी—देवों की नदी, गंगा
कबंध—धड़
अनल—कुंड—अग्निकुंड
तारण तरण—पार लगाने वाला
कुरुखेत—कुरुक्षेत्र

प्रतिरूप—प्रतिरूपक, मूर्ति

पृष्ठ २१६

अंकोर—(गोदी में) लेना
गय—गयंद हाथी
सरिस—सदृश
सिवा-मधुकर—शिवाजी के यश रूपी कमल का भौंरा
रसभूषण-भूषण—रसों में श्रेष्ठ रस की महिमा को बढ़ाने वाला
सरबिद्ध—तीर से जखमी
पंचानन—केसरी
केहरी—केसरी, सिंह
कुम्भ—मस्तक
करीन्द्र—हस्तिराज

पृष्ठ २१७

तनुवारिधि—शरीर रूपी समुद्र
अतनुतरंग—कामदेव की लहर
ताँमधि—उसके मध्य
अनल बर्न—अग्नि के रंग वाली
दुबनदीह दलु—शत्रुओं की दृष्टिओं के समुदाय की
उमाह—उत्साह
रतिरंगली—प्रेमरंगरंजित
अवदात—सफेद
तड़ित—बिजली
दुरि जाय—दूर हो जाती है
सारंग—शार्ंग, धनुष
अंग—शरीर

मूररस—प्रेम का मूल्य

पृष्ठ २१८

अच्छरनिधि—विद्या, पुस्तकें
पयोधर—स्तन
परिच्छा—परीक्षा
धूरधूसरित—धूल से लिपटे हुए
धरनी—धरा, पृथ्वी

पृष्ठ २१९

जारि हौं—जलाऊंगा
क्लीब - नपुंसक
पुजहीन—पूजा हीन
छवाय - छान बंधवा कर
परखति—प्रतीक्षा करती हुई
बिसिखहारु—तीरों की माला
प्रसून - पुष्प
प्रकृत बीरबर—स्वभाव से ही बड़ा वीर
हीय—हृदय
दुर्ग—किला, वह स्थान जिस में जाया न जासके
अथयौ—अस्त हो गया
भावन—भव्य, सुन्दर
मांझ—मध्य
निजता—अपनापन
दई—दैव
परिधान—वस्त्र जो चारों ओर लपेटा जाय
अहै—अस्ति, है
घरीक—एक घड़ी में

पृष्ठ २२०

छार—धूलि
भूभार—भूमि पर भारभूत
मर्म—रहस्य
मसक—मच्छर
पाट्यो—पाटा है
पयोधि—समुद्र
हेरति—देखती है
उतंग—उत्तुंग, ऊंचा
पतधर—प्रतिष्ठा को बचाने वाले
अकाल—तीनों कालों में विद्यमान

पृष्ठ २२१

तीछन—तीक्ष्ण
सुमनहार—पुष्प माला
माननि-गढ़=अभिमानिनी स्त्रियों के मानरूपी किले को
पौढ़े—लेटे
पत—प्रतिष्ठा
एहैं— आयेंगे
कादर—कायर
कामअधीर—इच्छा से सताए गए
तियमृगईछन—स्त्री रूपी मृग की आंख
छार—धूलि
उर—छाती
घाय—घाव
नवकीन—नया किया है

उसीर कुटीर—खसखस की कुटी
वृषरवि—वृषरासि का सूर्य
मनोजअधीर—कामतप्त

पृष्ठ २२२

दाप—दर्प, अभिमान
मेंड—मर्यादा
रसालरस—आम्ररस
घलाघली—मारकाट
हियौ—हृदय
पोत—जहाज
अहेरी—व्याध, शिकारी
ऐंड—ऐंठ
अथयौ—अस्त हुआ
उनयौ—उदय हुआ

पृष्ठ २२३

जिमि—जैसे
तिमि—तैसे

सूर्यकांत त्रिपाठी

पृष्ठ २२७

नलिन नयन—कमल के समान नेत्र
शर्वरी—रात्रि
ताल तरंग—उच्च लहर
वेणु-निर—सुन्दर बीणा के बजाने में रत
अलक—घुंघराले बाल
पुलक—रोमांच
सन्तत—लगातार
द्रुतगतमयी—तेज गति वाली
अतीत—भूत
किसलय—पत्ता
मृदुल—मृदु

पृष्ठ २२८

सुरसरिता—गंगा
उच्छवास—भाव
कांतकामिनी—रसिकों को लुभाने वाली
सुरापान—मद्यपान से होने वाले

पृष्ठ २२९

घने अंधकार (नशा)
भ्रांति—चक्कर आना
दिनकर—सूर्य
खर—कठोर
सरसिज—कमल
रागानुग—प्रेमोन्मुख
समृद्धि—सम्पत्ति
घन विटप—घने वृक्ष
वेणी—गूंथ
रेणु—धूल

पृष्ठ २३०

सरद-हास—शरद ऋतु के चंद्रमा की कला की हंसी
निशीथमधुरिमा—रात्रि का आनद
गंध कुसुम—सुगंधित पुष्प
पराग—पुष्प धूलि
युक्त—प्रकृति में बंधे हुए
मधुमास—बसंत

कल—सुमधुर
मदन—कामदेव
पंचशर हस्त—पांच तीर हाथ में लिए हुए (कामदेव)
दिग्वसना—नंगा=दिशा ही हैं कपड़े जिसके
घन पटल—बादलों की तहें
तडि तूलिकारचना—बिजली की पेंसिल से बनी हुई चित्रकारी
ता०-नृत्य=युद्ध रूपी तांडव (कठोर नृत्य) का मस्त नाच
नाद—ध्वनि
इंदु—चंद्रमा
अरविंद—कमल

सुमित्रा नन्दन पंत

पृष्ठ २३१

दुर्खविधुरा—क्लेश पीडित
भू—पृथ्वी
मानस पट—मन का कपड़ा
द्रुत—जल्दी
प्रावट्—बरसात
दरावे—घिराव
निदान—अंत में
नीरव—मौन
निर्भर—विस्रब्ध, भरोसे में
दिनकर कुल—सूर्यवंश
जुड़ालें—मिलकर ठंडे हो लें

पृष्ठ २३३

स्मिति—मुसकाना
मृन्मरण—मिट्टी की तरह रहना और मरना
संसृति—सृस्टि

श्रीगुलाबरात्न

पृष्ठ २३४

गयंदिनी—हथिनी

पृष्ठ २३५

धाराधर—बादल
गाज—बिजली
तरिणी—किश्ती

कबीर

पृष्ठ २५१

पाय—पाद, पैर

पृष्ठ २५२

बेहद—असीम, परमात्मा
गिरही—गृही, गृहस्थ
निगरह—निग्रह, रोक

पृष्ठ २५३

हुलीचा—हौदा
स्वान—कुत्ता
मता—मत, मति, समझ
औसर—अवसर
मिलसी—मिलेगा, मिलिष्यति

पृष्ठ २५४

मधि—मध्य

आगरि—आगर, आकर

पृष्ठ २७१

मेदिनि—पृथिवी

लेसा—जलाया जोड़ा

अँजोर—उज्वल

बोहित—पोत, जहाज

पोढकइ—मजबूनी से देखो प्रौढ

कनहारा—कर्णधार, खिवैया

अउगाह—अवगाह

दई—दैव

धुब—ध्रुव

पृष्ठ २७२

अलहदाद—सैयद मुहम्मद के शिष्य

परसन—प्रसन्न

नयनांहा—नयन से, देखो उपराहीं

पृष्ठ २७३

खाडइ—तलवार में

जुझारू—जूझने वाला, योद्धा

खंड २

पृष्ठ २७४

सरनदीप—श्रवणद्वीप, अरब वाले लंका को सरनदीप कहते थे, भूगोल का ज्ञान न होने से कवि ने सरनदीप और लंकामें भेद किया है।

आरन—अरण्य

अंतिम—उत्तम

कटक—सेना

चक्रवर—चक्रवर्ती

पृष्ठ २७५

अंबराउ—आम्रराज

हरिअर—हरा

भवंर—भ्रमर

डीठी—दीखी

अंब्रि।—अमृत

परेवा—पारावत

हारिल—तोते जैसे हरे रंग का पक्षी, जो पृथ्वी पर नही उतरता और बड़ पीपल तथा पालर पर रहता है।

पृष्ठ २७६

पइग—पग, पद

तपा—तपस्वी

जपा—जप करनेवाले

सुरिखेसुर—सुऋषीश्वर, ऋषियों में श्रेष्ठ

आछंहि—हैं

सेवरा—साधुविशेष जो मद्य को दूध बनाकर पी जाते हैं।

खेवरा—सेवराओं का अवांतर भेद

बांनपर—वानप्रस्थ

अनाई—लाकर, आनाय्य

गरेरी—गले के ऐसी, घुमौआ

रति—रक्त, लाल

रूख—वृक्ष

पृष्ठ २७७

उए–उदय हुए
मंछ—मत्स्य
मरजीआ—मोती निकालने वाला
नउपाता—नवपत्र, नए पत्तों वाले

पृष्ठ २७८

अबासा—आवास
रंक, गरीब
ओठँघि—ऊगकर, उपस्थगित
आहुक—गंधर्वविशेष
हुतउड़ा—हथौड़ा
बेस.हा—विसाधन, खरीद का सामान
सोंधा—सुगंधक
गांधी—गंधी

पृष्ठ २७९

छरहटा—नकल करने वाले क्षार (भस्म) लपेटने वाले
पेखन—प्रेक्षण, तमाशा
चरपट—चरकटा, गठकटा
खोह—खंदक
पाजी—पाद्य, पदाति
नाहर—शेर

पृष्ठ २८०

गजर—गजल
नउ—नव
झारि—झाड़कर, केवल (चारि?)

पृष्ठ २८१

ठेंघा—सहारा (देखो हिन्दी डेंगा)
पइगहि—पैर से ही
माते—मत्त
निमेते—निमित्त, अत्यधिक मस्त
अंगवई—अंगीकार करती है
किआह—पके ताड़के रंगका घोड़ा
अग्रमन—आगमन, आगे।

पृष्ठ २८२

उरेहे—उद्रेख, उल्लेख
धउरहर—धवलगृह
अछरिन्ह—अप्सराओं से
जोतारू—प्रणग्म

खंड ३

पृष्ठ २८३

ओदर—उदर, पेट
अउधानु—अवधान, गर्भाधान
रहसिकूद—खेलकूद
उआ—उदित हुआ

पृष्ठ २८४

गुरीरा—संयोग
बइसारी—बिठादी
लच्छि—लक्ष्मी
ओनाहीं—झुकते हैं, अवगमन्ति
बरोक—वर-रोक, वर को वचन में बांधना
धउराहर—धरहरा

पृष्ठ २८५

रजाएसु—राजादेश, राजा की आज्ञा

हउँ—मैं, अहम्

पृष्ठ २८६

हींछा—इच्छा

गैवा—जीमा, खाया

कया—काया

आखउं—कहूं, आख्या

खंड ४

पृष्ठ २८७

पुहुयावती—पुष्पावती

पाली—प्रान्त, तट

दहुं—दोनों में से

डेलि—जलिया, पिंजरा

खोपा—जूड़ा केशों का

ओनए—अवन में झुके

दाविनी—दामिनी, बिजली

पृष्ठ २८८

बिसहर—विषधर, सांप

उनंत—उन्नत

रउताई—राजपुत्रता, ठकुरई

पइसारू—पैठसाल

पृष्ठ २८९

उतराना—ऊपर आया

ओप—कांति

खंड ५

मंजारी—मार्जारी

भखदाता—भक्ष्यदाता

पाहन—पाषाण, पत्थर

पृष्ठ २९०

छूंछा—तुच्छ, शून्य, खाली

तहिअइ—तदैव, तभी

सुअ्रा—शुक्र

आउ—आयु

पराहीं—परे जांय

पृष्ठ २९१

डहन—डयन डैना पंख

बइरिन्ह—बेरी का

बेरा—का

गिउ—ग्रीवा

खाघू—खाद्य, खाजा

मसटि—चूप्पी

पृष्ठ २९२

खंड ६

बारा—ब.लक

पृष्ठ ३०९

छालम

अजिर—आंगन

छ.हवा—शोभा

सीनी—क्षीण, पतली

संगूली—झगा, कुरती

ललना—स्त्रियां

पियूष—पीयूष, अमृत

पयपान—दुग्धपान

पृष्ठ ३१०

आनन—मुख
आन—अन्य
धौरी—धौली, धवल
धाइ—दौड़कर
धौरि—धूलि
बैन—वचन
अरविंद—कमल
निकुंज—कुंज
बिस्वबंदनी—विश्व बंद्या, संसार की पूज्य
अलाप—आलाप
केकी—मोर

शेख

पृष्ठ ३१२

मोष—मोक्ष
घोष—ब्रज
पौनसाधन—प्राणायाम
तिमिर—अंधकार
रोचन—प्रकाशक, सुंदर, रोचक
गो—गया
तिरिया—स्त्री, अहल्या

पृष्ठ ३१३

धुरि—धुल
धूरिजटि—धूर्जटि, महादेव
गरे—गले में
मिहकर—चंद्रमा
पा—पैर

ताज

पृष्ठ ३१४

सेवरी—भीलन
गनिका—गणिका

पृष्ठ ३१५

लार—लाड़
प्राग—प्रयाग
बटपात—वटपत्र
सेतबंध—सेतुबंध

यारी साहब

पृष्ठ ३१६

जोतसरूपी—प्रकाश रूप, चिद्रूप
परगास—प्रकाश
सूर—सूर्य
अनहद—अनाहत अथवा असीम
फटिक—स्फटिक

नजीर

पृष्ठ ३१७

आपी—आपकी
तिफल—व्यक्ति, शय
बिरजराज—ब्रज के राजा

पृष्ठ ३२०

बासुकि—सर्प, जिस पर पृथ्वी धरी है।

प्रीतम

पृष्ठ २२२

अवनि—पृथ्वी

सेस—शेषनाग
हरबारिकै—हरबरायकर, घबड़ाकर

पृष्ठ ३२३

दारू—

दरवेश

पृष्ठ ३२४

प्रतक्ष—प्रत्यक्ष
कुण—कौन

सैयद अमीर अली

पृष्ठ ३२६

हिमगिरि—हिमालय
हृच्दाम—हृदय-मंदिर
वीर प्रसवा—वीरों को जन्मानेवाली

पृष्ठ ३३०

ललाम—ललित सुंदर
पर्व—उत्सब

पृष्ठ ३३२

कविकोविद—कवियों में श्रेष्ठ
बैना—वचन, वाणी

पृष्ठ ३३३

सतमतंगगनमान—सौ हाथियों के समूह का मद
स्वान—कुत्ता
ससा—खरगोश

रहीम

पृष्ठ ३०१

मुनि पत्नी—अहल्या, राम-पद-रज से पत्थर से स्त्री बन गई थी।
सीय—सीता
केरि—केला
बा—वत्ती
तरैयन—तलैया, ताल
कमला—लक्ष्मी

पृष्ठ ३०२

भुजग—सांप, हाथों से चलनेवाले
वडरी—बड़ी
घूर—तेजी से
जलधि—समुद्र, उदधि
मूकनि—मुक्का
बैराट—विराट् (राजा) का

पृष्ठ ३०३

बारे—जलाने पर, बचपन में
बढ़ै—बुझने पर, बड़ा होने पर
भीर—मुसीबत
बिलगाह—अलग हो जाती है।
गोइ—गोइ छिपाकर

पृष्ठ ३०४

गांस—फांस
गुन—गुण, रस्सी
मृगया—शिकार

पृष्ठ ३०५

अथवत—अस्त होता है
दीबो—दीपक, दान
कंज—कमल

सेस—शेषनाग
हरबारिकै—हरबरायकर, घबड़ाकर

पृष्ठ ३२३

दारू—

दरवेश

पृष्ठ ३२४

प्रतक्ष—प्रत्यक्ष
कुग—कौन

सैयद अमीर अली

पृष्ठ ३२६

हिमगिरि—हिमालय
हृच्दाम—हृदय-मंदिर
वीर प्रसवा—वीरों को जन्मानेवाली

पृष्ठ ३३०

ललाम—ललित सुंदर
पर्व—उत्सव

पृष्ठ ३३२

कविकोविद—कवियों में श्रेष्ठ
बैना—वचन, वाणी

पृष्ठ ३३३

सतमतंगगनमान—सौ हाथियों के समूह का मद
स्वान—कुत्ता
ससा—खरगोश

रहीम

पृष्ठ ३०१

मुनि पत्नी—अहल्या, राम-पद-रज से पत्थर से स्त्री बन गई थी।
सीय—सीता
केरि—केला
बाती—बत्ती
तरैयन—तलैया, ताल
कमला—लक्ष्मी

पृष्ठ ३०२

भुजग—सांप, हाथों से चलनेवाले
बड़री—बड़ी
घूर—तेजी से
जलधि—समुद्र उदधि
मुकुति—मुक्ति
बैराट—विराट (राजा) का

पृष्ठ ३०३

बारे—जलाने पर, बचपन में
बढ़ै—बुझने पर, बड़ा होने पर
भीर—मुसीबत
बिलगाह—अलग हो जाती है।
गोइ—गोद छिपाकर

पृष्ठ ३०४

गाम—फांस
गुन—गुण, रस्सी
मृगया—शिकार

पृष्ठ ३०५

अथवत—अस्त होता है
दीबो—दीपक, दान
कंज—कमल